वनौषधि-चन्द्रोदय

(सातवां भाग)

लेखक—

चन्द्रराज भण्डारी "विशारद"

प्रकाशक—

चन्द्रराज भण्डारी

ज्ञान-मन्दिर, भानपुरा

(इन्दौर स्टेट)

मूल्य प्रति भाग—
अजिल्द ४)
सजिल्द ५)

PATRONS.

RULERS

1—His Highness Maharajadhiraj Sir George Jiwaji Rao Scindia Alijah Bahadur G. C I. E. Gwalior.

2—Late Colonal His Highness Maharao Sir Ummed Singh Bahadur G C. S. I G. C I E. G. B. E. L L. D. Kotah.

3—Lieutenant His Highness Maharaja Krishna Kumer Singh Bahadur Bhawnagar.

4 – Lieutenant colonal His Highness Maharaja Jam Sahab Sir Digvijay Singh Bahadur K. C S. I, Nawanagar.

5 – Lieutenant colonal His Highness Maharaja Lokendra Sir Govind Singh Bahadur G C S. I., K. C S I, Datia.

6—Lieutenant His Highness Maharaj Rana Rajendra Singh Bahadur. Jhalawar

7—Captain His Highness Maharaja Mahendra Sir Yadvendra Singh Bahadur K. C. S. I, K C I. E, Panna.

8—Raj Bahadur Devi Singh Diwan Rajgarh State Rajgarh.

BANKERS.

9—Lala Padampatiji Singhania Cawnpore

10 – Seth Magni Ramji Ram Kumarji Bangar Didwana.

11—Rai Bahadur Rajya Bhushan Danbir Seth Hiralalji Kashliwal Indore

12 Seth Sohanlalji Shubhakaranji Ratanlalji Dugar Fatehpur

13 – Seth Chunilal Bhaichand Mehta Bombay.

स्मृति

स्वर्गीय सेठ कमलापतजी सिंहानिया की पवित्र स्मृति में:—

विषय सूची

(१)

हिन्दी और यूनानी

विषय सूची

(२)

संस्कृत

मराठी

विषय सूची

(४)

बङ्गाली

विषय सूची

[५]

गुजराती

Index

(6)

Latin Names

Embelia Robusta	1824
Embelia Ribes	1820
Eriolaena Quinquelocularis	1748
Equisetum Debile	1865
Eupatorium Cannabinum	1866
Fagopyrum Gymosum	1767
Flemingia Congesta	1749
Flemingia Tuberosa	1854
Fimbristylis Junciformis	1860
Garcinia Dulcis	1861
Glossogyne Pinnatifida	1804
Glycosmis Cochinchinensis	1737
Gmelina Asiatica	1766
Gouania Leptostachya	1756
Gisekia Pharnacoides	1840
Gnaphalium Luteoalbum	1841
Gymnosporia Montana	1862
Geranium Nepalense	1893
Glycine Soja	1907
Heliotripium Strigosum	1902
Herpestis Monniera	1811
Holigarana Longifolia	1750
Hydrocotyle Asiatica	1738
Hypericum Perforatum	1759
Hymenodictyon Excelsum	1919
Hibiscus Tiliaceus	1885
Hibiscus Esculentus	1920
Illicium Anisatum	1830
Ipomoea Hispida	1907
Ipomaea Muricata	1843
Ipomaca Digitata	1849
Indigofera Glandulosa	1870
Indigofera Enneaphylla	1922
Jasminum Augustifolium	1765
Jatropha Multifida	1894
Jussieua Suffruticosa	1734
Juniperus Recurva	1886
Kaempferia Rotunda	1926
Kochia Indica	1865
Launacea Nudicaulis	1755
Leea Crispa	1736
Lepidium Draba	1852
Limonia Crenulata	1879
Lycopodium Clavatum	1886
Linaria Ramosissima	1922
Martynia Annua	1858
Mangifera Caesia	1853
Matricaria Chamomilla	1824
Melilotus Indica	1735
Melothria Perpusilla	1764
Mussaenda Frondosa	1881
Nepeta Ruderalis	1847
Osbeckia Nepalensis	1763
Otostegia Limbata	1864
Olea Cuspidata	1881
Paramignya Longispina	1748
Penisetum Spicatum	1829
Periploca Aphylla	1766
Phaseolus Trilobus	1737
Phaseolus Vulgaris	1827
Populus Euphratica	1769
Psoralea Corylifolia	1804
Plantago Lanceolata	1831
Plantago Major	1832
Pisonia Aculeata	1834
Pericampylus Incanus	1840
Pterospermum Heyneanum	1842
Polypodium Vulgare	1844
Pueraria Tuberosa	1848
Phaseolus Lunatus	1863
Pyenocycla Aucheriana	1861
Phaseolus Lunatus	1863
Pulicaria Crispa	1864
Prinsepia Utilis	1881

विषय सूची

(७)

(रोगानुक्रम से)

इस विषय सूची में इस ग्रन्थ मे आई हुई औषधियां जिन २ रोगों पर काम करती हैं उनमे से कुछ खास २ रोगों के नाम और औषधियों के नाम पृष्ठांक सहित दिये जारहे हैं। सब रोगों के नाम इसमें नहीं आ सके। इसलिये उनका विवरण ग्रन्थ के अन्दर ही देखना चाहिये। जिन रोगों के अन्दर जो औषधियाँ विशेष प्रभावशाली और चमत्कारिक हैं उन पर पाठकों की जानकारी के लिये ऐसे फूल * लगा दिये गये हैं:—

ज्वर

उदर सम्बन्धी रोग

चर्म रोग और रक्त रोग

पुरुष जननेन्द्रिय सम्बन्धी रोग

स्त्री रोग

बाल रोग

खांसी

दमा

नवासीर

हैजा

मस्तिष्क सम्बन्धी रोग

वात व्याधियां

क्षय या राजयक्ष्मा

नेत्र रोग

कर्ण रोग

विष विकार

दन्त रोग

❀ निवेदन ❀

युद्ध जन्य विशेष परिस्थिति और कागज की भयङ्कर मँहगी की वजह से इन दो भागों का कागज, रगरूप और गेट अप सतोषजनक नही हो पाया है लेकिन इनकी विषय सामग्री-अगर ध्यान से देखेगें तो-पहले पाँच भागों की अपेक्षा विशेष रूप से उत्तम मालूम होगी। हम नहीं जानते कि पाठक इसके रग रूप की ओर विशेष ध्यान देंगे या विषय सामग्री की ओर ? फिर भी हम तो अपनी मजबूरी और अपनी त्रुटियों के लिये पाठकों से नम्रता पूर्वक क्षमा मागते हैं। आशा है ससार में प्रवर्तित इस ऐतिहासिक सङ्कट पूर्ण काल को ध्यान में रखकर पाठक अवश्य क्षमा करेंगे।

चन्द्रराज भण्डारी

× × × ×

बहुत से पाठक जडी बूटियों के सम्बन्ध में हमसे पत्र द्वारा अनेकों प्रश्न किया करते हैं। महीने में ऐसे पचासों पत्र हमारे पास आते हैं। ऐसे पत्रों का उत्तर देने में हमें कोई ऐतराज नहीं है, बल्कि बहुत प्रसन्नता है। मगर हर महीने इतने पोस्टेज का खर्च उठाना हमारे लिए बहुत कठिन है। इसलिए ऐसे प्रश्न कर्ता सज्जनों से हम निवेदन करते हैं कि वे ऐसे पत्र देते समय उत्तर के लिए पोस्टेज टिकिट जरूर भेज दिया करें। बिना पोस्टेज टिकिट आये हम उत्तर देने में असमर्थ रहेंगे।

लेखक—

वनौषधि-चन्द्रोदय

(सातवां भाग)

वनौषधि-चन्द्रोदय

(सातवाँ भाग)

बादाम

नाम—

संस्कृत—वाताद, बदाम, नेत्रोपमफल, सुफल, वातवैरी। हिन्दी—बदाम, । गुजराती—बदाम। मराठी—बदाम। बंगाल—विलायतीबदाम। कोकण—एमंड, एमेंडी। उर्दू—बदाम, शीरी। अंग्रेजी—Almond Tree। लेटिन—Prunus Amygdalus (प्रूनस एमिगडेलस)। Amygdalus Communis (एमिगडेलस कम्यूनिस)।

वर्णन—

बदाम के वृक्ष भारतवर्ष में पैदा नहीं होते। यह यूरोप और तुर्की से यहां आती है। भारतवर्ष में काश्मीर और पंजाब के अन्दर इसकी खेती की जाती है। मगर यहां की बादाम विदेशी बदाम के बराबर उत्तम नहीं होती। इसका वृक्ष मध्यम कद का होता है। इसके पत्ते कुछ भूरे और फूल सफेद होते हैं। हैं। इसके फल को सब कोई जानते हैं। इसकी दो जातियां होती हैं। एक मीठी और दूसरी कड़वी।

गुण दोष और प्रभाव -

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बदाम का फल गरम, तेल युक्त, पचने में भारी, कामोद्दीपक, मृदु विरेचक, वात और पित्त को नष्ट करने वाला और गलित कुष्ट में लाभदायक है। इसका तेल मृदु विरेचक, कामोद्दीपक, मस्तकशूल को दूर करने वाला, पित्त और वात में लाभदायक, शरीर की अंतरङ्ग जलन को शांत करने वाला और धातु पतन को रोकने वाला होता है।

निघटु रत्नाकर के मतानुसार बदाम सारक, गरम, भारी, कफकारक, स्निग्ध, सुस्वादु, कसेली,

शुक्र जनक, वातनाशक और उष्ण वीर्य होती है। कच्ची बादाम सारक, भारी, पित्तजनक तथा कफ, वात और पित्त के कोप को नष्ट करती है। पकी बदाम मधुर, स्निग्ध, पौष्टिक, शुक्रल, कफ कारक तथा रक्त पित्त और वात पित्त को नष्ट करती है। सूखी बादाम मधुर, धातुवर्धक, स्निग्ध, बलकारक, पौष्टिक, कफ कारक और वात पित्त को दूर करती है।

विलायती बादाम हिन्दुस्तान में होने वाली बादाम की अपेक्षा अधिक पौष्टिक और तेल पूर्ण होती है। इसकी पेज बनाकर मधुमेह रोग में दी जाती है। इसकी पेजबनाने के पूर्व इसको रात भर गरम पानी में भिगो रखना चाहिये। ऐसा करने से इसमें एक नवीन जाति का सत्व उत्पन्न होता है। यह सत्व पाचन क्रिया के लिये उत्तेजक और सहायक होता है। बादाम की पेज को अधिक नहीं औटाना चाहिये। क्योंकि अधिक औटाने से इस पाचक द्रव्य का नाश हो जाता है। श्वासेन्द्रिय के रोग तथा जनेन्द्रिय के रोगों में दूसरी औषधियों के साथ बदाम को पीसकर देते हैं। भीगे हुए बदाम, असगंध और पीपर इन तीनों औषधियों की घी, दूध और शक्कर के साथ मिलाकर तैयार की हुई पेज एक उत्तम रसायन है। इस पेज को फीके रङ्ग की स्त्रियों के कमर के दर्द में देने से अच्छा लाभ होता है। इस पेज से स्त्रियों का दूध बढता है तथा श्वेत प्रदर में लाभ होता है। इस पेज की मात्रा २ से ४ तोले तक की है।

बादाम भीतरी और बाहरी दोनों प्रयोगों में कई मतलब से उपयोग में आती है। सिरके के साथ इसको पीसकर उसका प्लास्टर बना कर स्नायु शूल को दूर करने के लिये लगाया जाता है। इसका अंजन बना कर नेत्रों की दृष्टि को बढाने के लिये उपयोग में लिया जाता है। बादाम को पीसकर उस का द्रव बना कर पीपरमेन्ट के साथ, कफ और खांसी को दूर करने के लिये दिया जाता है। यह मूत्रल और पथरी को गलाने वाला भी माना जाता है और यह यकृत और तिल्ली की बाधाओं को दूर करने के लिये भी उपयोग में लिया जाता है। सिर के अन्दर की जुँओं को मारने के लिये यह लगाया जाता है। इसकी बत्ती बना के गर्भाशय में रखने से कष्ट प्रद मासिक धर्म और उससे होने वाली वेदना दूर होती है। इसका पुल्टिस दुसाध्य फोड़े और चर्म रोगों के ऊपर एक बहुमूल्य लेप का काम देता है।

इस पौधे की जड़ धातु परिवर्तक मानी जाती है और यह भीतरी और बाहरी दोनों प्रयोगों के काम में आती है।

बादाम का रस शक्कर के साथ मिला कर कफ और खांसी को दूर करने के लिये दिया जाता है। बादाम को अंजीर के साथ मिला कर मृदु विरेचक और आंतों के दर्द को दूर करने वाले पदार्थ की बतौर दिया जाता है।

यूनानी मत—मीठी बादाम आंतों, मस्तिष्क और सारे शरीर के लिये एक पौष्टिक वस्तु है। छाती और यकृत की शिकायतें, खांसी और आंतों के शूल के लिये भी यह उपयोगी है। कामोद्दीपक है। इसका जला हुआ छिलका दातों को मजबूत करता है। इसका तेल मीठा, मृदु विरेचक, मस्तिष्क के लिये

पौष्टिक, मूर्छा और यकृत की शिकायतों के लिये लाभदायक, सूखी खांसी को दूर करने वाला गले को साफ करने वाला और कौलिक शूल को दूर करने वाला होता है।

कड़वी बादाम का मगज खराब स्वाद वाला सूजन के लिये लाभदायक, जलोदर, मस्तक शूल और आंखों की कमजोरी में मुफीद होता है। यह ब्रोंकाइटीज, पुराने व्रण, गीली खुजली और पागल कुत्ते के विष पर भी उपयोगी माना जाता है। कड़वी बादाम का तेल मृदु विरेचक, कृमिनाशक और घाव को अच्छा करने वाला होता है। यह गुदा, यकृत और तिल्ली की वेदना को दूर करता है। पुरातन प्रमेह, कर्णशूल, गले की वेदना और चर्म रोगों में यह उपयोगी होता है।

बादाम गरमी और सरदी में समशीतोष्ण होता है। यह शरीर के लिये एक बहुत अच्छी गिज़ा है। यह नया खून पैदा करती है और पुराने खून को शुद्ध और साफ करती है। इसका शीत निर्यास शक्कर के साथ सूखी खांसी को आराम करता है। इसको देने से कफ के साथ आने वाला खून बन्द हो जाता है। दमा और निमोनियां में भी यह मुफीद है। मूत्र नाली की सूजन और सुज़ाक में भी इसे देते हैं। अंजीर के साथ इसको देने से यह कब्जियत को दूर करती है।

मस्तिष्क, कामशक्ति और नेत्रों की दृष्टि को यह ताक़त देती है। बादाम की ७ मग़ज तोले भर मिश्री के साथ रात को सोते वक्त देने से दिमाग़ की कमज़ोरी मिट जाती है। आंतों और मसाने के जखम में भी यह लाभदायक है। आमाशय में चिकने दोषों के इकट्ठे होने से जो पेचिश हो जाती है उसमें यह लाभदायक है। इसके सेवन से नया वीर्य पैदा होता है और पुराने वीर्य की गरमी और दोष दूर होते हैं। इसका मुरब्बा खून पैदा करता है और शरीर को मोटा करता है। गुर्दे के लिये यह एक पौष्टिक वस्तु है। बादाम को भून कर खाने से मेदे की सुस्ती और ढीलापन मिटता है।

मीठे बादाम का तेल हलका होता है और दिमाग में बहुत तरी पैदा करता है। सिर दर्द को मिटाता है। सन्निपात और निमोनियां में लाभदायक है। कब्ज़ को दूर करता है। जुलाब की औषधियों में इसको शामिल करने से उनका प्रतिक्रियात्मक दोष दूर हो जाता है। इसके निरन्तर उपयोग से हिस्टीरिया की बीमारी में बहुत लाभ होता है। गर्भवती स्त्री नौवां महिना लगते ही मीठे बादाम के ताज़ा तेल को प्रति दिन सबेरे १ तोले की मात्रा में दूध के साथ या और किसी प्रकार ले लिया करे तो बच्चा बहुत आसानी से पैदा हो जाता है।

बादाम कड़वी

यह तीसरे दर्जे मे गर्म और खुश्क होती है। इसको पीसकर सिरके मे मिलाकर लगाने से छाजन और खुजली दूर हो जाती है और शरीर के काले दाग निकल जाते हैं। पुराने ज़ख्मों पर इस को लगाने से वे अच्छे हो जाते हैं। दाद, खुजली और पित्ती पर भी इससे लाभ होता है। पथरी में भी यह मुफीद है। इसकी बत्ती को योनि में रखने से मासिक धर्म जारी हो जाता है। पागल कुत्ते के विष में भी इसको ४।। माशे की मात्रा मे देने से लाभ होता है। इसका लेप भी इसमें फायदा करता है।

कड़वे बादाम का तेल सूजन को उतारता है, खुश्की पैदा करता है, आमाशय के दोषों को दूर करता है, दमे में मुफीद है, तिल्ली की सूजन, गुर्दे का दर्द और रुक २ कर पेशाब आने की बीमारी में लाभ दायक है। गर्भाशय की सूजन और हिस्टीरिया में भी यह दिया जाता है। पैरों में फटने वाली बिवाई पर भी इसको लगाने से लाभ होता है।

बादाम का गोंद

मीठे बादाम का गोंद गरम, तर, काबिज और गले के दर्द, पुरानी खांसी तथा राजयक्ष्मा में मुफीद है। यह शरीर को मोटा करता है और कफ में खून आने को रोकता है। पथरी में भी यह मुफीद है।

——:०:——

बनलौंग

नाम—

संस्कृत— मूलवग, जललवग। हिन्दी— वनलौंग। बगाल— वनलुग, लालवनलुग। मराठी—पानलवग। तामील—नीलकिरांबु। अंग्रेजी—Primrose Willow। लेटिन—Jussieua Suffruticosa (जूसिया सफ्रूटीकोसा)।

वर्णन—

यह एक वर्ष जीवी वनस्पति होती है। इसके क्षुप ४ से ६ फुट तक ऊँचे और खड़े होते हैं। इनके बहुत डालियां होती हैं। यह पानी के किनारे की जमीन पर विशेष पैदा होती है। इसके पत्ते ३ इंच लंबे, नोक वाले और रुएँदार होते हैं। फूल पीले लौंग के फूलों की तरह दीखते हैं। इसकी फली १ से २ इंच तक लंबी और रुएँदार होती है। यह वनस्पति सारे भारत वर्ष में तर जमीनों में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

वनलौंग सकोचक, वातनाशक और रक्त सग्राहक होते हैं। बड़ी मात्रा में ये मूत्रल और आनुलोमिक होते हैं। इसके पौधे को कुचलक मट्ठे में मिला कर देने से रक्त मिश्रित आँव, रक्तातिसार और किसी भी अंग से होने वाले रक्तस्राव में लाभ होता है। ज्वर में इसकी जड़ का क्वाथ बना कर पिलाया जाता है, इसका काढ़ा कृमिनाशक और विरेचक भी माना जाता है।

——:०:——

बादाम बर्बटी

नाम—

हिन्दी-यूनानी -बादाम बर्बटी, जंगली बादाम। अंग्रेजी—Jawa Almond। लेटिन Canarium Commune (केनेरियम कोम्यून)।

वर्णन--

यह भी एक जाति का बादाम का वृक्ष होता है। इसके वृक्ष बंगाल में बोये जाते हैं। इस बादाम के मगज़ को यंत्र में दबा कर एक प्रकार का तेल निकाला जाता है जो आधा जमा हुआ होता है और नरियल के तेल की तरह दीखता है। यह खाने में स्वादिष्ट होता है।

इसकी छाल में से भी एक प्रकार का निर्मल तेल निकाला जाता है। इस तेल में चरपरी गंध आती है और यह जम कर मक्खन के समान हो जाता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके गोंद का लेप बना कर शिथिल घावों पर लगाया जाता है। इसका फल मृदु विरेचक होता है।

कंबोड़िया में इसकी जड़ का कंद उत्तेजक, पसीना लाने वाला, और रक्त श्राव को बंद करने वाला माना जाता है। यह प्राचीन ब्रोंकाइटीज, यकृत की तकलीफ, पोलिया, मस्तक शूल और मूत्राशय की सूजन में अंतः प्रयोग की तरह दिया जाता है। बाहरी प्रयोग में इसका उपयोग राई की पुल्टिस के साथ यकृत की शिकायतों, स्नायु शूल, और संधिवात पर किया जाता है।

——:o:——
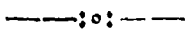
बगुआ (मुंगस काजुर)

नाम—

सिलहट- बगुआ। पटना—मुगस काजुर। लेटिन—Solanum Spirale (सोलेनम स्पाइरेल)।

वर्णन—

यह हमेशा हरी रहने वाली बहु शाखी झाड़ी होती है। इसके फूल सफेद और छोटे होते हैं। यह वनस्पति आसाम, खासिया हिल और पूर्वी बंगाल में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

पटना में इसकी जड़ नशीली और मूत्रल वस्तु की तरह दी जाती है।

——:o:——
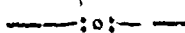
वनमेथी

नामः—

संस्कृत वनमेथिका। हिन्दी—वनमेथी। बंगाल—वनमेथी। पंजाब—सिंजी। अंग्रेजी—Small melilot। लेटिन—Melilotus Indica (मेलिलोटस इंडिका)। M. Parviflora (मे० परवी फ्लोरा)

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वर्ष जीवी वनस्पति होती है। इसका पौधा मेथी की तरह होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति के गुण दोष और इसमें पाये जाने वाले तत्व मेथी के समान ही होते हैं।

मुरे के मतानुसार इसके बीज आंतों के रोग और बच्चों के अतिसार में उपयोगी होते हैं। इसके पौधे का पुल्टिस बना कर सूजन के ऊपर बांधा जाता है।

———:※:———

बनचालिता

नाम—

बंगाल—बन चालिता, बनचेल्ट। मलयालम—नेलुगु, नेल्लू। लेटिन—Leea Crispa (लीआ क्रिस्पा)।

वर्णन—

यह एक क्षुप जाति की वनस्पति होती है। इसके फूल कुछ हरापन लिये हुए सफेद, फल बेर के समान, काले और मान्सल होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

बंगाल में इसकी जड़ का कंद नारू को अच्छा करने के लिये उपयोग में लिया जाता है। इसके पत्तों को कुचल कर जख्म के ऊपर लेप किया जाता है।

———:o:———

बनखारा

नाम—

हिन्दी—बनखारा, भाटिया। मराठी—अलई, वदीगरजन। कुमाऊ—भाटिया। तामील—पुनाली। लेटिन—Dalbergia Volubilis (डलबेरगिया व्होल्यूबिलिस)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति की झाड़ी होती है। इसके पत्ते १० से लेकर १५ सेंटीमीटर तक लंबे और बहुत चमकदार होते हैं। यह वनस्पति कोकण में बहुत पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति शीतल, स्नेहन, व्रणशोधक और व्रणरोपक होती है। जीभ के छाले और फोड़े, गले के फोड़े और मसूड़ों की सूजन में इसके रस से कुल्ले कराये जाते हैं अथवा इसकी छाल को चबाया जाता है। नवीन सुजाक में इसकी जड़ का २ तोला रस जीरे और मिश्री के साथ दिया जाता है। इसके पत्तों का रस मुखक्षत पर लगाया जाता है।

———:×.———

बन कुद्री

नाम—

मध्यभारत—बनकुद्री। लेटिन—Zehneria Hookeriana (झेनेरिया हुकरियाना)

गुण दोष और प्रभाव—

कर्नल चोपरा के मतानुसार यह वनस्पति ज्वर और अतिसार में उपयोगी है।

——:+:——

बनमूंग

नाम—

संस्कृत—मुग्दपर्णी, काकमुग्दा, शिंबिपर्णिका, शिंबीपर्णी, मार्जारगंदिका, बनमुग्दा, बन्या, कुंजिका। हिन्दी—वनमूँग, मुगवन, मुंगनी। बंगाल—मुगानि। बम्बई—अर्कमुत, मुकुया। गुजराती—अडबाऊमंगी, अड़वाड़ा, मगवेल। काठियावाड—मगमाठी। तामील—नारीपायार, पानी पायार। लेटिन—Phaseolus Trilobus (फेसेओलस ट्रिलोबस)।

वर्णन—

यह एक मूँग की जंगली जाति होती है। इसका पौधा मूँग की तरह होता है। इसकी ऊँचाई १ फुट से २ फुट तक होती है। एक फुट की ऊँचाई होने के बाद इसमें लता की तरह तंतु फूटते हैं। इसके पत्ते तीन २ के जोड़े में लगते हैं। इसके फूल पीले रग के और फलियां मूँग की फलियों की तरह ही होती हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेद के मत से बनमूग शीतल, रूक्ष, कड़वा तथा खाँसी, वातरक्त और ज्वर का नाश करने वाला होता है। यह स्वादिष्ट, हलका, त्रिदोष नाशक तथा संग्रहणी, कृमि, अतिसार, कफ, बवासीर, और पित्त को दूर करता है। यह रक्त स्तम्भक भी होता है। इसका काढा जीर्णज्वर में पौष्टिक और नींद लाने वाली वस्तु की तरह दिया जाता है। इसके पत्तों को कुचल कर पुल्टिस की तरह कमज़ोर आंखों पर बांधते हैं।

चरक और सुश्रुत के मतानुसार इसके बीज सर्प और बिच्छू के विष में उपयोगी होते हैं।

——:o:——

बन नींबू

नाम—

सस्कृत—अश्वशेकोटा। हिन्दी—बननींबू, गिरगिट्टी, पोटाली। बंगाल—आशशौरा। बम्बई—किरमिरा। मराठी—किरमिरा। तामील—अनाम, कोंजि। तेलगू—गोलुगू, गुंजि। लेटिन—Glycosmis Cochinchinensis। (ग्लिकोस्मिस कोचीनचायनेन्सिस)।

वर्णन—

यह एक सीधी झाड़ी होती है। इसके पत्ते एक के बाद एक लगते हैं। ये ७.५ से लेकर १८ सेंटिमीटर तक लम्बे और ३.८ से लेकर ६ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल कुछ पीलापन लिये हुए होते हैं। इसके फल झड़बेर के समान छोटे, अंडाकृति, कुछ लम्बे और पीले तथा नारगी रग के होते हैं। यह वनस्पति सारे भारतवर्ष में तथा सीलोन और मलाया में पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसकी जड़ का चूर्ण करके शक्कर के साथ देने से मन्द या हलके ज्वर में लाभ होता है। इसकी लकड़ी को कुचल कर पानी के साथ मिला कर सर्प के विष के दर्प को नष्ट करने के लिये पिलाया जाता है।

ट्रु किंग में इसके पत्तों का निर्यास बना कर एक पौष्टिक वस्तु की तरह स्त्रियों को डिलीवरी के बाद पिलाया जाता है।

—:o:—

ब्रह्ममंडूकी

नाम—

संस्कृत—मण्डूकपर्णिका, ब्रह्ममण्डूकी, मेकपर्णी, दिव्या, मण्डूकी, सुप्रिया, इत्यादि। हिन्दी—ब्रह्ममण्डूकी, मण्डूकपर्णी, खुलखुड़ी। गुजराती-खड़ ब्राह्मी। बंगाल—ब्रह्ममण्डूकी, थोलकुरी। बम्बई—कारिवाना, कारिंगा। दक्षिण—वेजारि। मराठी—ब्राह्मी। तामील—वयासा, वेलारि। तेलगू—बवासा। उर्दू—ब्राम्ही। फ़ारसी—सरदेतुरकस्तान। अरबी—कारनिवा, आरेनियाहिंदी। इङ्गलिश—Thick leaved Pennywort। लेटिन—Hydrocotyle Asiatica (हायड्रोकोटिल आसियाटिको)।

वर्णन—

यह ब्राम्ही से बिलकुल मिलती हुई १ बेल होती है। वर्षा ऋतु में यह सब दूर पैदा होती है और जहां पानी मिलता रहता है वहां वर्ष भर तक रहती है। इसकी पतली २ डालियाँ जमीन पर फैलती हैं और डालियों में हर एक जोड़ के स्थान से जड़ें निकल कर जमीन में घुस जाती हैं। इसकी डाली के हर एक जोड़ पर पत्ते, फूल और फल आते हैं। इसके पत्ते अखण्ड, मूत्रपिंड की आकृति के, कंगूरेदार और १ इञ्च से १॥ इञ्च तक लम्बे होते हैं। ये बिलकुल ब्राम्ही के पत्तों की तरह होते हैं मगर उनसे कुछ मोटे होते हैं। फूल छोटे २ और गुलाबी रंग के होते हैं। इस वनस्पति के पत्तों को मसलने से तीव्र गंध आती है। इसका स्वाद कड़वा और तेज होता है, इसके पत्तों के सूखने पर इसकी गंध और स्वाद चला जाता है। औषधि में इसका जड़ समेत पौधा काम में लिया जाता है।

ब्रम्हमंडूकी की वेल ब्राम्ही के समान ही दीखती है। मगर इन दोनों के वर्ग अलग २ और धर्म विलकुल अलग २ होते हैं। इसलिये इनको ऐक दूसरे के बदले में कभी नहीं लेना चाहिये। ब्राह्मी की क्रिया प्रधान रूप से मज्जा ततुओं पर होती है और ब्रम्हमंडूकी की क्रिया त्वचा के ऊपर होती हैं। ब्राह्मी के पत्ते चिकने और पतले और हर ऐक डाली के जोड़ पर एक से अधिक आते हैं। ब्रह्ममंडूकी के पत्ते खरदरे, कुछ छोटे और हर ऐक डाली के जोड़ पर ऐक २ पत्ता आता है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वैदिक मत से इसका पौधा कड़वा, मीठा, चरपरा, जल्दी हजम होने वाला, मृदु विरेचक, शीतल, पौष्टिक, धातु परिवर्तक और ज्वरनाशक होता है। यह भूख, कण्ठस्वर और स्मरणशक्ति को बढ़ाता है। श्वेत कुष्ट, पाँडु रोग, अनैच्छिक वीर्यश्राव, रक्त रोग, ब्रोंकाइटीज, सूजन, ज्वर, कफ, पित्त तिल्ली की वृद्धि, चेचक, दमा, और उन्माद में यह लाभदायक है।

ब्रह्म मंडूकी में कुष्ट नाशक, वृणशोधक, वृणरोपक, मूत्रल, दुग्धशोधक, सकोचक, वलवर्धक और रसायन इतने धर्म रहते हैं। त्वचा के ऊपर इसकी प्रधान क्रिया होती है। इसमें रहने वाला तेल त्वचा के मार्ग से बाहर निकलता है। जिससे त्वचा के अन्दर गर्मी पैदा होती है और खुजली चलती है। शुरू २ में इसकी जलन हाथों और पावों में होती है। उसके पश्चात सारे शरीर भर में ऐसी गरमी मालूम होती है कि कभी २ वह असह्य हो जाती है। इससे त्वचा के अंदर रहने वाली रक्त वाहिनियों का विकास होता है और उनके अन्दर रक्त का प्रवाह जल्दी २ होने लगता है जिससे त्वचा लाल हो जाती है और बहुत खुजली छूटती है। करीब १ सप्ताह के पश्चात् भूख बढने लगती है। इसके तेल का कुछ अ श मूत्रपिंड के मार्ग से भी वाहर निकलता है और उस समय यह मूत्र के परिमाण को बढ़ा देता है।

त्वचा के रोगों में ब्रह्ममंडूकी बहुत गुणकारी वस्तु है। उपदश की द्वितीयावस्था में जब कि रोग का जोर त्वचा पर फूट निकलता है तब इसका प्रयोग बहुत लाभदायक होता है एक सप्ताह में इसके प्रयोग से त्वचा का मोटापन निकलकर वह मुलायम हो जाती है और उसके उपर का विकार सूख कर खिरने लगता है। गड माला में इसका लाभ प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होता है। सब प्रकार के प्राचीन चर्म रोग, क्षय के जतुओं की वजह से पैदा हुए वृण, श्लीपद, इत्यादि रोगों में यह बहुत सफल सिद्ध हो चुकी है। ऐसे सब रोगों में इसका भीतरी और बाहरी दोनों प्रकार का उपचार किया जाता है। कुछ दिनों तक लगातार लेते रहने के पश्चात इससे सारे शरीर में खुजली छूटने लगती है और चमड़ी लाल हो जाती है ऐसे समय में इसको लेना बन्द कर देना चाहिये और कोई विरेचक वस्तु लेना चाहिये।

ब्रम्हमडूकी के सेवन से मूत्र की मात्रा बढ़ती है। मगर फिर भी एक मूत्रल औषधि की तरह स्वतत्र रूप से इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये। क्योंकि इससे मूत्र पिंड में त्रास और हानि भी पहुंच सकती है। जावा में इसका रस मुलेठी के चूर्ण के साथ मूत्र नलिका के रोगों में दिया जाता है।

कोमान के मतानुसार इसके पत्ते मूत्रल और त्वचा सम्बधी रोगों में और खास कर गलित कुष्ट में दिये जाते हैं। गलित कुष्ट में ये चूर्ण, काढ़ा और शरवत के रूप में दिये जाते हैं। इन पत्तों का शरवत प्राचीन चर्म रोगों के दो बीमारों को दिया गया और थोड़े दिनों के सेवन के पश्चात उनको कुछ लाभ मालूम हुआ।

वम्बई के अन्दर बच्चों को होने वाली रक्त मिश्रित दस्तों में और पेशाब की जलन में इसके २।४ पत्तों का रस जीरा और मिश्री मिला कर दिया जाता है और इसके पत्तों को पीस कर उनका लेप पेट पर किया जाता है।

मलाबार में इसका पौधा गलित कुष्ट और उपदश जनित चर्म रोगों की एक औषधि माना जाता है। डाक्टर ए० हण्टर ने मद्रास के गलित कुष्ट के अस्पताल में गलित कुष्ट के रोगियों पर इसका प्रयोग किया और इस नतीजे पर पहुंचे कि गलित कुष्ट के रोग पर यद्यपि इस औषधि का विशेष अधिकार नहीं है मगर इस रोग के लक्षणों को उपशम करने में और रोगी के जनरल स्वास्थ्य को बढ़ाने में यह बहुत अधिक उपयोगी है।

कर्नल चोपरा के मतानुसार ब्रह्म मण्डूकी भारतीय चिकित्सकों के द्वारा भिन्न २ प्रकार के चर्म रोगों पर बहुत प्राचीन काल से उपयोग में ली जा रही है। यद्यपि इंडियन फरमाकोपिया में सिर्फ इसके पत्तों को ही सम्मत माना गया है लेकिन अनेकों अन्वेषकों ने इसकी जड़, शाखा, पत्ते और बीजों को औषधि की तरह उपयोग में लिया क्योंकि इन सभी अंगों में इसका प्रधान और उपयोगी तत्व व्हेलेरिन पाया जाता है। इसके पत्तों को छाह में सुखा लेने से इसका यह तत्व नष्ट नहीं होता। इन पत्तों के चूर्ण को स्टापर्ड वॉटल में भर कर रखना चाहिये। यह चूर्ण एक्जिमा, गलित कुष्ट, उपदश की द्वितीय अवस्था के व्रण और दूसरे चर्म रोगों पर वेस लाइन में मिला कर मरहम के रूप में लगाया जाता है और भीतरी प्रयोग में यह एक धातु परिवर्तक और पौष्टिक वस्तु की तरह ५ से १० ग्रेन तक की मात्रा में दिन में ३ वार दिया जा सकता है। इसका काढा १ औंस पौधे को १ पिंट पानी में १५ मिनिट तक उबाल कर तैयार किया जाता है। यह काढा १ से २ औंस तक की मात्रा में दिया जाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से ब्रह्म मण्डूकी का पौधा कड़वा, खराब स्वाद वाला, ज्ञान तंतुओं के लिये उपशामक, निद्राजनक, पौष्टिक, हृदय को बल देने वाला, अग्निवर्धक, शांतिदायक, मूत्रल तथा स्वर और मस्तिष्क को सुधारने वाला होता है। यह हिचकी, दमा, ब्रोंकाइटीज पेशाब की जलन और शूल को दूर करता है। यह भूख को बढ़ाता है।

ब्रह्म मण्डूकी और वात रक्त

वात रक्त नामक कुष्ट रोग पर यह वनस्पति किस प्रकार अपनी क्रिया करती है इसके डाक्टर बोइलू ने स्वय अपने शरीर पर प्रयोग किये हैं। इस वनस्पति की क्रियाओं का उल्लेख करते हुए उक्त डाक्टर लिखते हैं —

कि ब्रह्म मंडूकी को लेने से प्रारम्भ में वातरक्त के रोगियों के हाथ पैर और चमड़ी के ऊपर गर्मी लगने लगती है और खुजली चलती है। थोड़े दिनों के पश्चात् शरीर में इतनी गर्मी बढ़ती है कि सारे शरीर में खुजली चल कर चमड़ी लाल हो जाती है। रक्त बहुत तीव्र गति से दौड़ने लगता है और नाड़ी बहुत मजबूत और भरी हुई चलने लगती है। इसके पश्चात् भूख बढ़ती है और पाचन क्रिया का काम व्यवस्थित रूप से होने लगता है और अधिक समय होने पर उपत्वचा के रोग ग्रसित अंग खिरने लगते हैं और चमड़ी मुलायम तथा एक सरीखी हो जाती है। चमड़ी में से पसीना आने लगता है और उसकी कई दिनों की खोई हुई चेतना शक्ति फिर जाग्रत हो जाती है। अगर तंदुरुस्त आदमी को यह वनस्पति दी जाय तो कुछ ही समय में उसका मूत्रल असर होता है, रुधिराभिसरण की गति बढ जाती है और अन्त में खुजली पैदा होती है। इस औषधि को ३० रत्ती से अधिक मात्रा में लेने से तद्रा उत्पन्न होती है और सिर में चस्के चलने लगते हैं। उसके पश्चात इसको बंद करने पर भी ये उपद्रव कई दिनों तक चलते रहते हैं। मैं क्रमशः इस दवा की मात्रा बढाता गया जिसके परिणाम स्वरूप दो मास के पश्चात् मुझे यह अनुभव हुआ कि बहुत दिनों तक शरीर में एकत्रित होकर एक साथ उपद्रव करने वाला यह एक सख्त विष है।

इस सब अनुभव से मैं इस तथ्य पर पहुचा हू कि ब्रह्ममडूकी को अगर उचित मात्रा में दिया जाय तो यह रक्ताभिसरण की क्रिया को बहुत उत्तेजित करती है और विशेष रूप से चर्म रोगों पर लाभ पहुचाती है। पर यदि बडी मात्रा में इसको ली जाय तो यह बेहोशी और मूर्च्छा पैदा करती है। इसलिये इसका प्रयोग इस प्रकार करना चाहिये।

ब्रह्म मडूकी के सारे पौधे को जड़ के साथ उखाड कर उसकी जड़ों के लगे हुए कचरे को पानी से धोकर सारे पौधे के छोटे २ टुकड़े करके छाया में सुखा लेना चाहिये। कई वैद्य सिर्फ इसके पत्तों को ही उपयोग में लेते हैं, मगर यह उनकी भूल है। क्योंकि इस वनस्पति में वेलेरिन नामक जो प्रधान तत्व पाया जाता है उसका प्रधान भाग तो इसकी जड़ ही में रहता है। इसलिये इसके सारे पौधे का ही उपयोग करना चाहिये।

वात रक्त के २० से लेकर ४० वर्ष तक की उम्र के रोगियों को प्रथम दो सप्ताह तक इस वनस्पति का चूर्ण प्रति दिन २० ग्रेन की मात्रा में देना चाहिये। उसके पश्चात् हर सप्ताह पांच २ ग्रेन की की मात्रा बढ़ाते हुए दसवें सप्ताह में उसको ६० ग्रेन तक पहुँचा देना चाहिये। फिर प्रति सप्ताह पाच २ ग्रेन कम करते हुए १० ग्रेन तक ले आना चाहिये। फिर १ महीने तक इस औषधि को लेना बन्द कर देना चाहिये। जिससे उसका उत्तेजक और ज़हरीला असर होने न पावे। उसके पश्चात फिर १० ग्रेन से प्रारभ करके प्रति सप्ताह पांच २ ग्रेन बढाते हुए ६० ग्रेन तक बढ़ाना चाहिये और फिर उसी प्रकार कम करना चाहिये।

शुरू २ यह चूर्ण रात्रि को सोते समय गरम पानी के साथ लेना चाहिये। मगर जब इसकी मात्रा

३० ग्रेन तक पहुँच जाय तब सब चूर्ण एक साथ न लेकर उसके दो भाग करके एक भाग सबेरे और एक भाग शाम को लेना चाहिये।

रुधिराभिसरण की गति को तेज करने की अद्भुत शक्ति होने की वजह से यह वनस्पति वात रक्त तथा त्वचा के सभी रोगों में अच्छा लाभ करती है।

डॉक्टर बोहलू के उपरोक्त कथन के पश्चात डॉक्टर शार्ट ने भी बतलाया कि सब प्रकार के वात रक्त के रोगों में यह औषधि बहुत लाभ करती है परन्तु बाद के विद्वानों में इस सम्बन्ध में बहुत मत भेद हो गया और इन लोगों ने बतलाया कि इस रोग की सिर्फ प्रारंभिक अवस्था में ही यह लाभ पहुचाती है। इसकी बढी हुई हालत में यह अधिक उपयोगी नहीं होती। फिर भी खुजली इत्यादि दूसरे पुराने और हटीले चर्म रोगों पर यह बहुत लाभ पहुचाती।

डॉक्टर वटिन का कथन है कि शरीर के किसी भाग में होने वाली खुजली के कई गभीर केसों में मैंने इस औषधि का प्रयोग किया और थोड़े ही समय में मुझे कॉफी सफलता मिली। व्यभिचार जनित उपदश की दूसरी और तीसरी अवस्था में, कठ माला में और पुराने सधिवात में भी इससे अच्छा लाभ होता है।

रासायनिक विश्लेषण—इसके ताज़ा पत्तों में पाया जाने वाला प्रधान पदार्थ व्हेलेरिन होता है। यह पदार्थ ही इसके सब गुणों का मूल उद्गम स्थान है। यह धूप के लगने से उड जाता है। इसलिये इसका धूप में सुखाया हुआ पौधा गुणहीन हो जाता है। इस कारण इसको हमेशा छाया में सुखाना चाहिये।

—— ० ——

ब्रम्हदंडी

नाम—

सस्कृत—ब्रम्हदडी, कटपत्रफला, अजादडी। हिन्दी—ब्रम्हदडी।मराठी—ब्रम्हदडी, बोटामोर। बगाल—छागलडडी, बामनडडी। बम्बई—मोटाबोर। गुजराती—ब्रम्हदडी, फुसियारन। लेटिन—Tricholepsis Glaberrima (ट्रिकोलेप्सस ग्लेबेरिमा)।

वर्णन—

यह एक ऊँची जाति का क्षुप होता है। इसका पौधा २ से ३ फीट तक ऊचा होता है। इसके पत्ते बरछी के आकार के, नोकदार और काले धब्बों से युक्त होते हैं। इसके फूल नारंगी रग के और भूमकों में आते हैं। इसके फल काटेदार होते हैं। इसके फूलों में बाबूना के समान तीव्र गन्ध आती है। यूनानी हकीमों के मतानुसार यह वनस्पति ऊट कटारे की ही एक छोटी जाति होती है। यह वनस्पति पश्चिमी राजपूताना, आबू पर्वत, मध्यभारत, कोकण और बम्बई प्रेसीडेंसी में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से इसका पौधा गरम और कड़वा होता है। यह कफ, वात, सूजन, श्वेत कुष्ठ और दूसरे चर्म रोगों में लाभदायक है।

ऐसा विश्वास किया जाता है कि यह वनस्पति कामोद्दीपक और मज्जा तन्तुओं को बल देने वाली होती है और इसका उपयोग वीर्य सम्बन्धी कमजोरी को दूर करने के लिये किया जाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह गरम और खुश्क होती है। यह रक्त शोधक, स्मरण शक्ति को बढ़ाने वाली, और जख्मों को भरने वाली होती है। विशेष रूप से यह चर्म रोगों पर लाभदायक है। शरीर पर होने वाले फोडे फुन्सियो को यह आराम करती है। चेहरे के रंग को साफ करती है। १ तोला ब्रम्हदंडी को ७ काली मिर्चों के साथ पानी में पीसकर छानकर ४० दिन तक लगातार पीने से और पथ्य में सिर्फ चने की रोटी का सेवन करने से कुष्ट रोग में बहुत लाभ होता है। इसको १०॥ माशे की मात्रा में गाय के दूध के साथ सेवन करने से मनुष्य की बुद्धि बढ़ती है। उसकी आवाज साफ होती है। खांसी और मुह की बदबू मिट जाती है। कमर में ताकत आती है। मनुष्य की कामशक्ति और स्तम्भन शक्ति बढ़ती है और शरीर का ढीलापन नष्ट हो जाता है। यह वनस्पति सूजन और वादी की बीमारियों के लिये भी बहुत लाभदायक है।

कुछ लोगों का मत है कि ब्रम्हदंडी को पानी में भिगोकर छानकर पीने से पेशाब में खून का आना बन्द हो जाता है। पेशाब अपने असली रग में आने लगता है और उसकी जलन मिट जाती है। नेत्र रोगों में भी यह लाभदायक है। बच्चा पैदा होने के बाद, होने वाले गर्भाशय के दर्द को भी यह मिटाती है।

मात्रा—इसकी मात्रा ४ माशे से १०॥ माशे तक है।

——:०:——

वन कपास

नाम—

संस्कृत—वनकार्पासी, भारद्वाजी। हिन्दी—बन कपास। लेटिन—Thesparia Lampas (थेसपेरिया लॅंपास)।

वर्णन—

यह एक फैलने वाली झाड़ी होती है जो कभी २ दूसरे वृक्षों के आसरे से भी चढ़ती है। इसके पत्ते छोटे, फूल पीले १ इंच लम्बे और रुई पीले रंग की होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके गुणधर्म साधारण कपास के पौधे के समान ही होते हैं। इसकी जड़े और फल सुजाक में दिये जाते हैं।

——:०:——

बसन्ती

नाम—

हिन्दी, यूनानी—बसन्ती।

वर्णन—

यह एक वनस्पति है। इसके फूल का रग पीला होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानीमत से यह ठडी, स्वाद में तेज तथा रक्तपित्त और कफ के प्रकोप को नष्ट करने वाली होती है। प्यास को बुझाती है। पसीने की बदबू को दूर करती है। आंख, कान और मुँह की बीमारियों में मुफीद है। इसके पौधे को फूल समेत लेकर ५ माशे की मात्रा में पीस कर पीने से रक्त के उपद्रव मिटते हैं।

——:o:——

बशाम

नाम—

हिन्दी-यूनानी—बशाम।

वर्णन—

यह एक वृक्ष होता है। जो, मक्का, ईराक और मिश्र में पैदा होता है। इसकी छोटी और बड़ी दो जातियां होती हैं। बड़ी जाति का दरख्त शहतूत के दरख्त के बराबर होता है। इसके पत्तों को तोड़ने पर उनमें से एक चिकना और तरल पदार्थ निकलता है। इसका फूल छोटा और पीले रग का होता है। इसका फल चिलगोजे की तरह होता है। इस फल का बीज कबाबचीनी के बराबर होता है। इसके बीजों को लोग हुब्ब बिलसान के नाम से पहिचानते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होता है। आमाशय को ताकत देता है। इसके पत्ते फल और लकड़ी को बारीक पीस कर पानी में पका कर बालों पर गाढा २ लेप करके एक रात बधा रहने दें तो बाल काले होजाते हैं। इसके पत्ते तिलके तेल में इतने उबाले जाय कि वे काले पडजायँ। फिर इस तेल को बालों पर लगाने से भी बाल काले पड़जाते हैं।

इसके दूधिया रस को फोड़े और जख्मों पर लगाने से वे सूख जाते हैं। इस रस को आँख में लगाने से आंख का जाला कट जाता है। इसकी डाली से दतून करने से दांत और मसोड़े मजबूत होते हैं और मुँह से खुशबू आने लगती है। इसके फल या तेल को सिरके के साथ मिलाकर योनि में रखने से वध्या स्त्री गर्भ धारण के योग्य होजाती है। इसके तेल या फल को खाने और लगाने से बिच्छू का जहर उतर जाता है। (ख० अ०)

——o——

बतम

नाम—

हिन्दी, यूनानी—बतम।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है जो पहाड़ों में तथा सख्त पथरीली जमीनों में पैदा होता है। इसके पत्ते लम्बे २ होते हैं। इसके गोंद को अलक बतम कहते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानी मत से यह वनस्पति पहले दर्जे में खुश्क और दूसरे दर्जे में गरम होती है। इसका पचांग कब्ज पैदा करता है और गर्मी बढ़ाता है। इसकी छाल को पानी में उबाल कर उस पानी की धार देने से बाल काले हो जाते हैं। सिरके में इसके पत्तों का चूर्ण मिलाकर बालों में लगाने से बाल बढ़ते हैं। बालों के लिये यह वनस्पति एक बहुत पौष्टिक वस्तु है।

इसके पत्तों और डालियों से सिद्ध किया हुआ तेल गरम और काबिज होता है। इस तेल को शरीर पर मलने से बदन की अकड़न और अर्धाङ्ग में लाभ होता है। इसको हलवे में मिलाकर खाने से कमर घुटने और कूल्हों का दर्द मिटता है। इसके पीने से पथरी टूट जाती है, पेशाब ज्यादा आता है। गुर्दे और मसाने को शक्ति मिलती है और काम शक्ति बढ़ती है। यह मकड़ी के विष में भी फायदा पहुँचाता है।

बतम का गोंद बतम के झाड़ में से निकलने वाला गोंद बिलकुल मस्तगी के समान होता है। यह दूसरे दर्जे मे गरम और खुश्क होता है। इसमें सूजन उतारने की बहुत अच्छी शक्ति रहती है। यह पाचन क्रिया को ताकत देता है और वहां की गदगी को साफ करता है। इसको पीसकर सिरके में मिला कर लगाने से पुरानी सूखी खुजली मिट जाती है। सख्त फोड़ों पर लगाने से फोड़े पक जाते हैं। इसको शहद के साथ मिलाकर खाने से भीतर की सूजन मिट जाती है।

खांसी, सीने का दर्द और फेफड़े का जखम भी इसको शहद के साथ खाने से मिट जाता है। ३॥ माशे बतम के गोंद को मुनक्का के साथ निहारे मुह खाने से बिना किसी तकलीफ के आंतों की सफाई हो जाती है। चिकना कफ कटकर निकल जाता है और पेशाब और मासिक धर्म साफ हो जाता है। ४॥ माशे बतम का गोंद खाने से बवासीर से खून का बहना बन्द हो जाता है। इसको शराब के साथ खाने से बिच्छू और दूसरे जहरीले जानवरों का जहर उतर जाता है।

मुजिर— गरम प्रकृति वालों को।

दर्पनाशक— शिकंजबीन।

प्रतिनिधि— मस्तगी। *मात्रा*—४॥ माशा।

—:o:—

बनमेथी

नाम—

हिन्दी—वनमेथी। मलयालम—पोकोजिजी सिंगजतन । लेटिन—Crotolaria Albida (क्रोटोलेरिया अलबिड़ा)

वर्णन—

यह एक छोटी जाति का बहुशाखी पौधा होता है। इसके पत्ते रेशमी और नमकीले होते हैं। इस पौधे के पत्ते, फूल वगैरह मेथी की तरह ही होते हैं। यह वनस्पति सारे भारतवर्ष के गरम प्रांतों में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी जड़ विरेचक होती है।

—:o:—

बरियारा

नाम—

संस्कृत—राजवला ज्वला, वृहन्नगवला फणिजिव्हिका, इत्यादि। हिन्दी—वरियारा, पहाड़ी वरियारा वंगाल—वनमेथी, पीला वरेलाशिकर। बम्बई—वला, जंगली मेथी। गुजराती—वला, जगलीमेथी। मराठी—तुबकड़ी, चिकना, तुक्की। तामील—वट्टतिरुप्पी, पोनभूसुत्ताई। तेलगू- चिचीम्। लेटिन—Sida Carpinifolia (सिडा कारपिनोफोलिया)।

वर्णन—

यह गगेरन या नागवलाही की एक उपजाति होती है। इसका पौधा बहुवर्षायु, छोटा झाड़ी नुमा और बहुत चिकना होता है। वर्षा ऋतु के अन्दर यह बहुत अच्छा रहता है। इसके पत्ते नरम, बरछी आकार के और कगूरेदार होते हैं। ये दो तीन इन्च लम्बे होतें हैं। इसके फूल पीले और बीज छोटे होते हैं। इसके बीजों में बहुत लुआब रहता है। इसकी जड़ पतली, लवी, गोल, खरदरी, गांठदार, ऊबड़ खावड़, बाहर से किरमची और भीतर से सफेद होती है। इसका स्वाद कड़वा होता है औषधि प्रयोग में जड़ ही काम आती है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से इस वनस्पति की जड़ कड़वी, मीठी, त्रिदोषनाशक, पाचक और मूत्रल होती है। यह ज्वर, शरीर की जलन और अनैच्छैक वीर्यभाव को दूर करती है।

इसकी जड़ पसीना लाने वाली, मूत्रल, पाचक, ज्वरनाशक, पौष्टिक और कृमिनाशक होती है। इसकी जड़ का काढा सूठ के साथ पारी से आने वाले बुखार में दिया जाता है आंतों के प्राचीन रोग-में

और उदर शूल में भी इसका उपयोग होता है। इसके पत्तो को गरम करके उन पर तेल लगाकर फोड़े फुन्सियों पर बांधा जाता है। इसके पत्तों के रस में शहद मिलाकर संग्रहणी और छाती के दर्द में देते हैं। इसकी जड़ की चाय बनाकर भूख बढ़ाने और पसीना लाने के लिये दी जाती है। इसकी जड़ का रस क्रमिनाशक औषधि की तरह उपयोग में लिया जाता है।

बम्बई की तरफ इस वनस्पति का उपयोग बहुत किया जाता है। इसकी जड़ अजीर्ण रोग के अन्दर दी जाती है। आमवात के अन्दर इसका काढ़ा देने का बहुत रिवाज है। ज्वर में सूंठ के साथ इसका काढ़ा बना कर देने से पसीना छूटता है, पेशाब अधिक होता है और भूख बढ़ती है। सुजाक के अन्दर इसकी जड़ का चूर्ण दूध के साथ दिया जाता है। आंतों के प्राचीन रोगों में आंतों में शक्ति पैदा करने के लिये इसका स्वरस देते है।

इसकी जड़ शीतल, संकोचक, पौष्टिक और स्नायुजाल तथा धातु सम्बन्धी और मूत्र सम्बन्धी बीमारियों में उपयोगी मानी जाती है। खून की खराबी और पित्त दोष के अन्दर भी यह लाभ पहुंचाती है। हिन्दु चिकित्सक इस औषधि को बहुत उत्तम अग्निवर्धक और आंतों की प्राचीन शिकायतों को दूर करने वाली औषधि मानते हैं।

बगाल के कुछ अनुसधानकों ने इस वनस्पति की जड़ के ज्वरनाशक गुणों की परीक्षा की मगर इस सम्बन्ध में उनको संतोष नहीं हुआ। मगर वे इस निश्चय पर पहुचे कि यह एक उत्तम कटु पौष्टिक पसीना लाने वाली और भूख बढ़ाने वाली औषधि है।

गोआ के अन्दर यह औषधि मूत्रल और सधियों की सूजन में बहुत लाभदायक मानी जाती है। सुजाक के रोग में यह एक शांतिदायक वस्तु की तरह उपयोग में ली जाती है। मुसलमान लोग इस औषधि को कामोद्दीपक मानते हैं।

कोकण में इसकी जड़ को गोरेया पक्षी की विष्टा के साथ मिलाकर बाल तोड़ और विस्फोटक फोड़ों पर लगाया जाता है।

चरक और सुश्रुत के मतानुसार यह वनस्पति दूसरी औषधियों के साथ सर्प विष के उपचार में काम आती है।

गोल्ड कास्ट में यह वनस्पति कामोद्दीपन के कार्य में ली जाती है। वहा पर मरे हुए बच्चे को गर्भाशय से निकालते समय दाईयां इसके पत्तों को कुचलकर अपने हाथ पर चुपड़ लेती है। वे इसके पत्तों को पानी में मिलाकर उसका एनेमा एसी स्त्रियों को देते हैं जिनके बच्चे गर्भाशय में रुक जाते हैं। गर्भपात के लिये भी वे इसका बहुधा उपयोग करते हैं।

यूनानी मत--यूनानी मत से इस वनस्पति की सफेद फूलवाली और पीले फूलवाली दो जातियां होती हैं। यह मखजन के मतानुसार गरम और तर और तालीफ शरीफ के मतानुसार सर्द और खुश्क होती है।

इसकी सफेद जाति के पत्तों को पानी में पीसकर पीने से सुजाक और प्रमेह में लाभ होता है। धातु पुष्ट होती है। मसाने की पथरी गल जाती है। इसके पत्तों को कूट कर पानी में निचोड़ कर पिलाने और सुघाने से साप का जहर उतरता है। अगर ताजा पत्ते न मिलें तो सूखे पत्तों को पीसकर सुँघाना चाहिये। सांप का काटा हुआ आदमी अगर वेहोश हो गया हो तो उसकी नाक में इसके पीसे हुए पत्तों को एक नली में भरकर जोर से फूकना चाहिये, जिससे वह होश में आता है। यह वनस्पति बवासीर में भी लाभ पहुचाती है। इसकी पीली जाति के पत्तों को पीस कर लेप करने से सूजन बिखर जाती है और दर्द शान्त होता है।

—:o:—

बननींबू

नाम—

हिन्दी—सुन्दरवन, बननींबू। मलयालम लिमानतेलाग। लेटिन—Paramignya Longispina (पेरेमिग्न्या लांगिस्पिना)।

वर्णन—

यह वनस्पति सुन्दरी वन, मलाया और ब्रह्मा में पैदा होती है,

गुण दोष और प्रभाव—

सुन्दरी वन में इसका फल कॉलिक,उदर शूल को दूर करने के लिये दिया जाता है।

—:o:—

बदजरीघामन

नाम—

बम्बई—बदजरीघामुन। छोटा नागपुर—मावद। कोंकण—बुजारीदामु। तामील—मालमतुर्ती।
लेटिन—Eriolaena Quinquelocularis (इरियोलेना क्विंकेलोकुलेरिस)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति का वृक्ष होता है जो कि बम्बई प्रेसीडेंसी, कोंकण, पश्चिमी घाट और मद्रास प्रेसिडेंसी में पैदा होता है,

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी जड़ का पुल्टिस बना कर घावों को भरने के काम में लेते हैं।

—:o:—

बड़ा कातुस

नाम—

नेपाल—बडा कातुस, सिंगोरी कातुस, सुगारी कातुस। लेटिन—Quercus Pachphylla (करकस पचफिला)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। जो सिक्किम, मनीपुर और नेपाल में पैदा होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

सिक्किम में इसकी छाल एक संकोचक द्रव्य की तरह काम में ली जाती है।

—:o:—

बरासलपान

नाम—

हिन्दी—बरासल पान, भालिया, कुसुट, सुच। बगाल—बरासलपान, भालिया। मराठी—दोदोला। सथाल—बिरबुट। लेटिन—Flemingia Congesta (फ्लेमिंगिया कांगेस्टा)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की सीधी खड़ी रहने वाली झाड़ी होती है। बरसात के पश्चात् यह वनस्पति पैदा होती है। इसके पत्ते गहरे हरे चमकीले और तीन २ साथ लगने वाले होते हैं। इसके फूल किरमची रंग के होते हैं। इसकी हर एक फली में एक २ बीज होता है जो गोल और काला होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

सथाल जाति के लोग इसकी जड़ का लेप बना कर वृण और गले की सूजन को दूर करने के लिये लगाते हैं।

—:o:—

बरहंता

नाम

सस्कृत—दुर्लभा, ग्राहिणी, कामघ्नी, समुद्रता, विरुपा वृश्चिक पत्री। हिन्दी—बरहता। बगाल—बिचाटी। बम्बई—खाज कोल्टी, कंचकुरी। तामील—श्रबु, कजोरी। तेलगू—दुला गोंडी। लेटिन—Tragia Involucrata (ट्रेजिया इनव्होल्यूक्रेटा)। मराठी—थोर आगिया। गुजराती—मोटी खाज वणीनी वेल।

वर्णन—गुण दोष और प्रभाव—

यह एक झाड़ी होती है। इसकी ऊंचाई ६।७ फीट तक होती है। इसके पत्ते डखलदार, कटे हुए

कंगूरों के और लोम युक्त होते हैं। इसके फूल तुर्रे वाले और ऊपर से कुछ पीले होते हैं। इस वनस्पति को छूने से शरीर में बहुत खुजली छूटती है और शरीर का वह भाग लाल हो जाता है। औषधि में इसकी जड़ें काम में ली जाती हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति पसीना लाने वाली, मूत्रल और धातु परिवर्तक होती है। इसका शीत निर्यास खुजली और जलन युक्त ज्वर में दिया जाता है।

कोकण में इसकी जड़ का लेप बना कर नारू के कीडे को निकालने के लिये बांधा जाता है। खुजली युक्त चर्म रोगों को मिटाने के लिये इसको तुलसी के रस के साथ मिला कर लगाते हैं।

छोटे नागपुर में इसको जड़ को ठंड देने वाले बुखार में और टाँगों तथा भुजाओं के दर्द में दिया जाता है। गलित कुष्ट के अन्दर बनाये जाने वाले लेप में भी इस औषधि का प्रयोग किया जाता है।

टेलर के मतानुसार सूंघने के नस्य में इसके पत्तों को मिला कर मस्तक शूल को रोकने के लिये उपयोग में लिया जाता है।

थोरटन के मतानुसार इसके फल को सिर के ऊपर थोड़े से पानी के साथ घिसने से गंजेपन में लाभ होता है।

कोमान के मतानुसार इसको जड़ के अन्दर पसीना लाने वाले तत्व रहते हैं और इसलिये यह बुखार में पसीना लाने के लिये दी जाती है। इसकी जड़ का काढ़ा ओंकाइटीज और ज्वर के केसों में दिया गया और उनमें १० रोगियों में १ को लाभ हुआ।

——:o:——

बरिंगू

नाम—

पंजाब—बरिंगू, ममीरी। अंग्रेजी—Soldiers Buttons। लेटिन—Caltha Palustris (काल्था पेल्यूस्ट्रिस)।

गुण दोष और प्रभाव—

कर्नल चोपरा के मतानुसार इसकी जड़ विषैली होती है।

——:-:——

बरोला

नाम—

बंगाल—बरोला। बंबई—हालूगिरी, हूलागिरी। मराठी—धुद्रविंबो। लेटिन—Holigarana Longifolia (होलीगेरना लांगिफोलिया)।

वर्णन—

यह एक ऊंची जाति का वृक्ष होता है इसकी छाल मुलायम पत्ते चमकीले और फूल सफेद होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वृक्ष के पिंड से एक प्रकार का काला रालदार, कड़वा और जहरीला रस बहता है। इसका यह रस एक प्रभाव शाली चर्म दाहक वस्तु होती है। इसके लगाने से शरीर के ऊपर छाला उठ जाता है।

——:+:——

बरू

नाम—

हिन्दी—बरू। बंगाल—कशमूचा। बरार—फरताल। काश्मीर—बरहम। तेलगू—गिड्डीजनु। लेटिन—Sorghum Halepence (सोरघम हेलपेंस)। अँग्रेजी—Andropogan Halepence।

वर्णन—

यह एक जाति का घास है। इसका पौधा ज्वार के पौधे की तरह मगर उससे कुछ पतला होता है। इसके पत्ते भी ज्वार के पत्तों से कुछ मिलते हुए होते हैं। इसके बीज भी ज्वार के बीजों की तरह होते हैं। यह घास जहा पैदा हो जाता है वहां से नष्ट होना बहुत मुश्किल होता है। जब लिखने के होल्डर नहीं चले थे तब लिखने के लिये इसके टुकडों की कलमें बनाई जाती थीं।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके बीज मूत्रल और शान्तिदायक होते हैं।

——:०:——

बस्ट्रा

नाम—

हिन्दी—बस्ट्रा। बम्बई—एसार। बंगाल—मेंसाडरी। तामील—कट्टुकुम्मिल। लेटिन—Callicarpa Lanata (केलीकारपालेनेटा)।

वर्णन—

यह एक ऊंची जाति की झाडी और कभी २ छोटी जाति का वृक्ष होता है। इसकी छाल भूरी, खरदरी और जगह २ से फटी हुई होती है। इसके पत्ते शाखाओं के अन्त में गुच्छों में लगते हैं। ये १५ से लेकर २३ सेंटिमीटर तक लम्बे और ७.५ से लेकर १० सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल विना डखल के होते हैं। इनका रंग कुछ २ लम्बाई लिये हुए होता है। यह वनस्पति कोकण, पश्चिमी घाट बम्बई और मद्रास प्रेसीडेंसी में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी छाल और पत्ते सुगंधित और कडवे होते हैं। इनको उबालने से इनमें से बहुत सा चिकना पदार्थ निकलता है। इन पत्तों को दूध में उबाल कर कुल्ले करने से मुह के छालों में लाभ होता है। इसकी छाल और जड को पानी में उबाल कर इसका काढ़ा बनाकर ज्वर की गर्मी को कम करने के लिये और यकृत के बढ़े हुए और यकृत के अवरोध को दूर करने के लिये दिया जाता है।

उत्तरी भारत में इसकी जड़ को चमड़े की विकृति को दूर करने के उपयोग में लिया जाता है मलाया में यह पौधा मूत्रल समझा जाता है।

——:o:——

बथुआ

नाम—

संस्कृत— वास्तुक, क्षारपत्र, शाकराट, शाकवीर, हिममोचिका, चिल्ली, चिल्लिका, इत्यादि। हिन्दी—बथुआ। बंगाल—बथुआ साग, चन्दनवेटू। गुजराती – चील, टांको। मराठी—चाकवत, चिविल। पंजाब– बथुआ। तामील—पारू पुक्कूराइ। तेलगू—पापूकुरा। इंग्लिश—Allgood'। लेटिन—Chenopodium Album (चेनोपोडियम एल्बम)। Che Olidum (चेनो ओलीडम)

वर्णन—

बथुए की शाग सारे भारतवर्ष में प्रसिद्ध है। इसका पौधा करीब हाथ भर ऊंचा होता है। इसके पत्ते हरे और बीच २ में कुछ ललाई लिये हुए होते हैं। इसकी २ जातियां होती हैं एक बथुआ और दूसरा लाल बथुआ जिसको चिल्ली कहते हैं।

गुण दोष और प्रभाव –

आयुर्वेदिक मत – आयुर्वेदिक मत से बथुआ अग्नि दीपक, मधुररसयुक्त, वात पित्त नाशक, मल मूत्र को शुद्ध करने वाला, नेत्रों को हितकारी, कृमिनाशक और कफ रोग वाले मनुष्यों के लिये विशेष हितकारी है।

बथुआ क्षारयु , कृमीनाशक, त्रिदोषनिवारक दीपन, पाचन, मधुर, सारक, रुचिवर्धक, दस्तावर नेत्रों को हितकारी, स्वर को उत्तम करने वाला, स्निग्ध, पाक में भारी और सब प्रकार के रोगों को शान्त करने वाला होता है। दोनों प्रकार के बथुए में लाल बथुआ विशेष गुणकारी होता है।

बथुआ बवासीर, त्रिदोष, अरुचि और कृमियों को नष्ट करता है। यह बुद्धिवर्धक, बलकारक जठराग्नि को तेज करने वाला, क्षार युक्त और पचने में कड़वा होता है।

लाल बथुआ कफ पित्त नाशक प्रमेह में लाभदायक मूत्रकृच्छ्र को दूर करने वाला, पथ्य और रुचिकारक होता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह पहले दर्जे में सर्द और दूसरे दर्जे में भी सर्द होता है। लाल बथुआ सर्द और खुश्क होता है। यह शरीर में कोमलता और सर्दी पैदा करता है। हर प्रकार की गर्मी की सूजन, फिर चाहे वह शरीर के अन्दर हो चाहे बाहर उसमें यह लाभ पहुंचाता है। गरमी की खांसी तथा क्षय की बीमारी में इसको बादाम के तेल में पका कर खाना चाहिये। यह यकृत की गर्मी को दूर करता है। सीने को मुलायम करता है। जल्दी हजम होता है। उम्दा खून पैदा करता है। जलोदर में मुफीद है। कब्ज को मिटा कर दस्त साफ लाता है पेट को मुलायम करता है। और पीलिये को मिटाता है।

पित्त प्रकृति वालों के लिये विशेष रूप से लाभदायक है। पित्त के प्रकोप को दूर करने के लिये चुकन्दर इत्यादि दूसरी तरकारियों से यह उत्तम है।

इसके पत्तों को पानी में उबाल कर उस पानी में शक्कर मिला कर पीने से दस्त साफ होता है और गुर्दे तथा मसाने की पथरी टूट जाती है। तथा तिल्ली की सूजन बिखर जाती है। इसके उबाले हुए पत्तों का लेप करने से गरमी की सूजन मिट जाती है। रक्त के उपद्रव, बवासीर, पेट के कीडे और सन्निपात में भी यह मुफीद है। इसके पत्तों का उबाला हुआ पानी पीने से रुका हुआ पेशाब खुल जाता है। इसके काढे से रंगीन रेशमी कपड़ों को धोने से उनके धब्बे मिट जाते हैं लेकिन रंग में फरक नहीं आता।

लाल बथुआ कुछ काबिज होता है। यह दिल को ताकत देता है। कफ पित्त और खून के उपद्रव को मिटाता है फोड़े फुन्सी को मिटाता है। तिल्ली की बीमारी और पेट के कीड़ों को दूर करता है।

बथुए के बीज समशीतोष्ण होते हैं। ये सूजन को बिखेरते हैं। इनको नमक और शहद के साथ लेने से आमाशय की सफाई होती है और दूषित पित्त निकल जाता है। गर्मी की वजह से आई हुई शरीर की सूजन में इन बीजों को पानी में पीसकर शहद में मिलाकर लेप करने से सूजन उतर जाती है।

अगर किसी के यकृत में गठान पड़ जाय और उसकी वजह से उसे पीलिया हो जाय तो ७ माशे बथुवे के बीजों को २१ दिन तक प्रतिदिन देने से यकृत की गांठ बिखर जाती है और पीलिया मिट जाता है। इन बीजों के खाने से मनुष्य की लिंगेन्द्रिय में बहुत ताकत और उत्तेजना पैदा होती है। इन बीजों को पीसकर शरीर पर मलने से शरीर के दाग और मैल साफ हो जाता है।

जंगली बथुए के १। तोले बीजों को लेकर ४१ तोला पानी में जोश दें। जब आधा पानी रह जाय तब उसे ऐसी स्त्री को जिसके पेट में छोड़ रह गया हो पिलावें तो वह छोड़ निकल जाता है। कब्ज और बवासीर में भी यह प्रयोग लाभ पहुंचाता है।

इलाजुल गुरबा में लिखा है कि १॥ तोला बथुए के बीजों को आधा सेर पानी में औटाकर जब

आधा पानी रह जाय तब छानकर किसी गर्भवती स्त्री को पिलावें तो उसका गर्भ गिर जाता है।

मुजिर—बथुआ सर्द मिजाज वालों को नुकसान पहुचाता है। इसके बीज गुदा के लिये हानिकारक है।

दर्पनाशक—गरम मसाला और चुकन्दर।

मात्रा—बीजों की ७ मासे से ६ मासे तक।

उपयोग—

तिल्ली—तिल्ली और पित्त के रोगों में बथुए का शाग बहुत हितकारी होता है।

पेट के कीडे—बथुए का रस निकाल कर उसमें नमक मिलाकर पीने से पेट के कीडे मरते हैं।

मूत्र की कमी—बथुए के स्वरस में मिश्री मिलाकर पिलाने से मूत्र वृद्धि होती है।

अर्श—बथुए का शाग खिलाने से अर्श के अन्दर लाभ होता है।

प्रसूति कष्ट—बथुए के १॥ तोले बीजों को आधा सेर पानी में औटाकर जब आधा पानी रह जाय तब उसको छान कर पिलाने से बालक होने के समय स्त्री,कष्ट से छूट जाती है।

नाडी वृण—बथुए के पत्ते और तम्बाखू के फूलों को पीसकर घी में मिलाकर लगाने से नाड़ी वृण मिटता है।

रक्त पित्त—बथुए के बीजों के चूर्ण को शहद में मिलाकर चटाने से रक्त पित्त में लाभ होता है।

—:o:—

बथुआ बिलायती

नाम—

हिन्दी—बथुआ बिलायती। लेटिन—Chenopodium Ambrosioides (चेनोपोडियम एम्ब्रोसिओइड्स)।

वर्णन—

यह एक ऊ ची जाति की बहुशाखी वनस्पति होती है। इसकी ऊ चाई ६ से ७ फुट तक होती है। इसके पत्ते २ ८ से लेकर ८ सेंटिमीटर तक लम्बे और ६ से २ ५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं।

यह वनस्पति पहले हिन्दुस्तान में पैदा नहीं होती थी। मगर कुछ दिनों से बगाल, सिलहट और दक्षिणी भारत में यह पैदा होने लगी है।

गुण दोष और प्रभाव—

दक्षिणी अमेरिका में बहुत पुराने समय से इस वनस्पति के पत्तों और बीजों का शीत निर्यास आंतों में रहने वाले परोपजीवी कीटाणुओं को नष्ट करने के लिये एक घरेलू औषधि की तरह काम में लिया जाता है।

यूरोप मे यह वनस्पति छाती के रोगों और स्नायु जाल सम्बन्धी विकार और कपवात (Chorea) के लिये उपयोग में लिया जाता है।

ब्राझील में इस वनस्पति का शीत निर्यास शान्तिदायक पसीना लाने वाला और ऋतुस्राव नियामक माना जाता है। यह कफ के दवाव, श्वास नली की रुकावट, कष्टप्रद मासिक धर्म और गर्भस्थ मृत भ्रूण को निकालने के लिये उपयोग में लिया जाता है।

गायना में इसका शीत निर्यास अग्निवर्धक, और कृमिनाशक माना जाता है।

मेडागास्कर और लॉरिनियून में इसके पौधे का रस कृमिनाशक वस्तु की तरह दिया जाता है। आक्षेप रोग, आँतों के कृमि, आमाशय का शूल, रक्त का विप्रैलापन और स्नायु विकार को दूर करने के लिये इसका वाह्य उपचार किया जाता है।

कोमान के मतानुसार इस वनस्पति का फल और इसका भबके से उड़ाया हुआ तेल कृमिनाशक वस्तु की तरह उपयोग में लिया गया। इसके बीजों का चूर्ण २० ग्रेन से ३० ग्रेन तक की मात्रा में दिया गया मगर उन कृमियों के ऊपर कोई असर नहीं हुआ। मगर इसका तेल १० मिनिम की मात्रा में देने पर पेट के चुरनिये (Hookworm) मर गये।

——:o:——

बटसिजल

नाम—

पंजाव—बटसिजल, चेतरनी, कारी, कुजी, मिमारारी, रगक, ताद्रू, तांद्रा, तुनानी, फनानी। लेटिन—Rhamnus Purpureus (रेमनस परपूरीयस)।

वर्णन—

यह एक ऊँची जाति की झाड़ी होती है और कहीं २ छोटे वृक्ष का रूप धारण कर लेती है। इसकी छाल भूरी, और मुलायम होती है। इसके पत्ते चमकदार होते हैं। इसके फूल कुछ हरापन लिये हुए होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में काश्मीर से कुमाउँ तक ६ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसका फल विरेचक वस्तु की तरह काम में लिया जाता है।

——:o:——

बट्टल

नाम—

पंजाब—बट्टल, दुधलक, तारीफा। लेटिन—Launaea Nudicaulis (लोनेया नूडीकोलिस)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके पत्ते ५ से लेकर २५ सेंटिमीटर तक लम्बे और २.५ से ७.५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति के पत्तों को पीसकर सिर पर लेप करने से बच्चों का ज्वर दूर हो जाता है।

——:o:——

बटुला

नाम—

पंजाब—बटुला, कालीजीरी। लेटिन—Saussurea Candicans (सुसारिया कॅंडिकेन्स)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। यह हजारा काश्मीर और भूटान में २ हजार फीट से लेकर ७ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके बीज शांतिदायक होते हैं। पंजाब के लिये यह वनस्पति घोड़ों के लिये उपयोग में ली जाती है।

——.o:——

बटवासी

नाम—

सिक्किम—बटवासी। लेटिन—Gouania Leptostachya (गोनिया लेप्टोस्टेच्या) तेलगू—पेनकिटीजे। उड़िया—खांटा। नेपाल—बटवासी।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति की झाड़ी होती है। इसकी डालियां मुलायम, चमकीली और पास २ लगी हुई होती हैं इसके पत्ते ५ से लेकर १० सेंटिमीटर तक लम्बे और ३.८ से ६.३ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। यह वनस्पति पंजाब के कांगड़ा डिस्ट्रिक्ट से कुमाऊँ तक और आसाम की खासिया पहाड़ियों पर ३ हजार फीट से लेकर ४ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके पत्तों का पुल्टिस बना कर व्रण के ऊपर बांधने के काम में लेते हैं।

——:o:——

बरून

नाम—

संस्कृत—वरुण, वरना, अजापा, अश्मरिघ्न, बृहत्पुष्पा, कुमार, महाकपित्थ, मारुतापह, पासुंदा,

साधुवृक्ष, सेतुक सेतुवृक्ष, शिखिमडल, तमाल, तिक्तशाक, इत्यादि हिन्दी—बरुन, बरना, बिला, बिलासी इत्यादि । बङ्गाल—वरुन तिक्तशाक । बम्बई—वायवरना, मटावरना, हेदवरना, कर्वान, कुत्रला । गुजराती—वरनो, बायवरनो । मराठी—हरावरना, कुत्रला, कारवान, वायवरना। तामील—माविलिंगू । मध्यप्रांत—राजवेल, वेला । उर्दू—बरना । लेटिन—Crataeva Religiosa (क्रेटेवा रिलिजिओसा), C. Nurvla (के. नुरवला) । इङ्गलिश—Holy Garter Pear ।

वर्णन—

यह एक मध्यम क़द का वृक्ष होता है । इसके पत्ते वेल के पत्तों की तरह तीन २ साथ लगते हैं । इसके फूल सफेद, गुलतुर्रे के फूलों की तरह होते हैं । इसके फल सुपारी के आकार के होते हैं । इसकी छाल सफेद होती है । इसके पत्तों को मसलने पर उनमें बड़ी उग्र गंध आती है । यह वृक्ष दक्षिणी मलाबार और करनाटक में अपने आप पैदा होता है । मगर उत्तरी हिन्दुस्तान में इसको लगाकर इसकी परवरिश की जाती है ।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत से बरना चरपरा, गरम, रुधिर विकारनाशक, शीत वात निवारक, स्निग्ध, दीपन तथा विद्रधि और वात विनाशक है।

वरना वात और शूल नाशक, दस्तावर, गरम और पथरी को दूर करने वाला होता है । वरना के फूल मलरोधक, पित्तनाशक और आमवात को दूर करने वाले होते हैं । बरना के फूल सारक, भारी, पचने में मधुर, स्वादिष्ट, स्निग्ध, गरम तथा वात, पित्त और कफ को नष्ट करते हैं ,

संस्कृत के अन्दर बरना का नाम अश्मरिघ्न दिया गया है । यह नाम सार्थक है । क्योंकि इसकी क्रिया मूत्र यन्त्रों के ऊपर प्रधान रूप से होती है । पथरी, वस्ति शूल, मूत्रकृच्छ, सुजाक, इत्यादि रोगों में इसकी छाल को देने के बहुत रिवाज हैं । यह छाल अपामार्ग, पुनर्नवा, गोखरू, जवखार, मुलैठी, इत्यादि मूत्रल औषधियों के साथ दी जाती है । बाह्योपचार में चमड़े के ऊपर इसकी क्रिया राई के समान होती है । इसके ताजे पत्तों को पीसकर त्वचा पर बांधने से त्वचा लाल हो जाती है और कभी २ उस पर छाला भी उठ जाता है ।

इसकी छाल कुछ मूत्र सम्बन्धी शिकायतों और ज्वर तथा चर्म सम्बन्धी रोगों के कुछ साधारण प्रकारों में उपयोगी होती है । यह वमन को बन्द करती है और जठराग्नि के प्रदाह को भी यह दूर करती है । इसके ताजा पत्ते और इसकी जड़ की छाल ऐसी तमाम सूजनों के ऊपर जिनमें कि सरसों की पुल्टिस बांधी जाती है बहुत उपयोगी सिद्ध होते हैं ।

सीलोन में इसके पत्ते संधियों की सूजन पर काम में लिये जाते हैं । बम्बई में पावों की प्राचीन सूजन और उसमें होने वाली जलन को दूर करने के लिये इसके पत्तों का उपयोग किया जाता है ।

गंडमाला में इसकी छाल का काढा शहद मिलाकर दिया जाता है और इसकी छाल का लेप भी किया जाता है। व्रण शोथ और विद्रधि में इसकी छाल पुनर्नवा के साथ देते हैं।

ज्वर के अन्दर भ्रम पैदा होने पर इसकी छाल को कुचलकर मस्तक पर बांधते हैं। जिससे वहां पर पालन होकर भ्रम निकल जाता है। लेप हटाने के पश्चात उस हिस्से को ठण्डे पानी से धोकर तेल लगा देने से फोड़ा नहीं उठता है।

कोकण में इसका रस सधिवात में देते हैं। नाक की हड्डियों की सड़ान में इसके पत्तों का धूम्र-पान करने से और उस धुएँ को नाक के रास्ते निकालने से लाभ होता है।

उपयोग—

पैरों की सूजन—इसके पत्तों को पीसकर गरम करके लेप करने से पैरों की सूजन मिटती है।

गठिया—इसके एक तोला रस में सुपारी के पत्तों का रस और घी मिलाकर पिलाने से गठिया में लाभ होता है। इसके पत्ते और छाल को पीसकर पोटली में बांधकर गरम करके सेंक करने से भी गठिया में लाभ होता है।

पथरी—इसकी जड़की छाल का क्वाथ पिलाने से शर्करा पथरी मिटती है। इसकी छाल के क्वाथ में जौ खार मिलाकर पिलाने से कफ से पैदा हुई पथरी मिटती है। इसके क्वाथ में गुड़ मिलाकर पिलाने से वस्तीशूल और पथरी मिटती है।

गंडमाल—इसके क्वाथ में शहद मिलाकर पिलाने से गंडमाला मिटती है।

मूत्र सम्बन्धी रोग—इसकी १० तोला छाल को १५ छटाक जल में औटावें जब १० छटाक पानी रह जाय तब उसको छानकर ५ से १० तोले तक की मात्रा में पिलाने से मूत्र सम्बन्धी कई रोग मिटते हैं।

—:o:—

बलाया

नाम—

संस्कृत- बलाया। तामील—व्हिलूटी। तेलगु—चेकोनदी। लेटिन—Cadaba Trifoliata (केडेबा ट्रिफोलिएटा)।

वर्णन—

यह एक बड़ी और बहुशाखी झाड़ी होती है इसकी छाल मुलायम और भूरी होती है। इसके पत्ते २८ से ७५ सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल बहुत छोटे होते हैं। इसका फल मुलायम, चिकना और हरा होता है इसके बीज गुर्दे के आकार के होते हैं,

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत से इसकी जड़ और पत्ते विरेचक, ऋतुस्राव नियामक, कृमिनाशक और सूजन

को नष्ट करने वाले होते हैं। ये बच्चों के अजीर्ण स्त्रियों के नष्टार्तव और संधियों के जोड़ों के दर्द में उपयोगी होते हैं।

——:०:——

बसन्त

नाम—

हिन्दी—बसत, डेंढू। पजाब—बसत, डेंढू। उर्दू—बालसन। अंग्रेजी—Amber, Grace of God। लेटिन—Hypericum Perforatum (हायपेरिकम परफोरेटम)

वर्णन—

यह एक वर्ष जीवी वनस्पति होती है। यह पश्चिमी हिमालय में काश्मीर से शिमला तक ४ हजार फीट से ६ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानी मत से इसके पत्ते तीक्ष्ण और कुछ कड़वे होते हैं। ये अग्निवर्धक, मृदु-विरेचक और कृमिनाशक, होते हैं। कर्ण पीड़ा और बिच्छू के बिष में भी ये उपयोगी हैं। इसकी छाल मूत्रल और बवासीर तथा मूत्र सम्बन्धी शिकायतों को दूर करने वाली होती है।

यह वनस्पति कड़वी और संकोचक होती है। इसमें शोधक, कृमिनाशक, मूत्रल और ऋतुश्राव नियामक धर्म रहते हैं। बाहरी प्रयोग में त्वचा के लिये यह एक उत्तेजक वस्तु है।

मुसलमानी हकीम इसको कृमिनाशक और बवासीर के लिये लाभदायक औषधि मानते हैं।

इसमें पाया जाने वाला रस योरप के अन्दर जख्म, चोट, रगड़ और मोच के ऊपर लेप करने के लिये एक बहुत ही लोकप्रिय और लाभदायक वस्तु समझी जाती है।

इसका शीत निर्यास फेफड़े से सम्बन्धित प्राचीन जुखाम, आंतों की शिकायत और मूत्र मार्ग की शिकायतों में बहुत सफलता के साथ उपयोग में लिया जाता है।

——:०:——

बचेटा

नाम—

संस्कृत—वनभेंडा। हिन्दी – बचेटा। बंगाल—वेनोचटा। मराठी—वनभेंडा, रत्नपुकुड़ा। काठियावाड़—वगड़ाऊ भिंडी, स्वण भिंडी। सीमाप्रान्त—बचीटा। तामील—ओटट्टी। तेलगू—पेड्डा वेंडा। देहरादून—उंगा। लेटिन—Urena Lobata (यूरेना लोबेटा)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति का क्षुप होता है। इसके पौधे १ फुट से २ फुट तक लम्बे होते हैं जो वरसात

में घास के साथ बहुत पैदा होते हैं। इसके पत्ते २ या ३ खांचे वाले होते हैं। इसके फूल हल के गुलाबी रंग के होते हैं। इसका फल पांच खाने वाला होता है इस पर टेढी नोक वाले कांटे लगते हैं इस पौधे का आकार भिंडी के पौधे की तरह होता है और इस में सन की तरह बारीक रेशे निकलते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

कॅंपबेल के मतानुसार छोटे नागपुर में इसकी जड़ सधिवात के ऊपर लेप करने के काम में ली जाती है।

कार्टर के मतानुसार लखीमपुर में इसकी जड़े एक लोकप्रिय मूत्रल औषधि मानी जाती है।

ब्राझील में इसकी जड़ और डालियों का काढ़ा वायुनलियों से सम्बन्धित उदर शूल में उपयोग में लिया जाता है और इसके फूल सूखी खांसी में कफ निस्सारक वस्तु की तरह दिये जाते हैं।

गोयेना में इसके फूलों का निर्यास मुखक्षत और गले की खराबी को दूर करने के लिये कुल्ले करने के काम में लिया जाता है।

——:०:——

बनकोष्ट

नाम—

संस्कृत—मोरुप पत्रिका, दीर्घ पत्री, चचु, कलाभि, शुष्क इत्यादि। बंगाल—बन पाट, जंगली पाट। बंबई—हिरन खुरी, मोटी बहुफली। मराठी—हिरनखुरी। मुन्ना—मगर मिथो। काठियावाड़ उभी बहुफड़ी, खाटी गिसोड़ी, कड़वी जीरी। गुजराती—छू छड़ो, उभी बहुफली। लेटिन—Corchorus Fascicularis (कोरचोरस फेसीक्यूलेरिस)।

वर्णन—

यह जूट के वर्ग की एक वनस्पति होती है। इसके पौधे १ से लेकर २ फीट तक होते हैं। इसके पत्ते सण के पत्तों की तरह होते हैं। इसके फूल पीले, फलियां आधे से पौन इंच तक लम्बी और ३ खडवाली होती हैं। इन फलियों में बहुत बीज भरे रहते हैं। इसके बीज कड़वे, चिकने और कुछ काले होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से इसका पौधा मीठा गरम, तीक्ष्ण, कड़वा आंतों के लिये संकोचक, अर्बुद और उसके दर्द को दूर करने वाला, बवासीर में लाभदायक, स्नेहन, सग्राहक और बल वर्धक होता है। यह अतिसार को दूर करता है। इसके पत्ते स्वादिष्ट, शीतल, मृदु विरेचक, उत्तेजक, पौष्टिक, कामोद्दीपक और त्रिदोष को दूर करने वाले होते हैं। इसके बीज गरम, तीक्ष्ण, अर्बुद और दर्द को नष्ट करने वाले और चर्म रोग, गीली खुजली में लाभदायक है। N P सुश्रुत के मतानुसार इसका पौधा कृमि नाशक होता है और यह बहते हुए जखम पर उपयोगी होता है।

सुजाक में इसका काढ़ा देने से जलन कम होती है, पेशाब की मात्रा बढती है और मूत्र नालिका की श्लेष्म त्वचा अपनी पूर्व स्थिति में आ जाती है।

———

बहुफली

नाम—

संस्कृत—मेदनी, चञ्चु, क्षुद्रचंचु, पट्ट पत्रिका । हिन्दी—बहुफली । गुजराती—बहुफली । मराठी—बहुफली । इंगलिश—Shrubby Jute । लेटिन—Corchorus Acutagularis (कोरचोरस एक्यूटेग्यूलेरिस), C. Depressus (को० डिप्रेसस) ।

वर्णन—

यह भी सन या जूट के वर्ग की वनस्पति होती है । इसके पौधे बरसात के दिनों में बहुत उगते हैं । ये एक से दो फीट तक ऊंचे होते हैं और इनमें से बहुत सी शाखायें निकल कर जमीन पर फैल जाती हैं । इसके पत्ते दूर २ लगते हैं और ये २ से ३ इंच तक लम्बे और आधे से १॥ इंच तक चौड़े होते हैं । इसके पत्ते कंगूरेदार होते हैं । इसके पत्तों के डखल पर और पत्तों पर बारीक २ रुऐं निकले हुए रहते हैं । इसके पत्तों का स्वाद चिकना और कुछ कड़वा पन लिये हुए होता है इसके फूल पीले रंग के और फलियां ६ धारी वाली होती हैं ।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बहुफली तीक्ष्ण, गरम, कसेली, मलरोधक, उदर रोग, शूल और बवासीर को दूर करने वाली तथा विष नाशक होती है ।

धातु की कमजोरी और बहुफली—इस वनस्पति के अन्दर पौष्टिक और धातु वर्धक तत्व काफी मात्रा में रहते हैं और इसका कारण यह धातु की निर्बलता और उससे आने वाली कमजोरी, कमर और पैरों की पिंडलियों में होने वाली जलम, हाथ पैरों की जलन, सिर के चक्कर, छाती की धड़कन, स्मरण शक्ति का नाश, पेशाब तथा स्वप्न के साथ धातु का पतन इत्यादि धातु की कमजोरी से होने वाले उपद्रवों में यह बहुत अच्छा लाभ बतलाती है । इसके सेवन से धातु की वृद्धि होती है शरीर पुष्ट होता है और इन्द्रियो में नवीन बल उत्पन्न होता है ।

इस औषधि को उपयोग में लेने की विधी इस प्रकार है । बहुफली के ताजा पौधे को लेकर थोड़े से पानी के साथ पीस कर कपड़े में दबा कर उसका चिकना रस निकाल लेना चाहिये । इस रस को १ औंस की मात्रा में लेकर उसमें १ तोला शक्कर और ६ रत्ती पीपर का चूर्ण मिला कर प्रति दिन सबेरे शाम पीना चाहिये । अगर ताजी बहुफली न मिले तो सूखी बहुफली को लेकर उसको कूट कर पानी में दो घन्टे तक भिगो कर, फिर उस पानी को खूब मसल कर कपड़े में छान लेना चाहिये । उस लुआब में शक्कर और पीपर का चूर्ण मिला कर पीना चाहिये ।

यह वनस्पति पुरुषों की तरह स्त्रियों के प्रदर रोग को मिटाने के लिये अकसीर मानी जाती है और इस रोग में भी इसका उपयोग ऊपर बताई हुई विधी से ही किया जाता है ।

इस वनस्पति में ग्राही और शीतल गुण होने की वजह से सुजाक में होने वाली जलन, संग्रहणी, अतिसार और बवासीर में होने वाली वेदना को भी दूर करने के लिये इसका उपयोग किया जाता है। पुरातन प्रमेह के रोग में भी बहुफली के पत्तों का रस या उनका चूर्ण बहुत लाभ पहुँचाता है। संग्रहणी के रोग अच्छे होते हुये रोगियों को इसके पौधों का काढ़ा, छोटी पीपर के चूर्ण के साथ देने से अच्छा लाभ होता है। इसके बीजों का चूर्ण ३ माशे की मात्रा में सवेरे शाम ठंडे पानी के साथ देने से त्वचा के रोग, खुजली, उदर शूल और जहरी चूहे के विष में बहुत लाभ होता है।

यह औषधि संकोचक होने की वजह से कुछ कब्जियत पैदा करती है। इस कारण इसके प्रयोग के साथ ही अगर शाम को सोते वक्त १ मात्रा त्रिफला के चूर्ण की लेली जाय तो इसका यह दोष दूर हो जाता है।

बनावटें—

धातु पौष्टिक चूर्ण—सालवी मीसरी ४ तोला, कौंच के बीज की मगज ८ तोला, छोटी पीपर ४ तोला, शतावरी ४ तोला, विदारीकन्द ८ तोला, असगन्ध १२ तोला और तज, तमाल पत्र, इलायची, नागकेशर, सूखे हुए आंवले, लोंग, कमल का कन्द, तालमखाने के बीज, सफेद मूसली, वंशलोचन, गिलोय का सत्व, सेमर की पतली जड़ें, तुलसी के बीज, लाल चन्दन, कंट कटारे के बीज, और मुलेठी। ये सब चीजें चार २ तोला लेकर इन सबका इकट्ठा चूर्ण कर लेना चाहिये फिर जितना इस चूर्ण का वजन हो उससे आधा बहुफली का चूर्ण उसमें मिलाकर मजबूत काग वाली शीशी में भर देना चाहिये।

इस चिन्तामणि नामक ग्रन्थ के कर्ता यति अनन्तदेव सूरि लिखते हैं कि इस चूर्ण में से प्रति दिन ३ माशे से ६ माशे तक चूर्ण बराबर मिश्री मिलाकर १० तोला दूध के साथ पीने से मनुष्य के वीर्य में बहुत वृद्धि होती है। जिन लोगों का वीर्य क्षीण हो गया हो अथवा सूख गया हो, जिनको बारबार धातु पतन होता हो अथवा हस्त मैथुन की वजह से जिनकी कामेन्द्रिय शिथिल होगई हो और उसमें काम का वेग पैदा नहीं होता हो ऐसे लोगों के लिये यह औषधि अमृत के तुल्य है। मगर इच्छित फायदा होने तक २। ४ महिने धीरज के साथ इसका सेवन करना चाहिये और जब तक यह औषधि चलती रहे तब तक खारे, खट्टे, तीखे और तेल वाले पदार्थों को छोड़ देना चाहिये और पूर्ण ब्रह्मचर्य से रहना चाहिये। —[जगल नी जड़ी बूटी]

——:o:——

बखिया मेला

नाम—

नेपाल—बकिया मेला। पंजाब—अरखार, अरकोल, चेचर, दूदला, डुलाचिंग, कक्कारी, कक्केरन, काशिन, रस्ट्ट, वात्रीवश। रानीखेत—घरमिल। गढ़वाल—घफेला, दफेल। सीमाप्रान्त—दखमिला। लेटिन—Rhus Semialata (रस सेमिलेटा)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाती का झाड़ीनुमा वृक्ष होता है। इसके पत्ते २५ से लेकर ४५ सेन्टिमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल कुछ पीलापन लिये हुए हरे होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में ३ हजार फीट से ७ हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इस का फल कालिक उदरशूल और अतिसार में लाभदायक होता है। चीनी लोग इस वनस्पति को कफ निस्सारक और संकोचक वस्तु की तरह काम में लेते हैं। सूजन और जखम पर वे इसका बाहरी लेप करते हैं। अनाम में यह वनस्पति लकवे या अर्धाङ्ग के ऊपर उपयोग में ली जाती है।

——:o:——

बनापू

नाम—

कनाड़ी—बनापू। तामील—सदागम। इङ्गलिश—Leathery Murdah। लेटिन—Terminalia Coriacea (टर्मिनेलिया कोरीसीआ)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। इसके पत्ते १५ सेन्टिमीटर तक लम्बे और ११ सेन्टिमीटर तक चौडे होते हैं। इसके फूल छोटे और पीले रङ्ग के होते हैं। इसके फल पीलापन लिये हुए भूरे रङ्ग के होते हैं। यह वनस्पति मद्रास प्रेसीडेन्सी और दक्षिण के सूखे पहाड़ों पर पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

केस, महस्कर और इसहाक के मतानुसार इस वृक्ष की छाल एक प्रभावशाली हृदय को उत्तेजना देने वाली वस्तु होती है।

——:o:——

बगा फटकल

नाम—

आसाम—बगाफटकल। लेटिन—Osbeckia Nepalensis (ओसबेकिया नेपालेन्सिस)।

वर्णन—

यह एक झाड़ी होती है। इसके पत्ते ७.५ से १० सेन्टिमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल सफेद रंग के होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में नेपाल के पूर्वी हिस्से में और खासिया पहाड़ियों पर पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

कार्टर के मतानुसार इस वनस्पति के फूल पीस कर बच्चों के मुंह के छालों पर लगाने के काम में लिये जाते हैं।

——:o:——

वन कुंदरी

नाम—

छोटा नागपुर—वनकुन्दरी। लेटिन—Melothria Perpusilla (मेलोथ्रिया परफुसिला)।

वर्णन—

यह एक पराश्रयी लता होती है। जो नेपाल, पूर्वी बंगाल, पूर्वी हिमालय में ५ हजार फीट की ऊंचाई तक, आसाम, कोंकण और दक्षिण तथा पश्चिमी घाट में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति की जड़ दूध के साथ ज्वर और अतिसार को रोकने के लिये दी जाती है।

——:o:——

बादवर्द

नाम—

पंजाब—बदवर्द, कंछारी, टिसो। काश्मीर—गुले बदवर्द। उर्दू—गुले बदवर्द। अंग्रेजी—Bank Thistle लेटिन—Carduus Nutans (कार्डस नूटन्स), Uolutarella Divaricata (व्हौल्यूटेरेला डिवेरिकेटा)

वर्णन—

यह एक कांटेदार वनस्पति होती है। इसका पौधा गोखरू के पौधे से मिलता हुआ होता है। मगर इसका रंग कुछ सफेद होता है। इसकी डाली गोल, पतली और सफेद रङ्ग की होती है। इस सारे पौधे पर बारीक २ रुआँ होता है। इसके फूलों का रंग सफेद और नीला होता है। इसका बीज कुसुम के बीज की तरह होता है। इसका फल गोखरू की तरह कांटेवाला होता है। इस फल के अन्दर रुई की तरह एक वस्तु होती है जो फल के टूटने पर हवा में उड़ जाती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह पहले दर्जे में सर्द और खुश्क होता है। इसके गुण धर्म धमासे के गुण धर्म से मिलते जुलते होते हैं। इसमें सूजन को बिखेरने की शक्ति होती है रक्तस्राव को भी यह बन्द करता है। यह थोड़ी सी काब्जि भी होती है। इसकी जड़ का लेप कफ की सूजन को बिखेर देता है। इसके ६ माशा बीजों को खाने से धनुर्वात, खांसी और कमर का दर्द मिट जाता है इसकी जड़ और पत्तों को पीने से अर्द्धांग में लाभ होता है। इसको पानी में जोश देकर कुल्ले करने से दांतों का दर्द और मसोड़े की सूजन मिटती है। इसकी जड़ और पत्तों को पीने से कफ के साथ खून आना बन्द हो जाता है। यह आमाशय और यकृत की कमजोरी को दूर करके मल की गठानों को दस्त की राह निकाल देता है। इसके पत्तों का शराब में काढ़ा करके पीने से निमोनिया और मधुसी में लाभ होता है। आमाशय की खराबी से अगर किसी को दस्त होते हों तो इसकी जड़ और पत्ते देने से बन्द हो जाते हैं। इसका

हुआ पेशाब और मासिक धर्म भी इससे खुल जाता है। इसके निरंतर सेवन से पथरी गल जाती है। जलोदर और पीलिया में भी यह मुफीद है। कफ के पुराने ज्वर को दूर करने की इस बनस्पति में बड़ी तासीर है।

गाजरूनी का कहना है कि अगर आमाशय में कमजोरी आजाय अथवा आमाशय में गर्मी पैदा होकर ज्वर आ जाय तो ऐसे ज्वर को निकालने में बादआवर्द एक उत्तम वस्तु है। साँप और बिच्छू के विष पर इसको चबाकर लगाने से लाभ होता है।

मुजिर--इसका अधिक सेवन फेफड़े और मस्तिष्क को नुकसान पहुंचाता है।

दर्पनाशक--अफसतीन और तुख्म काहू।

प्रतिनिधि --धमासा और पित्त पापड़ा।

मात्रा--पत्तों की ४॥ माशे से ५॥ माशे तक, जड़ की १७॥ माशे तक, बीज की ६ माशे तक और इसके पत्तों के रस की ३॥ माशे तक है।

——:०:——

वनमल्लिका

नाम—

संस्कृत—बन मल्लिका, बासन्ती, माधवी, आस्फोटा, कानन मल्लिका, प्रिया सुपूजा, वनमालि। हिन्दी--बन मल्लिका, म्शारी। मराठी--कुसर। तामील--कावा, मरुगु, मुलाई, बनमालीगाई। तेलगू--लिगामाले, अड्‌वीमल्ले। लेटिन -Jasminum Angustifolium (जेसमिनम ऑगस्टिफोलियम)।

वर्णन—

बनमल्लिका की बड़ी और झाड़ी नुमा बेल होती है। इसके पत्ते जुही के पत्तों की तरह मगर उनसे कुछ बड़े होते हैं। फूल सफेद, बहुत सुगंधित, जूही के फूलों की तरह मगर उनमें कुछ बड़े होते हैं। औषधि प्रयोग में इस वनस्पित की जड़ और पत्ते काम में आते हैं।

गुण दोष और प्रभाव--

आयुर्वेदिक--आयुर्वेदिक मत से इसका फूल कड़वा, कसेला, कुछ मीठा, शीतल होता है। यह हृदय रोग, मधु प्रमेह, पित्त विकार, शरीर की जलन, प्यास, चर्म रोग, रक्त रोग, दंत पीड़ा, नेत्र रोग में लाभदायक है।

वन मल्लिका फुफ्फुस और श्वास नलिका की सूजन में उपयोग में ली जाती है। निमोनिया रोग में इसके पाँच पत्तों का स्वरस, ७ काली मिरच, ७ लहसन की गुली, आधा तोला सहजने की जड़ का रस और २ तोले शहद मिलाकर देने से बड़ा लाभ होता है। यह मात्रा सशक्त मनुष्य के लिये है। मनुष्य की शक्ति के अनुसार इसमें कमी ज्यादा की जा सकती है। यह एक तीव्र औषधि है। इससे

कफ पतला होकर दस्त और वमन की राह से निकल जाता है। छोटे बच्चों के निमोनिया में इसके पत्ते का चौथाई टुकड़ा, काली मिरच के २।३ दाने और एक रत्ती सुहागी शहद में मिलाकर देते हैं। कोकण में इस औषधि को उपयोग में लेने का बहुत रिवाज है और इससे कभी किसी प्रकार की हानि होती देखी नहीं गई। हानिग्वरगर के मतानुसार इसकी जड़ दाद के ऊपर बहुत उपयोगी है।

——:o:——

बरारा

नाम—

पंजाब—बरारा, बर्टी, बटा। अफगानिस्तान—हुमहुमा। सिन्ध—बुरेई। लेटिन – Periploca Aphylla (पेरिप्लोका एफिला)

वर्णन—

यह एक खड़ी रहने वाली बहुशाखी झाड़ी होती है। इसके हर एक अंग में दूधिया रस भरा हुआ रहता है। अक्सर करके इसके पत्ते नहीं होते। कहीं २ वे दिखलाई देते हैं। जो ६ मिलीमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल सुगंधित, चिकने और बड़े होते हैं। यह वनस्पति पंजाब के मैदानों में विशेष रूप से पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

स्टुअर्ट के मतानुसार सिंध में इसका दूधिया रस गठान और सूजन के ऊपर लगाया जाता है इस्ट ड्यूलर के मतानुसार इसकी छाल का काढ़ा विरेचक वस्तु की तरह उपयोग में लिया जाता है।

——:o:——

बाधार

नाम—

संस्कृत—गोपा भद्रा, विकारिणी। हिन्दी—बघारा। गुजराती—लटके सरनू झाड़। मराठी—लहानशीवण। पंजाब—बघारा। बिहार—मेदेरा। उर्दू—बघारा। उड़िया—गोम्मारि, गोपू गोम्मारी। तामील—कदवेल। तेलगू—नेलगुमद्दू। लेटिन—Gmelina Asiatica (मेलिना एसियाटिका)

वर्णन—

यह एक सुन्दर जाति का झाड़ी नुमा वृक्ष होता है। इसकी छाल कुछ पीलापन लिये हुए सफेद होती है। इसके पत्ते २.३ से ८ सेंटिमीटर तक लम्बे और १.२ से २.५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल पीले रंग के बहुत सुन्दर होते हैं। यह वृक्ष बगीचों की सुन्दरता बढ़ाने के लिये उनमें लगाया जाता है। दक्षिण और सीलोन में यह अपने आप भी पैदा होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से इसकी जड़ कामोद्दीपक और कफ निस्सारक होती है। जोड़ों के दर्द की चिकित्सा

में इसका बहुत उपयोग होता है।

कनाइलालदे के मतानुसार इसकी जड़ प्रमेह और मूत्राशय की व्याधियों में यह उपयोग में ली जाती है।

इसकी जड़ शान्तिदायक, घातुपरिवर्तक, सकोचक और सुगन्धित होती है। यह सधिवात, कटिवात और उपदश जनित विष से होने वाली दूसरी बीमारियों में उपयोग में ली जाती है। सुजाक और मूत्राशय के प्रदाह में यह विशेष रूप से उपयोग में ली जाती है।

कम्बोड़िया में इस वनस्पति का निर्यास फफोले उठने के ऊपर उपयोग में लिया जाता है।

——:o:——

बनोगाल

नाम—

पंजाब—बनोगाल। लेटिन— Fagopyrum Cymosum (फेगोपिरम सिमोसम)।

वर्णन—

यह वनस्पति हिमालय में ५ हजार फीट से ११ हजार फीट की ऊंचाई तक होती है। यह एक प्रकार का धान्य होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके दाने कॉलिक उदर शूल पित्तज अतिसार और उदर सम्बन्धी बाधाओं में पथ्य के रूप में दिये जाते हैं।

——:o:——

बन्दाल

नाम—

संस्कृत—गन्धमादिनी, जीवतिका, कामवृक्ष, कामिनी केशरूपा, नीलवल्ली, नीलवरण, पादपरुहा, परपुष्टा, पराश्रया, पुत्रिणी, शेखरा, श्यामा, वांदा, वृक्षभक्षा इत्यादि। हिन्दी—बन्दाल, पानु, पांडु, वांदे। मध्यप्रान्त—वांदा। बङ्गाल—परगच्छा, वांदु, मन्दादा। गुजराती—वांदो। मराठी—बांदा, कामरुख। लेटिन—Viscum Articulatum (विस्कम आर्टिक्युलेटम)।

वर्णन—

यह वनस्पति दूसरे वृक्षों पर पैदा होती है इसके पत्ते नहीं होते। मगर इसकी शाखाएँ इतनी पतली और चपटी होती हैं कि वे पत्तों की तरह दिखलाई देती हैं। इसकी शाखाओं की संधियों के पास दोनों तरफ छोटे २ फूल आते हैं। ये फूल रस भरे होते हैं। यह वनस्पति जामुन, धामन, अरीठा, शीसम इत्यादि वृक्षों पर विशेष रूप से पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से वन्दाल शीतल, कड़वा, कसेला, मधुर रस युक्त, कामोदीपक, धातुपरिवर्तक होता है। यह कफ, वात, रक्त रोग, तृषा, मृगी, और पित्त विकार में लाभ दायक है।

छोटे नागपुर में इस वनस्पति को ऐसे ज्वर में जिसके साथ शरीर के अवयवों में दर्द रहता है, दी जाती है।

——:o.——

बलूत (बंज)

नाम—

हिन्दी—बंज, बलूत, बन। पंजाब—बन, बंज, दधुनबन, सरपत सेराई, खारशू, मारू, रिन, रिंज, नारी। काश्मीर—शिवार, शिला सुपारी। इङ्गलिश—Grey Oak। लेटिन—Quercus Incana (क्वरकस इनकेना)

वर्णन—

यह एक हमेशा हरा रहने वाला वृक्ष होता है। इसकी छाल गहरे भूरे रङ्ग की होती है। इसके पत्ते ७.५ से १५ सेन्टिमीटर तक लम्बे और २.५ से ५ सेन्टिमीटर तक चौड़े होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में ४॥ हजार से ७॥ हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति के फलों को पंजाब में बलूत कहते हैं। यह फल सुजाक में मूत्रल वस्तु की तरह दिया जाता और मन्दाग्नि, अतिसार, बच्चों के अतिसार और दमे के रोग में इसका एक संकोचक वस्तु की तरह उपयोग होता है। इस फल को उपयोग में लेने के पहिले इसके कड़वे तत्व को नष्ट करने के लिये यह जमीन में गाड़ दिया जाता है और फिर वहां से निकाल कर धोकर उपयोग में लिया जाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह पहले दर्जे में सर्द और दूसरे दर्जे में खुश्क होता है। यह पागल पन में लाभ देता है। आमाशय की खराबी से होने वाली मतली को रोकता है। पेचिश और आंतों के जखम में लाभदायक है। इसको पीसकर गर्भाशय में रखने से श्वेत प्रदर में लाभ होता है। दो हिस्से बलूत और एक हिस्सा कुंदर को पीसकर जैतून के तेल के साथ मिलाकर लेने से बार २ पेशाब का आना, बून्द २ पेशाब का आना या सोते में पेशाब का आना बन्द हो जाता है।

इब्नजहीर का मत है कि बलूत को पुरानी शराब में पीसकर बालों पर लगाने से बाल काले हो जाते हैं और उनकी जड़े मजबूत हो जाती हैं। इसके दरख्त की जड़ को छाया में सुखाकर उसको

पीसकर गर्भाशय में रखने से श्वेत प्रदर बन्द होता है। इसके पत्ते संकोचक होते हैं। इनको पीसकर जखम पर भुर-भुराने से जखम सूख जाता है। शरीर से खून का बहना भी बन्द हो जाता है।

बलूत में एक दुर्गुण यह है कि इसको खाने से सिर दर्द पैदा होता है क्योंकि इस में गाढ़ापन होने से यह आमाशय में जाकर गैस पैदा करता है और वह गैस सिर के तरफ जाकर सिर में दर्द पैदा करती है।

मुजिर—इसको ज्यादा खाने से पेट फूलता है। आमाशय में गाढ़ापन आता है। सिर दर्द पैदा करता है। वायु बढ़ाता है और सुद्दे पैदा करता है।

दर्प नाशक—शिकन्जबीन और शक्कर।

प्रतिनिधि—खरनूब।

मात्रा—४॥ माशे से २ तोले तक।

——:o:——

बजरठ

नाम—

नेपाल—बजरट, बदग्रट, फ़ारसिंघाली, शोलशो। लेटिन—Quercus Lamellosa (करकस लेमेलोसा)।

वर्णन—

यह भी एक बहुत बड़ा हमेशा हरा रहने वाला वृक्ष होता है। यह नेपाल, सिकिम, भूटान और मनीपुर में पैदा होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी छाल और इसका फल एक संकोचक वस्तु की तरह उपयोग में लिये जाते हैं।

——:o:——

बहन

नाम—

पंजाब—बहन, बेटी, भान, भानी, जंगलीबेंटी, लभान, सफेदर। बंबई—बान, बहन। सिंध—बहने, भान, सफेदा। लेटिन—Populus Euphratica (पापूलस इफ्रेटिका)।

वर्णन

यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। जो सिंध, पंजाब और उत्तर पश्चिम हिमालय में १३॥ हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

पंजाब और सिंध में इस की छाल संकोचक वस्तु की तरह काम में ली जाती है।

——:+:——

वन अजवान

नाम—

हिन्दी—वन अजवायन, ईपर। पजाब—माशो, मारिफ, रांगसबूर, शेकाइ। बम्बई—इपान। यूनानी—उवसाल, हमीर। उर्दू—हाशा। अंग्रेजी—Wild Thyme। लेटिन—Thymus Serphyllum (थायमस सरफिलम)।

वर्णन—

यह वनस्पति पश्चिमी हिमालय में काश्मीर से कुमाऊ तक ६ हजार फीट से १२ हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है। यह एक बहुत छोटा, नाजुक, बहुत सुगंधित, बहुशाखी और रुएंदार क्षुप होता है इसकी ऊंचाई करीब बालिश्त भर होती है इसके पत्ते डंठल रहित, लम्ब गोल होते हैं और इन पर छोटे २ तेलिया छींटे रहते हैं। इसके फूल छोटे और किरमची रंग के होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह वनस्पति तीक्ष्ण, सुस्वादु ऋतु स्राव नियामक और कृमि नाशक होती है। यह यकृत और तिल्ली की शिकायतों, यकृत के दर्द और छाती के दर्द में लाभ दायक होती है। दमा और ब्रोंकाइटीज में भी यह उपयोगी है। यह कफ और खून को पतला करता है इसके पत्ते मृदु विरेचक अग्नि वर्धक, पौष्टिक और गुर्दे तथा आंखों के रोग में लाभ दायक होते हैं। ये खून को शुद्ध करते हैं और ब्रोंकाइटीज में लाभ पहुंचाते हैं।

पंजाब के अंदर यह वनस्पति कमजोर नेत्र ज्योति को बढाने के लिये उपयोग में ली जाती है पेट और यकृत की शिकायतों और पेशाब तथा मासिक धर्म की रुकावट में यह उपयोगी मानी जाती है। इसके बीज कृमि नाशक वस्तु की तरह उपयोग में लिये जाते हैं इसका तेल दंत शूल को रोकने के लिये दांतों पर लगाया जाता है।

यूरोप के अन्दर यह वनस्पति आक्षेपनिवारक शांति दायक और पौष्टिक मानी जाती है। इसका निर्यास आक्षेप युक्त खांसी, हूपिंग कफ, जुकाम और गले की सूजन के उपयोग में लिया जाता है। ज्ञान तंतुओं की खराबी से अथवा हिस्टीरिया की वजह से होने वाले मस्तक शूल में यह लाभ दायक मानी जाती है। कब्जियत, और नशे की वजह से होने वाले सिर दर्द में भी यह उपयोगी मानी जाती है। त्वचा पर होने वाले भिन्न २ प्रकार के फोड़े फुन्सियों पर इसका निर्यास बहुत सफलता के साथ लगाया जाता है।

डॉक्टर देसाई के मतानुसार इस वनस्पति में पीव नाशक, मूत्रल, उत्तेजक, नेत्र ज्योति वर्धक, श्वास कासनाशक संकोचक, कृमिघ्न, व्रणशोधक और व्रण रोपक इतने धर्म रहते हैं। इसका पीव नाशक धर्म बहुत उत्तम कोटिका होता है इसके इन सब गुणों का केन्द्र स्थान इस में पाया जाने वाला सुगंधित और उड़न शील तेल होता है।

इस वनस्पति का स्वरस सिरका, सेंधा नमक और शहद के साथ देने से पुरानी खांसी, दमा और हूपिंग कफ में अच्छा लाभ होता है इससे कफ ढीला होता है। घबराहट कम होती है और छाती तथा पीठ का दर्द बंद हो जाता है। अग्नि मांद्य रोग में और अन्न न हजम होने की वजह से आंतों में सडाई द होकर जो अतिसार होता है उसमें इस वनस्पति को सेंधा नमक के साथ देने से बडा लाभ होता है। आंतों के व्रण में इसका स्वरस, सिरका और शहद के साथ दिया जाता है। यह आंतों के लिये संकोचक वस्तु है। इसके देने से उदर शूल, वस्ती शूल, कफ प्रमेह और दूध समान पेशाब होने की बीमारी (कायल्यूरिया) में इसका काढ़ा सिरका और शहद के साथ देने से अच्छा लाभ होता है। जख्म और सब प्रकार के चर्म रोगों में यह एक उत्तम औषधि है। पीब को नष्ट करने के लिये यह औषधि बे जोड है। इस से रोगी को किसी प्रकार का त्रास नहीं होता। अग्नि से जले हुए स्थान पर इसके रस को घी में मिला कर लगाया जाता है। संधियों की अकडन और संधियों की सूजन में इसको अरडी के तेल में पीस कर लगाते हैं और इसका काढ़ा पीने को देते हैं।

मात्रा—सूखी हुई वनस्पति की मात्रा १॥ माशे से ३ माशे तक, तेल की मात्रा १ बूंद से ३ बूंद तक, इसके सत्त की मात्रा पाव रत्ती से आधी रत्ती तक।

इस वनस्पति के अन्दर अजवायन में पाया जाने वाला थायमल नामक सत्व भी बहुत थोड़ी मात्रा में पाया जाता है।

——:०:——

बकपुष्पी

नाम—

मराठी— बकपुष्पी। लेटिन--Vandellia Erecte (वेंडेलिया इरेक्टा)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति का वर्षजीवी क्षुप होता है। इसकी शाखाए जड से ही निकलती है। इसके पत्ते बिना डण्ठल के होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में काश्मीर से आसाम तक और बंगाल, मध्यभारत और दक्षिणी भारत में पाई जाती है।

गुण दोष और प्रभाव—

सुजाक के अन्दर इस वनस्पति का स्वरस घी में मिलाकर दिया जाता है। ऐसे बच्चों को जिनको हरे रङ्ग के दस्त लगते हैं इसका स्वरस देने से बहुत लाभ होता है।

==:०:==

बसक

नाम—

हिन्दी—बसक, बासक,। भूतान—सिंगनामूक। नेपाल—असेरू, बासक, बासक। लेटिन—Dichroa Febrifuga (डिक्रोआ फेब्रीफ्यूग)।

वर्णन—

यह एक झाड़ी होती है जो नेपाल, हिमालय और खासिया पहाड़ियों पर होती है। इसकी कोंपलें चमकदार और बारीक रुएदार होती है। इसके पत्ते एक दूसरे के विरुद्ध लगते हैं। इसके फूल नीले रंग के होते हैं। इसकी छाल फीके पीले रंग की, मुलायम और कुछ खुशबूदार होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी छाल ज्वरनाशक, वामक, और ग्लानि पैदा करने वाली होती है। इसको चबाने से वमन होती है। पत्तों की क्रिया कुछ छाल की अपेक्षा सौम्य होती है।

यह औषधि नेपाल, भूतान, सिकिम और चीन में बहुत उपयोग में ली जाती है। मुलेठी के साथ इसका काढ़ा बनाकर उसमें थोड़ी सी शराब मिलाकर देने का बहुत रिवाज है मलेरिया ज्वर में यह औषधि काफी लाभदायक है। इससे वमन होकर दूषित पित्त निकल जाता है और उस पित्त के साथ ज्वर का विष भी निकल जाता है। दूषित पित्त निकल जाने से यकृत की क्रिया सुधर जाती है और रहा सहा विष दस्त की राह निकल जाता है। क्योंकि ये दस्त भी साफ लाती है। मतलब यह कि यह औषधि ज्वर के लिये एक बहुत उत्तम वस्तु है। मगर वृद्ध और अशक्त मनुष्यों को यह औषधि नहीं देना चाहिये। क्योंकि इस औषधि की क्रिया बहुत उग्र होती है।

मलाया, इंडोचायना और चीन में इसकी डालियां और पत्ते सब प्रकार के ज्वरों में एक चमत्कारिक औषधि समझी जाती है और इसकी जड़ का उपयोग पौष्टिक वस्तु की तरह किया जाता है।

——:o ——

बङ्ग

नाम—

संस्कृत वंग, रांग, चक्रसंज्ञ, स्वर्णज, नागजीवन, मृदुवंग, गुरुपत्र, पूतिगंध, इत्यादि। हिन्दी—रांग, रांगा, वंग, कलई, कथीर। बंगाल—रांग, वंग। मराठी—कथील। गुजराती—कलई, कथीर। तेलगू—तगरम्। अरबी—रूसास। फारसी—अर्जीज। लेटिन—Stallum (स्टेलम)।

वर्णन—

वंग या रांगा एक मशहूर धातु है जो बरतनों पर कलई करने और फूटे हुए बरतनों को जोड़ने के काम में आती है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक राजनिघण्टु के मतानुसार वंग कड़वी, तिक्त, शीतल, कषाय रसान्वित, लवण रस युक्त, सारक, प्रमेह नाशक, कृमिनाशक, दाह निवारक, कांतिकारक, रसायन और पांडुरोग नाशक होती है।

वग हलकी, सारक, रूखा, गरम तथा प्रमेह, कफ, कृमि पांडु और श्वास रोग को दूर करने वाली होती है। यह नेत्रों को लाभ पहुचाने वाली और कुछ पित्त कारक होती है जैसे सिंह हाथियों के समूह को नाश करता है उसी प्रकार वग सब प्रकार के प्रमेहादिकों को नाश करती है। यह देह को पुष्ट करने वाली और इन्द्रियों को ताकत देने वाली होती है।

खांसी, श्वास, मदाग्नि, पीनस, विषम ज्वर, प्रमेह, और पांडु रोग में बंग को लेना लाभदायक होता है।

वग की जातियाँ—वग की खुरक और मिश्रक ये दो जातिया होती हैं। जो बङ्ग सफेद, नरम चिकनी, तोल में भारी और बिना किसी शब्द के आग पर जल्दी गलने वाली हो उसको खुरक कहते हैं। मिश्रक वङ्ग श्वेत और श्याम मिश्रित रंग की रहती है। खुरक वग उत्तम होती है।

औषधि प्रयोग में जो वंग सफेद, मुलायम, स्वच्छ स्निग्ध, शीतल और चमकदार होती है वह उत्तम समझी जाती है।

वग को हमेशा शुद्ध करके उपयोग में लेना चाहिये। क्योंकि अशुद्ध वग कुष्ट, गुल्म, शूल वात व्याधि, सूजन, पांडु प्रमेह, भगदर, रक्तविकार, क्षय, मूत्रकृच्छ, ज्वर, प्रमेह, पथरी, विद्रधि, इत्यादि अनेक प्रकार के रोगों को उत्पन्न करती है और विष के समान होती है।

वग को शुद्ध करने की विधि—

साधारण शुद्धि- तेल, मट्ठा, गौमूत्र, कांजी, कुल्थी का काढा। इन पांच चीजों में बग को गला २ कर सात २ बार बुझाने से वङ्ग की साधारण शुद्धि हो जाती है।

वग की विशेष शुद्धि इमली की छाल का काढा, कांजी का पानी, नीबू का रस, गौमूत्र, सज्जी खार का पानी, थूहर का दूध, और आँकडे का दूध तथा हल्दी के चूर्ण सहित निर्गुंडी का काढा इन आठ चीजों में अलग २ वङ्ग को गला २ कर सात २ बार बुझाने से बङ्ग की विशेष शुद्धि होती है।

आज कल बहुत से वैद्य दोनों प्रकार की पूर्ण शुद्धि इसलिये नहीं करते हैं कि. वग को कई बार बुझाने से सेर भर वग का आध पाव तीन छटाक शेष रह जाता है बाकी सब किट्ट हो जाता है। उस किट्ट में से वग को निकालना बहुत मुश्किल होता है। इसलिये कई वैद्य उस किट्ट को फेंक देते हैं और इसी डर से वे वंग की शुद्धि बराबर नहीं करते। तीन बार वे शुद्धि करके ही सन्तुष्ट हो जाते हैं। ऐसा करने से यद्यपि वग के अन्दर दोष नहीं रहता है मगर उसके गुणों में वृद्धि नहीं होने पाती। इसलिये यहां पर वग के किट्ट में से फिर वग को निकालने की एक विधी दी जाती है जिससे वंग के वजन का कम होने का जो डर रहता है वह उतनी मात्रा में नहीं रहेगा।

वग को बुझाते २ जो किट्ट इकट्ठा होता जाय उसमे से आधा सेर किट्ट लेकर उसमें २ तोला पीसा हुआ नोसादर और ४ तोला गुड़ डाल कर लोहे के कलछे में रख कर खूब गरम करें। जब वह खूब

तप्त हो जाय तब उसको लोहे की कलछी से चलावें। ऐसा करने से वंग सब बह कर इकट्ठा हो जायगा और किट्ट हलका पड़ कर एक तरफ हो जायगा। उस वंग को जमीन पर ढाल कर डली बना लें।

इस प्रकार १०० बार भी वंग को शोधने पर वंग विशेष नष्ट नहीं होगा।

वंग को शोधना बड़ा दुस्तर कार्य है जरासी गलती से इससे बड़ी चोट पहुँचने का डर रहता है। क्योंकि तेल के सिवाय हर एक जल युक्त पदार्थ में इसको गला कर डालने से यह एक दम बहुत जोर से उछलता है। जिससे शोधन कर्ता को चोट लगने का बहुत भय रहता है। इसलिये वंग, इत्यादि वस्तुओं को शुद्ध करने के लिये एक पिटर यंत्र बनाया जाता है। उसके बनाने की विधि इस प्रकार है। एक रतल धातु की शुद्धि के लिये लोहे का एक ऐसा तसला बनाना चाहिये जिसमें ८ रतल पानी समा जाय और उस तसले का ढक्कन भी उसी नाप का ऐसा हो जिसके ढकने में या उठाने में विलम्ब न लगे अर्थात् न बहुत सटा हुआ हो और न बहुत ढीलापन हो। उस ढकने के ठीक बीच में इतना बड़ा छिद्र होना चाहिये कि जिसमें मुट्ठी समा जाय। उस छिद्र के किनारे को हथोड़े से ठोक कर कुछ नीचा कर दे। उस छिद्र को किसी साफ पत्थर या शिला से ढँक दे जिससे उछलने वाला रांगा उससे टकरा कर वापस भीतर चला जाय। उसके पश्चात् गले हुये वंग के कलछे को ढक्कन के छेद के पास ला कर ठोके हुये किनारे के रास्ते से धीरे २ डालता जाय। वंग को उस नली के द्वारा तसले में डालते समय यदि वंग तसले के अंदर उछलता रहे और शब्द भी करता रहे तो भी वैद्य को डरना नहीं चाहिये। इस प्रकार शुद्धि करने से वंग उछलने का खतरा नहीं रहता।

जो लोग इतना आयोजन न कर सकें उनके लिये दूसरी, सरल विधि यह है कि मिट्टी या लोहे के जिस पात्र में वे वंग को बुझाना चाहें उस पात्र में गो मूत्र इत्यादि किसी भी शोधनीय द्रव्य को भर कर उसके ऊपर एक देशी चक्की का पाट रख दें और उस पाट के छिद्र में से वंग को गला २ कर डालते जायँ।

वंग भस्म की विधि

पहली विधि— लोहे की कढ़ाई में अथवा ३।४ कपड़ मिट्टी किये हुए मिट्टी के कूँडे में वंग को गला कर थोड़ी २ अजवाँयन डालते जायं और लोहे की कलछी से अथवा नीम के गीले डंडे से उसको हिलाते जायँ।। इस प्रकार १ सेर वंग की भस्म १ सेर अजवायन को जलाने से होजाती है। अजवायन की जगह पीपल की छाल का चूर्ण या इमली की छाल का चूर्ण इन दोनों में से किसी एक को भुरभुराने से भी १ सेर चूर्ण में १ सेर वंग की भस्म दो प्रहर में हो जाती है। इस भस्म को कपडे में छान कर जो मोटा चूर्ण बचे उसको अग्नि पर रख कर फिर पूर्वोक्त विधि से अजवायन या पीपल की छाल का चूर्ण डालते रहने से उसकी भी भस्म हो जाती है।

दूसरी विधी—उपरोक्त वंग भस्म और उसके समान भाग शुद्ध हरताल लेकर दोनों को नीबू के रसमें दो दिन तक घोटें। फिर शुद्ध किये हुए सफेद रंग के एक बड़े शंख को लेकर लुग्दी को उस शंख

में भर दें। फिर उस शंख के मुंह को उसी नाप की ठीकरी से ढक कर दृढ मुद्रा कर दें। जब मुद्रा सूख जाय तब उस शंख को एक कपड़ मिट्टी की हुई हांडी में रख कर हांडी पर ढकना लगा कर उस ढकने पर भी दृढ़ मुद्रा कर दें। उस हांडी को तालादि भस्म करी भट्टी पर रख कर ४ प्रहर की मध्यम आंच दें। जब वह हांडी उस आँच को सहन कर ले, तब उसको गज पुट में रख कर फूक दें। और स्वांग शीतल होने पर निकाल लें फिर उस हण्डी में से उस शख को निकालकर उस शख समेत उस बग भस्म को खरल में घोट लें।

यह बग भस्म प्लीहा, मदाग्नि, श्वास, खांसी, इत्यादि रोगों पर बहुत अच्छा काम करती है। शरीर में केलसियम की कमी की वजह से जो भी उपद्रव पैदा होते हैं उनको यह दूर करती है।

तीसरी विधि—आधा पाव बग को एक मिट्टी के सिकोरे में रखकर अग्नि पर गलाकर उसमें आध पाव शुद्ध पारद डाल दें। फिर इस पाव भर पिट्ठी को खरल में डालकर इसमें कपडे से छाना हुआ शुद्ध हरताल का पाव भर चूर्ण डालकर नीबू के रस में ४ प्रहर तक घोटे और फिर सबकी एक टिकिया बना लें। इस टिकिया को खूब सुखाकर डमरू यन्त्र में रखकर खूब सावधानी के साथ दो प्रहर की आंच दें। जब तक आंच लगती रहें तब तक ऊपर वाली हडी पर एक आठ तह किया हुआ गीला कपड़ा बराबर रहना चाहिये और उस कपडे को बहुत थोड़ी २ देर में बदलते जाना चाहिये। दो प्रहर की आंच पूरी होने के पश्चात उस डमरू यन्त्र को खोलकर उसमें ऊपर वाली हांडी में लगे हुए पारद और हर-ताल के सत्व को अलग कर देना चाहिये और नीचे की हांडी में जमी हुई बंग भस्म को निकाल कर उसमें आध पाव पारद और हरताल की नई कजली को डालकर नींबू के रस में घोटकर टिकिया बनाकर डमरू यन्त्र में रखकर फिर फूकना चाहिये। इस प्रकार तीन बार करने से बग की निरुत्थ भस्म तय्यार हो जाती है और पारद और हरताल के सत्व में समान भाग शुद्ध गधक डालकर कजली करके सिंदूर रस बनाने की विधि से सर्वार्थ करी भट्ठी पर या चद्रोदयादि भट्टी पर पका लेना चाहिये। जिससे उत्तम ताल सिंदूर रस तैयार हो जायगा।

उक्त विधि से बनी हुई बंग भस्म को शहद के साथ चाटने से नपुंसकता, श्वास, कास और क्षय रोग में बहुत लाभ होता है और उपरोक्त विधि से बनाये हुए ताल सिंदूर रस को भी अदरक के रस के साथ चाटने से हैजा, ज्वर, इत्यादि अनेक रोग दूर होते हैं।

वंगेश्वर रस—पाव भर बग को अग्नि पर गलाकर उसमें पाव भर पारा डाल दें। फिर शुद्ध मैनसिल, शुद्ध हरताल और संखिया इन तीनों को सम्मिलित रूप में आध सेर लेकर बंग और पारद की पिट्ठी में डाल दें। इसके पश्चात् इन सबके बराबर वजन में शुद्ध गधक और पाव भर हींगलू डालकर कजली कर लें। फिर इन सब चीजों को नीबू के रस में तीन दिन तक घोटें। जब यह पिट्ठी घोटते २ सूख जाय तब इसकी टिकियाए बनाकर नलिका डमरू यन्त्र में रखकर वज्र मुद्रा कर दें। फिर उस

यन्त्र को तालादि भस्म करी भट्टी पर रखकर १६ प्रहर की अथवा जब तक गधक जारण न हो तब तक तीव्र आँच दें। उसके पश्चात ठण्डा होने पर उसको खोलें नीचे की हांडी में वगेश्वर रस मिलेगा और ऊपर की हाँडी में अतिउग्र सिंदूर रस प्राप्त होगा।

अगर इस वगेश्वर रस के कुछ कच्चा रहने का सदेह हो तो उसको इसी प्रकार एक बार और कर लेने से वह बिलकुल निरुत्थ हो जायगा।

यह दोनों ही वस्तुए अत्यत उग्र और गरम होती हैं। उचित अनुपान के साथ देने से यह अनेकों रोगों को नष्ट करती है और मनुष्य की जीवनी शक्ति, काम शक्ति और रोग प्रतिरोधक शक्ति को बढाती है।

सुवर्ण वग--शुद्ध वग एक छटाक की मिट्टी के सिकोरे में रखकर आग पर तपा कर गला लें और उसमें उतने ही वजन का शुद्ध हिंगुलोत्थ पारद भी डाल दें। इन दोनों की पिट्ठी को खरल में डाल कर तीन प्रहर तक नीबू के रस और सेंधे नमक के साथ घोटें। फिर कई बार पानी से घोट २ कर उसे धो डालें उस कोमल पिट्ठी में १ छटांक शुद्ध आमला सार गधक और एक छटांक नौसादर डालकर उसको तीन दिन तक ऐसी सावधानी से घोटें जिससे वह खरल से उछल कर नीचे न गिर जाय। उस कज्जली को कपड़ मिट्टी की हुई आतशी शीशी में भरकर उस शीशी को बालुका यन्त्र के बीच में रख कर उस यन्त्र को सर्वार्थकरी भट्टी की लोह जाली पर भरे हुए पत्थर के कोयलों पर रख दें और भट्टी के नीचे बबूल की दो २ लकड़ियों की आंच दें। जब कोयले सिलग जायें तब लकड़ी जलाना बन्द कर दें।

जब यह ख्याल हो कि शीशी का मुह क्षार से बन्द हो गया हो तब एक गरम लोहे की सलाई को लेकर उससे शीशी के मुँह को साफ करते चले जावें। अगर शीशी का मुँह साफ नहीं हुआ और उससे धुआँ बराबर न निकल सका तो वह शीशी जरूर फूट जायगी और सब रस बालू में मिल जायगा। २-३ घण्टों के बाद जब धुआँ निकलना बिलकुल बन्द हो जाय तब उसके मुँह पर एक डाट लगा दें। फिर सब शिथिल होने पर शीशी को निकाल कर उस पर की मिट्टी को धीरे २ चाकू से कुचल कर साफ कर लें। और उसे गीले कपडे से पोंछ डालें। फिर शीशी के मध्य भाग में एक घासलेट से भीगा हुआ धागा लपेट कर उस धागे में दियासलाई से अग्नि लगा दें जिससे वह शीशी बीच में से फूट जायगी। शीशी को पत्थर से कभी नहीं फोड़ना चाहिये। क्योंकि उससे औषधि में कांच के टुकड़े मिलने का डर रहता है। इसलिये उसको तरकीब से ही तोड़ना चाहिये। फिर उस शीशी के तल भाग और गलभाग में से सब औषधि को खुरच कर इकट्ठी कर लें। शीशी के मुख पर लगा हुआ कुछ क्षार भी मिलेगा। उसको भी निकाल कर अलग रख लें।

इस सुवर्ण वग का रग सोने के समान दीप्तिमान होता है। इसको एक रत्ती तक की मात्रा में एक माशा इलायची के दानों के चूर्ण और ६ माशे शहद के साथ चटाने से हर प्रकार के प्रमेह महीने दो महीने में दूर हो जाते हैं।

शीशी के मुँह से निकला हुआ चार एक रत्ती की मात्रा में पान के साथ खिलाने से सब प्रकार की खांसी में लाभ होता है।

बंग भस्म के गुण— बंग भस्म शीतल होती है, बुद्धि को बढाती है, क्षय रोग को नष्ट करती है। कांतिवर्धक होती है। इसके सेवन से बीसों प्रकार के प्रमेह दूर होते हैं। वृद्ध लोगों में नव यौवन का का सचार होता है और जठराग्नि पदीप्त होती है.।

उपयोग —

अम्ल पित्त—हलदी के चूर्ण के साथ बंग भस्म को खाने से अम्ल पित्त दूर होता है।

मंदाग्नि—पीपल के चूर्ण के साथ बंग भस्म का सेवन करने से मंदाग्नि मिटती है।

श्वास—कटेरी के चूर्ण और शहद के साथ बंग भस्म को खाने से श्वास में लाभ होता है।

चर्मरोग—खैर के क्वाथ के साथ कुछ दिनों तक बंग भस्म को सेवन करने से दाद, खाज, इत्यादि सब प्रकार के चर्म-रोग दूर होते हैं।

नपुंसकता—बंग भस्म को मलाई के साथ सेवन करने से नपुंसकता और इलायची तथा शहद के साथ लेने से सब प्रकार के प्रमेह मिटते हैं।

ज्वर—बंग भस्म पीपल और शहद के साथ लेने से ज्वर दूर होता है।

स्तम्भन—बंग भस्म को कस्तुरी के साथ लेने से स्त्री सहवास के समय शुक्र का स्तम्भन होता है।

वात व्याधि—बंग भस्म का लहसन के साथ लेने से सब प्रकार की वात व्याधियों में लाभ होता है।

कुष्ट—बंग भस्म को समुद्र फल के साथ लेने से कुष्ट रोग में लाभ होता है।

अनेक रोग—बंग भस्म को मक्खन के साथ लेने से हड्डियां मजबूत होती हैं। नागर बेल के पान साथ लेने से वीर्य की रक्षा होती है। जायफल के साथ लेने से शरीर पुष्ट होता है। तुलसी के पत्तों के साथ लेने से सब प्रकार के प्रमेह नष्ट होते हैं। घृत के साथ लेने से पाडु रोग मिटता है। मिश्री और नीबू के रस के साथ लेने से दाह नष्ट होती है। जायफल असगंध के चूर्ण के साथ लेने से कमर की पीड़ा दूर होती है और शुद्ध सुहागे के साथ लेने से प्लीहा और गुल्म रोग दूर होता है।

बनावटें —

बंग रसायन—बंग भस्म, अभ्रक भस्म, कान्त लोह भस्म, इन तीनों भस्मों को समान भाग लेकर गाढ़े कपड़े में छान कर अपामार्ग के स्वरस, धतूरे के पत्तों के स्वरस, अनार के पत्तों के स्वरस और नीबू के पत्तों के स्वरस में क्रमशः आठ २ दिन तक घोंटे। ज्यों २ रस सूखता जाय त्यों २ नया रस डालते जायें। फिर इस चूर्ण को गौ मूत्र शिलाजीत का पानी और गूगल के पानी में आठ आठ दिन तक घोट २ कर सुखा लें और कपड़ छन कर लें। फिर उन सब का जितना वजन हो उतना ही बबूल का गोंद और उतनी हीरासना मिला कर खूब बारीक पीस कर कपडे में छान लें।

इस वंग रसायन को १ माशे से २ माशे तक की मात्रा में हल्दी के चूर्ण और गाय के मट्ठे के साथ प्रातः काल सेवन करने से दोनों प्रकार के प्रमेह नष्ट होकर शरीर बहुत मजबूत हो जाता है।

वंग के विकार की शान्ति—अशुद्ध अथवा कच्चे वंग को खाने से शरीर में कई प्रकार के विकार पैदा हो गये हो तो मेंढासिंगी को मिश्री के साथ तीन दिन तक खाने से सब प्रकार के विकार शांत हो जाते हैं। (रसायन सार)

---:o:---

बड़हल

नाम—

संस्कृत—अम्लक, ऐरावत, लकुच, लिकुच, क्षुद्र पनस इत्यादि। हिन्दी—बड़हर, बड़हल लकुच, धाम। बंगाल—डाहू, डेफल, लकुच, मदार। बम्बई—डाहू, ओटी, लकुच। गुजराती—लकुच मराठी—वटार, क्षुद्र फणस, वोटंब। पंजाब—दहेओ, ढयूफल। नेपाल—बराह। आसाम—बंबा। उर्दू—बड़हल। तामील—इरप्पाला। तेलगू—नक्केरेनु, कम्मारेगु। इंगलिश—Monkey Jack। लेटिन—Artocarpus Lakoocha (आर्टोकार्पस लकुच)।

वर्णन—

यह वनस्पति हिमालय की पहाड़ियों, खासिया पहाड़ियों, बरमा और सीलोन में पैदा होती है यह एक ऊंचे कद का वृक्ष होता है इस वृक्ष की ऊंचाई १५ से २८ मीटर तक होती है। इसका ऊपरी हिस्सा फैला हुआ रहता है। इसकी छाल खुरदरी और भूरे रंग की होती है। इसकी छोटी डालियां बहुत नाजुक होती हैं। इन पर नरम और भूरे रंग का रुआं रहता है। इसके पत्ते मोटा कर और तीखी नोक वाले रहते हैं। इनकी लम्बाई १० से ३० सेंटीमीटर तक और चौड़ाई ५ से १५ सेंटीमीटर तक होती है इसके फूल गोल आकार के होते हैं। इसके फल नरम, पीले मखमली और खाने लायक होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से इसका कच्चा फल गरम, भारी, कब्जियत करने वाला, मीठा खट्टा, त्रिदोष को पैदा करने वाला, रुधिर को दूषित करने वाला, नेत्रों को हानिकारक और वीर्य को नष्ट करने वाला होता है।

इसका पका हुआ फल मधुर, खट्टा, वात पित्त नाशक, कफ कारक, रुचि वर्धक, कामोद्दीपक, और कब्जियत करने वाला होता है,

यूनानी मत—यूनानी मत से इसका कच्चा फल ज्वर पैदा करने वाला होता है। इसका पका हुआ फल खट्टा मीठा और दुष्पच्य होता है। यह पित्त विकार और कफ जनित ज्वरों में उपयोगी है। यकृत के लिये यह एक पौष्टिक वस्तु है। इसके बीज बच्चों के लिये उत्तम विरेचक हैं।

बंगाल में इसके एक या दो बीज अथवा इसका थोड़ा सा दूधिया रस जुलाब देने के काम में

लिया जाता है। मुडा जाति के लोग इसके दूधिया रस की १ या दो बूंदें बच्चों को और आठ दस बूंदे जवान आदमियों को विरेचन के लिये देते हैं। फोड़े, फुन्सी और पैर की बिवाई में इसके छिलटे का सत्व लगाया जाता है। घावों के ऊपर इसके छिलटे को पीस कर लगाने से वह उसके मवाद को खींच लेता है।

——:o:——

बरबेल

नाम—

संस्कृत—वेल्लतरू, दीर्घमूल, वीरद्रू, बहुवारक, वीरवृक्ष, । हिन्दी—वरबेल, विल्वांतर। मराठी—वेल्लतूर। तामील—विडात्तर। तेलगू—वेणुतुरुचेट्टू। लेटिन—(डेसूमान्थस सिनेरियस)।

वर्णन—

विल्वांतर के वृक्ष मारवाड़ में तथा नर्मदा नदी के तट पर होते हैं इसपर कांटे होते हैं। पत्ते खेजड़े के समान छोटे २ होते हैं। फूल पांचों रंग के आते है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत से वेल तर चरपरा, पथ्य, गरम, अग्नि दीपक, रस और पाक में कड़वा, मलरोधक, वात रोग नाशक तथा मूत्र कृच्छ्र, पथरी, सधि शूल और मूत्राघात रोग को दूर करता है।

——:o:——

बगन

नाम—

हिन्दी—यूनानी—बगन।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है जमीन पर बिछी हुई रहती है। इसकी डालियां बारीक पत्ते छोटे, लम्बे, नोकदार और गोल सिरके होते हैं। जहाँ पत्ता डाली से लगा होता है वहां का हिस्सा कुछ पतला होता है। फूल छोटा, गोल और डाली की हर एक गठान पर लगा हुआ होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—यह वनस्पति पित्त, कफ और विष के उपद्रव को दूर करती है पैशाब सम्बन्धी बीमारियों में लाभदायक है। नाक से बहने वाले खून को बंद करती है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह गरम और खुश्क होती है। मखजनुल अदविया में लिखा हुआ है कि इसके पत्तों का रस पीने से बुखार, कफ सरदी की खांसी, पेशाब का कठिनाई से आना और पेशाब की जलन मिट जाती है। मसाने की पथरी भी इससे गल जाती है इसके लेप से फोड़े पक जाते हैं।

ऐसा कहा जाता है कि पानी के एक घड़े में इसके पत्तों को भरकर उस घड़े में पानी भरकर उसका मुँह बन्द करके घोड़े की लीद के ढेर में गाड़ देना चाहिये। १५ दिन के बाद उसको निकाल कर उस घड़े में से १ प्याला पानी रोज पिया जाय और खटाई और बादी की चीजों से परहेज रखा जाय तो बवासीर बिलकुल नष्ट हो जाता है।

——:o:——

बस्तेयाज

नाम—

हिन्दी, यूनानी—बस्तेयाज।

वर्णन—

यह एक कांटेदार वनस्पति होती है। इसके पत्ते छोटे, खुरदरे और फूल सफेद और नीले, डालियां १ बालिश्त लम्बी होती हैं। हर एक डाली के सिरे पर एक घुंडी होती है। इसके बीज अजवायन के बीज की तरह होते हैं। इनका स्वाद तेज होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी बारीक डालियों की दातून बनाकर उससे दाँत कुचरने से दांतों के मसोड़े मजबूत होते हैं। इसके लेप से सूजन बिखर जाती है।

——.o.——

वकमून

नाम—

हिन्दी, यूनानी—वकमून।

वर्णन—

यह एक झाड़ है जो पानी के किनारे उगता है। इसकी ऊँचाई अनार के वृक्ष के बराबर होती है। इसके डालियां बहुत कम होती हैं। इन डालियों में से एक प्रकार का तीव्र दूधिया रस निकलता है इसके बीज काले दाने सरीखे होते हैं। जिनको हुब्बुन नकद कहते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति गरम और खुश्क होती है। यकृत, तिल्ली, आमाशय और आंतों के सुद्दों को बिखेरती है। तिल्ली के वास्ते यह विशेष रूप से लाभदायक है। इसके बीज को अगर स्त्री खावे तो वह एक साल तक गर्भवती न हो।

बलूती

नाम—

हिन्दी, यूनानी—वलूती।

वर्णन—

यह एक वनस्पति होती है जिसके पत्ते लहसन के पत्तों की तरह होते हैं। इनका रङ्ग हरा और कालापन लिये हुए होता है। इन पर गहरे रुएं होते हैं। इसका फूल गोल पीला तथा खाकी रंग का होता है। इसमें तेज गंध आती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानी मत से इसकी जड़ तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क है तथा पत्ते पहले दर्जे में गरम और खुश्क होते हैं। इसके पत्तों को कूटकर शहद में मिलाकर जख्मों पर लगाने से जखमो की पीव साफ हो जाती है। इसको भूभल में दबाकर बवासीर पर बांधने से बवासीर में बड़ा लाभ होता है। इसको नमक के साथ पागल कुत्ते के काटे हुए मुकाम पर लगाने से लाभ होता है।

——:o:——

बनसटकी

नाम—

हिन्दी, यूनानी—वनसटकी।

वर्णन—

यह एक बहु शाखी वनस्पति होती है। इसके पत्ते मेंहदी के पत्तों की तरह मगर उनसे कुछ छोटे और फल मकोय के फल की तरह मगर उनसे कुछ चौडे और चपटे होते हैं। फल कच्ची हालत में हरा और पकने पर भूरे रंग का हो जाता है। इस फल में बारीक २ बीज होते हैं। यह पौधा पानी के किनारे पर जमता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति गरम और खुश्क होती है। इसके फल और पत्तों को पीसकर गरम करके सूजन या जलोदर पर बांधने से लाभ होता है इसके पचांग को घोट कर पीने से बच्चा जल्दी पैदा होता है। गर्भाशय से बहने वाला सफेद पानी भी इससे रुक जाता है।

——:o:——

बल्लसी

नाम—

हिन्दी, यूनानी—बलसी।

वर्णन—

यह एक घास होता है। इसमें बहुत सी लम्बी २ डालियां होती हैं और इन डालियों पर पत्ते लगे हुए होते हैं। इसके पत्ते मजीठ के पत्तों की तरह, फूल सफेद और बीज सख्त तथा गोल होते हैं। इसके पत्ते ऐसे खुरदरे होते हैं कि कपड़ों में उलझ जाते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानी मत से यह वनस्पति दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। पुरानी चर्बी में इस दवा को मिलाकर जहर बाज पर लगाने में बड़ा लाभ होता है। इसके पत्तों का रस गुलाब या वनफ्शा के तेल में मिलाकर कान में टपकाने से कान का दर्द मिट जाता है। एक हकीम का कहना है कि अगर इसके १७॥ माशे पत्तों को खिलाकर ऊपर से शराब पिलादी जाय तो सांप और नेवले का जहर उतर जाता है।

——:०:——

बरनोफ

नाम—

हिन्दी, यूनानी—बरनोफ।

वर्णन—

यह अनार के वृक्ष की तरह एक वृक्ष होता है। इसके बहुत डालियाँ होती हैं। इसके पत्ते सेव के पत्तों की तरह मगर उनसे गहरे रंग के और रुएँदार होते हैं। इसका फूल खुशबूदार होता है और उसके बीच की केशर पीले रंग की होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होता है। सूजन को उतारता है। दिमाग की गंदगी को निकालता है। इसके पत्तों का रस माँ के दूध के साथ पिलाने से बच्चों की मृगी चली जाती है। बच्चों के पेट में वायु और कफ से मरोड़ी की पैदायश हो तो इसको पिलाने से फायदा होता है। इसके पत्तों को सुखाकर फोड़ों पर भुरभुराने से फोड़े सूख जाते हैं।

——:०:——

बरहानी

नाम—

हिन्दी, यूनानी—बरहानी।

वर्णन—

यह एक बहुशाखी पौधा होता है। इसके फूल सफेद और फल जैतून के फलों की तरह होते हैं। इनका स्वाद तेज होता है इसकी जड़ भीतर से सफेद और ऊपर से पीली होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यह वनस्पति जलोदर, बवासीर, पेशाब की रुकावट, पथरी, खुंजन, सिरकी गंज, यकृत की कमजोरी और आंख के जाले में मुफीद होती है। यह पहले दर्जे में गरम और तर होती है।

——:०:——

बरियामिश्री

नाम—

हिन्दी, यूनानी—बरियामिश्री।

वर्णन—

यह वनस्पति विशेष करके मिश्र में पैदा होती है। इसके पत्ते राई के पत्तों की तरह होते हैं। जो जड़ के पास से निकलना प्रारंभ होते हैं। इसके पौधे की शकल अजमोद के पौधे की तरह होती है और इसकी खुशबू सौंफ के समान होती है। इसके बीज हरे और बारीक होते हैं इनमें भी खुशबू आती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और पहले दर्जे में खुश्क होती है। आंत, आमाशय और यकृत को ताकत देती है। इसको सूंघने से दिमाग की सर्दी बिखर जाती है। इसके बीज बहुत पौष्टिक होते हैं। इनके सेवन से कामेंद्रिय में बहुत उत्तेजना पैदा होती है। बवासीर में भी यह बहुत लाभदायक है। इसको हमेशा खाते रहने से और कुछ दिनों तक नागर मोथे के साथ इसको लगाते रहने से बवासीर में बहुत लाभ पहुँचता है।

यह वनस्पति अधिक सेवन से दिमाग को नुकसान पहुंचाती है। इसकी मात्रा ३ माशे से ६ माशे तक है। इसका प्रतिनिधि जावित्री और दर्पनाशक नीलोफर होता है।

——:०:——

बरमून

नाम

हिन्दी, यूनानी—बरमून

वर्णन—

इस वनस्पति का पौधा कपास के पौधे सरीखा होता है। इसके नीचे के पत्ते कुछ चौडे और ऊपर के पत्ते कुछ सकडे होते हैं। इसके पत्तों के बीच में बीज लगते हैं। इसके बीज तरमीज से मिलते जुलते होते हैं। हर एक दो परदों के बीच में रहता है। इसके पत्तों का रङ्ग कुछ ललाई लिये हुए काला होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति पहले दर्जे में गरम और खुश्क होती है। सूजन को बिखेरती है। खुश्की पैदा करती है। खुजली में लाभदायक है।

हकीम जाली नूसका कहना है कि इसको खाना और इसको लगाना पागल कुत्ते के विष में लाभदायक है। इसकी मात्रा ४॥ माशे तक है।

—:o:—

ब्रह्मराक्षस

नाम—

हिन्दी—यूनानी—ब्रह्म राक्षस

वर्णन—

मुजर्रिबात अकबरी में इस वनस्पति का नाम मिलता है। इसके सिवाय इसका कहीं भी उल्लेख देखने में नहीं मिलता है।

गुण दोष और प्रभाव—

मुजर्रिबात अकबरी में लिखा है कि इस वनस्पति को छाया में सुखा कर रख लें। इसमें से हर रोज आधा माशा औषधि गुड़ के अन्दर रख कर गोली बना कर खा लिया करें। इसके सेवन से कफ की खांसी और दमे में बहुत लाभ होता है।

—:o:—

बरसियान

नाम—

हिन्दी—यूनानी—बर सियान।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसमें फूल नहीं आते सिर्फ बीज आते हैं। मोहित आजम में लिखा है कि इसके बीज मिलावें की तरह होते हैं और ये गर्मी की शुरु मौसम में लगते हैं। मगर एक दूसरी यूनानी किताब में लिखा है कि इसके बीज अजमोद की तरह होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह वनस्पति गरम और तर होती है। इसको पीने और सूंघने से दिमाग में तरी पहुंचती है। ज्ञानेंद्रियों को शक्ति मिलती है और नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। यह वायु को तोड़ती है। शरीर के दोषों को दस्त की राह निकालती है। यकृत और आमाशय को ताकत देती है। इसको गुलाब जल में पीस कर शरीर पर मलने से शरीर के तमाम काले निशान और खुजली मिट जाती है।

—=:-:=—

बरफ

नाम—

हिन्दी—यूनानी—बरफ। अंग्रेजी—Ice।

वर्णन—

जमे हुए पानी को बरफ कहते हैं। यह दो प्रकार का होता है। एक कुदरती जो बादलों से ओलों के रूप में गिरता है अथवा हिमालय पहाड़ में हवा की सर्दी से पैदा होता है। दूसरा बनावटी जो यहां के कारखानों में मशीनरी से बनाया जाता है।

गुण दोष और प्रभाव

यूनानी मत—यूनानी हकीमों के मत से यह तीसरे दर्जे में सर्द और खुश्क होता है। मगर हकीम कुरेशी का मत है कि बरफ ठंडा होने पर भी दर असल में गरम होता है क्योंकि वह अपनी ठंडक से शरीर की तमाम ठंडक को निकाल देता है और गर्मी को भड़का देता है। हकीम अरजानी ने भी इसी मत को तिब्बे अकबरी में पसन्द किया है। हकीम नफीसी ने लिखा है कि बरफ अपनी ठंडक की वजह से आमाशय के मुंह में तकलीफ पैदा करता है और उसी तकलीफ को दूर करने के लिये तबियत पानी मांगती है और इसी से शरीर में गर्मी पैदा हो जाती है।

गर्मी का बुखार और तर तथा खुश्क खुजली में बरफ मुफीद है। अगर गले में जोंक चिपट जाय तो बरफ के खाने से वह निकल जाती है। इसको ललाट पर रखने से नाक से बहने वाला खून बंद हो जाता है। यह आमाशय के कीड़ों को मार कर निकाल देता है। बरफ की पोटली बांध कर प्लेग की गठान पर १२ घन्टे तक रखनें से गठान बैठ जाती है।

बरफ की दो विशेषताएं विशेष रूप से ध्यान में रखने के योग्य है। पहली तो यह कि यह शरीर की रक्त वाहिनियों का सकोचन करता है। इसलिये शरीर के किसी भी अंगमे चाहे जितना तेज रक्त प्रवाह हो रहा हो और वह दूसरी औषधियों से बन्द न होता होतो उस जगह बरफ का टुकड़ा रख देने से फौरन बन्द हो जाता है। दूसरी बात यह है कि शरीर का ताप क्रम ज्वर में या दूसरी किसी बीमारी में बहुत बढ गया

हो और वह किसी दूसरी औषधि से कम न होता हो तो बरफ को सिर पर रखने से फौरन कम हो जाता है। अंतः प्रयोग में भी बरफ से कुछ उपचार किये जाते हैं, मगर इसका अधिक सेवन जैसा कि आज कल गर्मी के दिनों के अन्दर शहरों में होता है, मनुष्य शरीर को बहुत नुकसान पहुचाता है। लोग गर्मी में ठंडक और तरी प्राप्त करने के लिये इसका सेवन करते हैं मगर वास्तव में यह शरीर में बहुत खुश्की पैदा करता है और जठराग्नि को मद करता है। इसलिये इसका बहुत कम सेवन करना चाहिये।

——:०:——

बच्छनाग काला

नाम—

संस्कृत—वत्सनाभ, गरल, विष, ब्रह्मपुत्र, अमृत, गरद, जांगल, हलाहल, तीक्ष्ण, रसायन, प्राणहर। हिन्दी—बच्छ नाग, मीठा विष, सींगिया विष। बंगाली—विष, कट विष, वत्सनाभ विष। बम्बई—बच्छनाम्। गुजराती—बच्छ नाग, वॅगडियो बच्छ नाग। मराठी—बच्छनाग। तामील—विषनावि। तेलगू—अतिवश, वसनवि। लेटिन—Aconitum Ferox (एकोनायटम फेरोक्स)।

वर्णन—

यह वनस्पति नेपाल के अल्पाइन हिमालय प्रान्त में पैदा होती है। इसके पौधे का प्रकाँड सीधा रहता है। इसके पत्ते एक दूसरे के आमने सामने रहते हैं। ये अखंड होते हैं। इसकी जड़ें गठानदार होती हैं। ये गहरे बादामी रंग की होती हैं, कोई २ पीले रग की भी होती है।

बच्छ नाग की करीब १८० जातियों का पता अभी तक लग चुका है लेकिन ५० से अधिक यूरोपियन जातियां और २४ भारतीय जातियों का अभी तक ऐसा पता लग चुका है जिनमें प्रभावशाली उपचार पाये जाते हैं। इन जातियों में एकोनिटम नेपलेस, एकोनिटम फेरोक्स, एकोनिटम हैट्रोफिलम (अतीस), एकोनिटम स्पिकेटम, इत्यादि जातियां विशेष रूप से प्रसिद्धि में आई हैं और उनका वर्णन यहां पर किया जावेगा।

बच्छनाग की जड़ें जाड़े के अत में अथवा वसत के प्रारभ में जब तक इस वृक्ष में नये पत्ते नहीं फूटते तब खोद कर सुखा लेते हैं। इसके ताजे फूलों की छड़ियाँ और पत्ते उस वक्त तोड़ते हैं जब फूल गिरने ही वाला हो।

काले अथवा तेलिया बच्छ नाग की जड़ें ऊदी रंग की होती हैं। इनका आकार गाजर के समान होता है मगर बहुत ऊबड़ खाबड़, छोटा बड़ा और साधारणतया ३/४ इच लम्बा होता है। अधिक दिनों तक पडे रखने पर यह साफ काले रग की हो जाती है। बरसात के दिनों में यह बहुत चौडी और सींग के समान हो जाती हैं। इनको हाथ पर मसलने से ऊदी रग चढ़ जाता है। इनमे बहुत उग्र गध होती है। इसका जबान पर जरासा स्पर्श होते ही जबानमें जड़ता पैदा हो जाती है और वह बहुत देर तक

टिकती है। इसलिये इसकी असली नकली की परीक्षा करने के लिये इसको जबान पर कभी नहीं लगाना चाहिये।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बच्छनाग अत्यन्त मधुर, गरम, वात कफ नाशक और कंठ रोग तथा सन्निपात को दूर करने वाला होता है। यह पित्त और संताप को उत्पन्न करता है। यह प्राण नाशक होता है।

इस विष में रूक्ष, उष्ण, तीक्ष्ण, सूक्ष्म, आशु, व्यवायी, विकासी, विशद, लघु और अपाकी ये १० धर्म रहते हैं। यह अपने रूक्ष गुण से वायु को कुपित करता है। उष्ण गुण से पित्त और रक्त को कुपित करता हैं। तीक्ष्ण गुण से बुद्धि को भ्रमित करता है और मर्म बन्धन को छिन्न भिन्न करता है। सूक्ष्म गुण से मनुष्य शरीर के सब अवयवों में हठ पूर्वक प्रवेश करके उनकी क्रियाओं को प्रकाश में लाता है। आशु गुण से अत्यन्त शीघ्र अपने प्रभाव को घोषित करता है। व्यवायी गुण से प्रकृति को नष्ट करता है। विकासी गुण से शारीरिक वातादि दोष, रसादि धातु और मूत्रादि मल के समूह को फैलाता है। विशद गुण के द्वारा अत्यन्त दस्तों को लाता है लघु गुण की वजह से बहुत कठिनाई से वश में आता है और अपाकी गुण की वजह से बहुत दुर्जर और बहुत दीर्घकाल तक क्लेश का कारण होता है।

लेकिन शुद्ध किया हुआ और विधीपूर्वक सेवन किया हुआ विष रसायन, बलकारक तथा वात, श्लेष्म, कुष्ट, वातरक्त, अग्निमांद्य, श्वास, खांसी, प्लीहा, उदररोग, भगदर, गुल्म, पांडु और व्रण का नाश करता है। युक्ति पूर्वक सेवन करने से यह बलदायक, रसायन, कामोद्दीपक, और त्रिदोष जन्य रोगों को नष्ट करने वाला होता है।

बच्छनाग को शुद्ध करने की विधि

सिंगिया विष और बछनाग विष को ३ दिन तक गोमूत्र में पड़ा रखें। मगर रोज पुराने गौमूत्र को निकाल कर उसमें नवीन गौ मूत्र डालते रहे। तीसरे दिन उस बच्छ नाग को गौ मूत्र में औटाकर निकाल लें और उसके छोटे २ टुकड़े करके धूप में सुखालें। इसी क्रिया से बछनाग शुद्ध हो जाता है।

बछनाग को शुद्ध करने से उसका विषैला प्रभाव कम हो जाता है और उसका अवसादक गुण कम होकर उसमें उत्तेजक गुण पैदा हो जाता है।

बच्छ नाग के शरीर के भिन्न २ अवयवों पर होने वाले प्रभाव—

बछनाग को पेट में देने से आमाशय के ज्ञानतन्तुओं में जड़ता आजाती है और आमाशय में कफ और रसकी कमी हो जाती है। इन गुणों की वजह से आमाशय की पीड़ा, जलन, और गर्भावस्था की वमन को बन्द करने के लिये बच्छनाग का प्रयोग किया जाता है। इसको छोटी मात्रा में देने से आमाशय की पाचन शक्ति बढती है।

वच्छनाग के तत्व रक्त के अन्दर बहुत जल्दी मिल जाते हैं और रक्त में मिलकर हृदय केन्द्र, श्वासोच्छवास के केन्द्र, त्वचा और मूत्र पिंड पर बहुत शीघ्र अपने प्रभाव बतलाते हैं। बछनाग से नाड़ी का वेग कम हो जाता है। त्वचा में स्निग्धता पैदा होती है और पेशाब का प्रमाण बढ जाता है। हृदय के ऊपर इसकी क्रिया विशेष रूप से अवसादक होती है। जिससे हृदय की धड़कन और उसका जोर कम हो जाता है। नाड़ी शिथिल हो जाती है। श्वासोच्छवास की क्रिया मंद हो जाती है। पसीना और पेशाब बहुत छूटता है। शरीर के सब ज्ञान तंतुओं में थोड़ी बहुत जड़ता पैदा हो जाती है। इन सब गुणों की वजह से वछनाग का उपयोग ज्वर और वेदना युक्त बीमारियों में किया जाता है। ज्वर के अन्दर बछनाग को देने से पसीना होता है। पेशाब अधिक होता है और नाड़ी की गति शांत हो जाती है। इसी प्रकार शरीर के भीतर होने वाली सूजन की भी कमी हो जाती है। बछनाग में वेदनाशामक गुण रहता है। पर यह वैद्यकीय प्रमाणों में देने से विशेष सौम्य होता है अर्थात् बछनाग को अफीम और खुरासानी अजवायन अथवा और किसी पीड़ा शामक द्रव्य के साथ मिला कर देते हैं।

बछनाग के अन्दर सूजन को नष्ट करने का गुण भी रहता है मगर इसका प्रभाव सिर्फ बच्चों के अन्दर ही दिखलाई देता है। वृद्ध मनुष्यों की सूजन पर इसका बिलकुल असर नहीं होता। बच्चों की किसी भी प्रकार की सूजन के प्रारंभ में उदाहरणार्थ गले की सूजन, श्वासनलिका की सूजन, फुफ्फुस की सूजन, फुफ्फुस के परदे की सूजन, हृदय की सूजन, आंतों के परदे की सूजन, सन्धियों की सूजन, इत्यादि रोगों के प्रारंभ में ही बछनाग को देने से सूजन की अगली अवस्था तक पैदा नहीं होने पाती। करीब १८ वर्ष तक के लड़कों के लिये यह औषधि लाभदायक सिद्ध होती है। बछनाग की १ मात्रा एक साथ देने से जो लाभ होता है उसकी अपेक्षा १ मात्रा के आठ भाग करके थोड़ी २ देर के अन्तर से उसको देने से अधिक लाभ होता है।

बोस, महस्कर और केस के मतानुसार यह वनस्पति पेट में जाकर सबसे पहले हृदय की गति को धीमी करती है फिर रक्त के दबाव को हलका करती है। इसके पश्चात् यह परिवर्तीय रक्त बहाव को तेज करती है इसके बाद में हृदय की गति कुछ तेज होती है और रक्त भार भी बढ़ता है। इसकी जड़ को गोमूत्र में शुद्ध कर लेने पर यह हृदय की गति को घटाने के बजाय बढाती है और रक्तभार तथा परिवृतीय् रक्त बहाव को बढाती है। अगर गोमूत्र के बजाय गाय के दूध में इसको शुद्ध किया जाय तो उपरोक्त परिवर्तन और भी साफ रूप से दृष्टिगोचर होते हैं।

इसकी बिना शुद्ध की हुई जड़ में १.४ प्रतिशत कुल उपक्षार रहते हैं और गौमूत्र में शुद्ध की हुई जड़ में सिर्फ १.२७ प्रतिशत उपक्षार रहते हैं। गौमूत्र के साथ शुद्ध करके इसे धूप में सुखा लेने पर इसके अलके-लाइड्स, एकोनाइट्स और सूडेकोनीटाइन में कुछ परिवर्तन हो जाता है। इसमें बेंजोइल एकोनाइन और बेरेट्राइल एकोनाइन नामक विषैले पदार्थ थोड़ी मात्रा में पाये जाते हैं।

डॉक्टर मुडीनशरीफ का कथन है कि यह वनस्पति ब्रिटिश और भारतीय फरमाकोपिया में

सम्मत मानी गई है। कुछ साल पहिले मैंने स्वय बछनाग की सफेद जाति का थोड़ी मात्रा में उपयोग किया। मैं यह कह सकता हू कि इसका भीतरी प्रयोग इतना खतरनाक नहीं है जितना कि यूरोप में पैदा होने वाली बछनाग की जड़ का। मैं यह कहने में नहीं हिचकिचाऊंगा कि यह भारत की अत्यन्त उपयोगी औषधियों में से एक है। मधु प्रमेह या डायबिटीज रोग में इससे बहुत लाभ होता है। जिस दिन से इसका उपयोग शुरू किया जाय उसी दिन से अधिक मूत्र का जाना बन्द हो जाता है और शक्कर भी कम होती जाती है। अनैच्छिक वीर्यस्राव और अनैच्छिक मूत्रस्राव पर भी इसका बहुत ही अच्छा प्रभाव होता है। पक्षाघात और कुष्ट के रोगियों पर भी यह बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। एकोनाइट फेरोक्स के गुण इस औषधि की अन्य जातियों के गुणों से उत्तम होते हैं यह मादिल है और इसका प्रभाव भी निश्चित और एक सरीखा होता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से बछनाग चौथे दर्जे में गरम और खुश्क होता है। शुद्ध किया हुआ बछनाग बहुत थोड़ी मात्रा में देने से कुष्ट और सफेद दाग में लाभ पहुंचाता है। यह कामशक्ति को बढाता है, आमाशय, यकृत, और मस्तिष्क को ताकत देता है, खून को साफ करता है, कफ को निकाल देता है, वायु को बिखेरता है, अर्द्धांगवायु, जलोदर, जबान का तुतलाना, दांतों का दर्द और आँख की बीमारियों में लाभदायक है। मगर इन सब कामों में इसका उपयोग बहुत सावधानी से करना चाहिये। कफ की पुरानी बीमारी और खांसी में भी यह लाभ पहुंचाता है। इसका लेप जख्म को फायदा पहुचाता है।

वच्छनाग के विष की प्रतिक्रिया—वच्छनाग को अधिक मात्रा में ले लेने से मनुष्य के सब अगों की क्रियाशक्ति शिथिल हो जाती है। शरीर के भीतरी अंग, होठ और जबान सूख जाते हैं। आंख की पुतली फिर जाती है। चक्कर आने लगते हैं और मृगी के दौरे आने सरीखी हालत हो जाती है। फिर नाक से खून बहना शुरू हो जाता है और आदमी बेहोश हो जाता है। पेशाब से खून आने लगता है। अक्ल में फितूर पैदा हो जाता है। जबान पर कालापन आ जाता है और अन्त में सन्निपात की सी हालत होकर आदमी मर जाता है।

चिकित्सा—बछनाग की चिकित्सा तभी हो सकती है जबकि वह थोडी मात्रा में खाया गया हो और समय रहते उसका इलाज शुरू हो गया हो। अधिक मात्रा में खा लेने पर या अधिक विलम्ब हो जाने पर इसका इलाज असम्भव हो जाता है। इसके इलाज में पहले पहले वमन कराना चाहिये। फिर कपूर को गुलाब के अर्क और खुरफे के बीजों के अवलेह के साथ खिलाना चाहिये। बरफ का खिलाना भी इसमें लाभदायक होता है। हृदय और यकृत के ऊपर चन्दन, कपूर और गुलाब की अर्क बेद मुश्क में पीसकर लेप करना चाहिये। ताज़ा दूध, जौ का सत्तू, खट्टे अनार के दानों का रस, तरबूज का रस, बेदाना या इसबगोल का लुआब भी इसमें लाभ पहुंचाता है। यूनानी की दवाउलमिस्क मोतं दिल जवाहरदार का चटाना भी इसके विष में लाभ पहुचाता है।

उपयोग—

गठिया—गठिया और छोटे जोड़ों की सूजन पर बछनाग के तेल की मालिश करने से और बहुत थोड़ी मात्रा में पेट में देने से गठिया और छोटे जोड़ों की सूजन मिटती है।

मूत्रकृच्छ्र—शुद्ध बछनाग को आधे चांवल भर की मात्रा में देने से मूत्रकृच्छ्र मिटता है।

मधुप्रमेह—१ तोला शुद्ध बछनाग में ७ तोला अखरोट मिलाकर उसमें से आधी रत्ती से १ रत्ती तक की मात्रा में देने से मूत्रातिसार, मधुप्रमेह, पक्षाघात और कुष्ट रोग में बहुत लाभ होता है।

रसायन—बछनाग में समान भाग सुहागा मिलाकर जो थोड़ी मात्रा में इसको खाने की आदत डालता है वह दीर्घायु होता है। उसकी ज्ञानेन्द्रियाँ शक्तिशाली हो जाती हैं। शरीर में तेज और ओज बना रहता है। उसकी कामशक्ति हमेशा जाग्रत रहती है और हृदय की गति बहुत धीमी और व्यवस्थित रहती है। बुखार, संग्रहणी, गठिया, फोड़े फुन्सी, इत्यादि बीमारियों से वह बचा रहता है।

कण्ठमाला—बछनाग को नींबू के रस में घोट कर लेप करने से कंठमाला में लाभ होता है।

बिच्छू का विष—बछनाग का लेप करने से और इसको थोड़ी मात्रा में खिलाने से बिच्छू का विष उतरता है।

बादी के दर्द—कुटे हुए २॥ तोला बछ नाग को अलसी के आधा सेर तेल में औटाकर उस तेल की मालिश करने से हर किस्म के बादी के दर्द आराम होते हैं।

निमोनिया—दूधिया बछनाग को बहुत थोड़ी मात्रा में देने से निमोनिया में लाभ होता है मगर शर्त यह है कि जब बीमारी शुरु हो और बुखार तेज हो तब इसको देना चाहिये।

इसके अतिरिक्त गठिया, खांसी और धनुर्वात में भी इससे बहुत लाभ होता है।

बनावटें—

माजून बच्छ नाग—हरड़ काली और चित्रक तीन २ तोला, पीपल १॥ तोला, बछनाग दूधिया ६ माशे, इन सबको पीस छानकर गाय के घी में चिकना करके १६॥ तोले शहद में मिला लें। इस माजून को १॥ माशे से लेकर ३ माशे तक की मात्रा में देने से श्वेत कुष्ट, गलित-कुष्ट, दमा इत्यादि रोगों में लाभ होता है, और मनुष्य की सर्वांगीण शक्तियां बढ़ती हैं। इसको लेने के पहिले पेट साफ करने के लिये जुलाब ले लेना चाहिये।

माजून बच्छ नाग नं० २—हरड़, बहेड़ा, आंवला, चित्रक, सब एक २ तोला, जायफल, सफेद इलायची के बीज, कुन्दर, मस्तगी, कालीमिरच, नागकेशर, पीपल, नकछिकनी, ग्वारपाठा (घीकुंआर) का अकरा और तेजपात ये सब चीजें तीन २ तोला, दूधिया बछनाग १॥ तोला इन सबको कूट छानकर शक्कर की चाशनी में मिलाकर माजून बना लें। इस माजून को २ माशे की मात्रा से से उपरोक्त सब फायदे होते हैं।

तिला बच्छ नाग—बछ नाग काला १ तोला, अकरकरा १ तोला, सिंदूर १ तोला, आक का

दूध ४ तोला, गाय का मक्खन १० तोला। इनमें जो दवाइयां पीसने सरीखी हो--उनको पीसकर आक के दूध और मक्खन के साथ उनको कढाई में डालकर नीम की लकड़ी में तांबे का पैसा लगाकर उसे ४ दिन तक खूब घोटे और फिर कुछ दिनों तक पडा रखें जिससे कि उसकी तेजी कम हो जाय।

इस तिला में से १ माशा लेकर रात के समय लिंगेन्द्रिय पर सीवन और सुपारी छोड़कर मालिश करें और ऊपर से नागरबेल का पान बाँध दें। सबेरे गरम पानी से उसको धो डालें। अगर सरदी का मौसम हो तो मालिश करने के पहिले दवा को जरा सा गरम कर लिया करें। इस तिला के प्रयोग से कुछ ही दिनों में लिंगेन्द्रिय की नसों की कमजोरी, बाँका टेढ़ापन, हस्त मैथुन तथा दूसरी करतूतों से पैदा हुई नपुंसकता मिट जाती है और मनुष्य की कामशक्ति जाग्रत होती है।

——:o:——

बच्छनाग दूधिया

नाम—

संस्कृत—वत्सनाभ। हिन्दी—सफेद बछनाग। काश्मीर—बनवलनाग। पंजाब—दूधिया-विष। लेटिन—Aconitum Napellus (एकोनिटम नेपलेस)।

वर्णन—

इस बछनाग का क्षुप हिमालय में तथा यूरोप में पैदा होता है। इसके पत्ते और जड़ें औषधि प्रयोग में काम आती हैं। इसकी जड़ें काले बछनाग की अपेक्षा छोटी होती हैं। ये एक से तीन इञ्च तक लम्बी, गाजर के आकार की, ऊपर से उदी रङ्ग की और भीतर से सफेद होती हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके गुण भी काले बछनाग के समान ही होते हैं। मगर यह उसकी अपेक्षा सौम्य होता है। यह कहा जा सकता है कि काला बछनाग बाह्य उपचार और लेपादि द्रव्यों के लिये विशेष उपयोगी होता है। दूधिया बछ नाग खाने के काम में उत्तम होता है। दूधिया बछ नाग में काले बछ नाग की अपेक्षा कम और सौम्य-विषैले तत्व रहते हैं। इसका लेप त्वचा के ऊपर करने से त्वचा की स्पर्श शक्ति बहुत कम हो जाती है। मुह में जबान पर इसको स्पर्श करने से पहिले जबान पर चींटी चलने सरीखा अनुभव होता है, फिर लार छूटने लगती है और फिर जबान में जड़ता पैदा होती है जो बहुत देर तक कायम रहती है। पेट में जाने पर यह पेट की उष्णता को बढाता है। आमाशय के ज्ञान तन्तुओं को जड़ कर देता है। इससे नाड़ी का वेग और उसकी शक्ति शिथिल हो जाती है, हृदय की गति धीमी तथा शांत हो जाती है तथा पेशाब और पसीने की तादाद बढ जाती है।

इस औषधि में नाड़ी और हृदय शामक धर्म के साथ २ ज्वर और शोथ नाशक धर्म भी बहुत प्रभावशाली रहता है। यह एक प्रभाव शाली अवसादक, वेदना नाशक, सूजन को नष्ट करने वाला,

पसीना लाने वाला और बडी मात्रा में तीव्र विष होता है। यह रक्त में बहुत जल्दी घुल जाता है और रक्ताभिसरण पर इसकी अच्छी क्रिया होती है। डिजिटेलिस की तरह बच्छनाग भी हृदय की पेशियों और हृदय में जाने वाली वात नाड़ियों को उत्तेजना देता है। जिससे हृदय की गति मंद होती है और हृदय को आराम मिलता है। उसके पश्चात् रक्त का दबाव कम होता है। मगर तत्पश्चात् इससे हृदय की गति और रक्त का दबाव बढता है और हृदय की क्रिया अव्यवस्थित होकर नाड़ी की गति बिगड़ जाती है। मगर यह स्थिति इसकी अधिक मात्रा होने पर ही होती है। प्रमाणित और अल्प मात्रा से यह उपद्रव नहीं होते।

बच्छनाग एक उत्तम सूजन नाशक औषधि है। गले के अन्दर टांसिल्स में होने वाली सूजन इसके प्रयोग से बहुत जल्दी उतर जाती है। सूजन युक्त ज्वर में अथवा कफ प्रधान नवीन ज्वर में सूजन को कम करने के लिये बच्छनाग को प्रारंभ से ही देना चाहिये। कफ और वात प्रधान रोगों को यह एक प्रभाव शाली और प्रधान औषधि है।

इसको छोटी २ मात्रा में बार २ देने से यह बहुत उत्तम कार्य करती है। बच्चों और युवक पुरुषों के लिये यह विशेष रूप से लाभदायक होती है। वृद्ध पुरुषों पर इसका उपयोग नहीं करना चाहिये। बच्छनाग का वेदनाशामक गुण बहुत उत्तम होता है। इसलिये मस्तक शूल, दंत शूल, मज्जा तन्तुओं का शूल, इत्यादि पीड़ा युक्त रोगों में इसको पेट में देने से और इसका लेप करने से बडा लाभ होता है।

आमाशय की पीडा और जलन तथा गर्भावस्था की वमन में इसको देने से बडा लाभ होता है। हृदय की धड़कन तथा ज्ञान तंतुओं की वजह से होने वाली धड़कन (Nerve's Palpitation) को कम करने के लिये और रक्ताभिसरण के दबाव को कम करने के लिये भी यह एक उत्तम वस्तु है। सर्दी की वजह से मासिक धर्म एक दम बंद हो गया हो अथवा मासिक धर्म बहुत होता हो तो दोनों ही हालतों में बच्छनाग को देने से बड़ा लाभ होता है। मधु प्रमेह, बहुमूत्र, स्वप्न दोष, इत्यादि रोगों में बच्छनाग को देने से पेशाब और शक्कर की तादाद दिनों दिन कम होती जाती है। आमवात, संधिवात श्वेत कुष्ट, वात रक्त इत्यादि रोगों में भी इसका उपयोग होता है।

इसकी मात्रा, इसके विष की प्रतिक्रिया और उस प्रतिक्रिया को शांत करने के उपाय, काले बच्छनाग के समान ही समझना चाहिये।

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है हमेशा इस बात का ख्याल रखना चाहिये कि शोधन करने और खाने के काम में हमेशा दूधिया बच्छनाग ही लेना चाहिये। काला बच्छनाग बहुत उग्र होता है। इसलिये उसको सिर्फ लेप के ही काम में लेना चाहिये।

उपयोग—

धृगु शोथ ज्वर—बच्छनाग शुद्ध, शुद्ध हींगलू, शुद्ध सुहागा, नाग दती, निर्गुंडी का रस। इन सब चीजों को समान भाग लेकर पीस कर आधी २ रत्ती की गोलियां बना लेना चाहिये। इन गोलियों में

से १ से २ गोली योग्य अनुपान के साथ देने से व्रण शोथ ज्वर में बहुत लाभ होता है।

अभिष्यन्द युक्त ज्वर—कुनेन, कपूर और शुद्ध बछनाग को समान भाग लेकर आधी रत्ती की मात्रा में देने से अभिष्यद युक्त ज्वर मिटता है।

कफ ज्वर—बछनाग, शुद्ध सुरमा, शुद्ध शोरा, शुद्ध नौसादर और कपास की जड की छाल। इन सब औषधियों को अडूसे के रस में घोट कर एक २ रत्ती की गोलियां बना लेना चाहिये। कफ ज्वर में इन गोलियों को देने से बड़ा लाभ होता है।

वातविकार—शुद्ध बछनाग, शुद्ध मेनसिल और शुद्ध धतूरे को पारिजात के रस में खरल करके देने से सब प्रकार की वात व्याधियां दूर होती हैं।

आमाशय की व्याधियाँ—बछनाग, प्रवाल भस्म, जायपत्री, लवंग इन सब औषधियों को भांगरे के रस में खरल करके देने से आमाशय की सब व्याधियां मिटती हैं।

——:o:——

बखूर-इ-मरियम (हाथाजोरी)

नाम—

हिन्दी—हाथाजोरी। उर्दू—बखूर-इ मरियम। ईरान—चुबक उशनान। लेटिन—Cyclamen Persicum (सायक्लेमेन परसीकम)।

वर्णन—

इस वनस्पति की उत्पत्ति ईरान में होती है। इसके पत्ते एक तरफ से हरे और दूसरी तरफ से सफेद होते हैं और उन पर रुआं होता है। इसका फूल गुलाब के फूल की तरह होता है। कुछ फूलों का रङ्ग नीला भी होता है। इसकी जड़ गोल, कंद की तरह काली और शलगम की तरह होती है। मगर उससे कुछ चपटी होती है। यह वनस्पति अक्सर करके झाडों की छाया में और तर जमीनों में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति की जड़ वामक, आनुलोमिक, पसीना लाने वाली, मूत्रल, रज. प्रवर्तक, सूजन को नष्ट करने वाली और विष नाशक होती है। इसकी जड़ को मुंह में रखने से लार छूटती है और पेट में जाने पर आमाशय में दाह पैदा होती है। बडी मात्रा में इसको लेने से वमन होती है, आमाशय और अंतडियों में दाह पैदा होती है और शरीर के भीतरी भाग में सूजन आकर उस भाग की जीवनी शक्ति कमजोर हो जाती है। मस्तिष्क और मज्जातंतु की क्रिया पर इसका कोई असर नहीं होता।

इसके ये सब उपद्रव इसमें रहने वाले एक विषैले द्रव्य की वजह से होते हैं। यह द्रव्य अरीठे और शिकाकाई में पाये जाने वाले विषैले द्रव्य से बहुत मिलता हुआ होता है। इसका स्वाद कड़वा

श्रौर तीखा होता है पानी में इसको डालने से यह फौरन घुल जाता है श्रौर पानी में फेन पैदाकर देता है।

वखूरीमरियम का खास उपयोग जुलाबके लिये किया जाता है। इसको देने से जँमाइयां आती हैं। वमन होते हैं श्रौर बडी मात्रा होने से पसीना छूटता है, चक्कर आते हैं श्रौर आक्षेप होने लगते हैं।

गंड माला की गांठों की सूजन को कम करने के लिये इसका लेप किया जाता है। उदर रोगों में दस्त साफ होने के लिये पेट पर इसका लेप किया जाता है श्रौर पेशाब होने के लिये बस्ति प्रदेश पर इसका लेप किया जाता है।

कर्नल चोपरा के मतानुसार यह वनस्पति वामक, ऋतुभाव नियामक, विरेचक, मूत्रल श्रौर सर्प विष नाशक होती है। इसमें ग्लुकोसाइड श्रौर सेपानिन सायक्लेमिन नामक पदार्थ पाये जाते हैं।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह तीसरे दर्जे में गरम श्रौर खुश्क होती है। इसकी जड पेशाब श्रौर मासिक धर्म को साफ करती है। पसीना अधिक लाती है। यकृत के सुद्दों को बिखेरती है। चेहरे के दागों को साफ करती है। इसकी जड़ को कुचल कर शहद या शिकजबीन के साथ मिला कर पीलिये के रोगी को पिलावें श्रौर बाद में उसको कपड़ा श्रोढाकर सुला दें तो पीले रंग का पसीना श्राकर उसका पीलिया चला जायगा। क्योंकि इससे यकृत की सफाई हो जाती है श्रौर सारे शरीर में जो पित्त का असर हो जाता है वह निकल जाता है।

जहां तक हो इस श्रौषधि को अकेले उपयोग में नहीं लेना चाहिये। बल्कि कतीरा गोंद, अनार के दानों का रस अथवा शराब या शहद के साथ अथवा श्रौर किसी दर्पनाशक वस्तु के साथ इसको लेना चाहिये। गरम प्रकृति वाले लोगों को श्रौर ज्वर के रोगियों को यह श्रौषधि नहीं देना चाहिये।

इसकी जड दमे में भी लाभ पहुंचाती है। इसको सिरके के साथ लेप करने से तिल्ली की सूजन मिटती है। इसको योनि में रखने से मासिक धर्म साफ हो जाता है श्रौर मरा हुआ बच्चा बाहर आ जाता है। इसको पीसकर कष्ट प्रसूता स्त्री के पेट या नाभि पर लेप करने से भी बच्चा आसानी से पैदा हो जाता है। गर्भवती स्त्री को इस श्रौषधि का प्रयोग नहीं करना चाहिये क्योंकि इसके सेवन से गर्भ गिरने की आशंका रहती है।

इसकी डाली या पत्तों का लेप कंठ माला की सूजन श्रौर दूसरी सख्त सूजन को बिखेरता है। इसके पत्तों का रस कान में डालने से कान के जख्म को आराम हो जाता है, श्रौर नाक में डालने से मृगी में लाभ में होता है। जहरीले जानवरों के डंक पर भी इसको लगाने से बहुत लाभ होता है।

मुज़िर—यह श्रौषधि अधिक मात्रा में सिर दर्द पैदा करती है। गरम प्रकृति वालों के लिये हानिकारक है। गुदा, फुप्फुस श्रौर मसाने को नुकसान पहुंचाती है।

दर्पनाशक—उन्नाव, कतीरा श्रौर अनार का रस।

मात्रा– ३ माशे।

——:०.——

बरऊजसफ़ा

नाम -

हिन्दी यूनानी—बरजसफा। फारसी—बुरामादरन।

वर्णन—

यह एक जाति का घास होता है। जो अफसतीन से मिलता जुलता होता है। इसके पौधे एक हाथ के करीब ऊंचे होते हैं। इसकी डालियाँ पतली २, पत्ते छोटे २ और फूल सोया के फूल की तरह होते हैं। फूल सफेद, पीले और नीले रंग के होते हैं। इसके पत्ते और डालियों पर थोड़ा चेपदार पदार्थ लगा हुआ रहता है। यह वनस्पति तर जमीनों में, समुद्री किनारो पर और छाया वाली जमीनों में पैदा होती है। यह हर साल गर्मी के मौसम में उगती है। इसकी नर और मादा दो जातियां होती हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह औषधि मूत्रल, दोषों को साफ करने वाली, पथरी को तोड़ने वाली, कृमिनाशक और रोम कूपों को साफ करने वाली होती है। इसके फूलों को ७ माशे की मात्रा में शहद में मिला कर चटाने से पेटसे कद्दू दाने निकल जाते हैं। इसके प्रयोगसे रुका हुआ मासिक धर्म जारी हो जाता है। कष्ट प्रसूता स्त्री को यह औषधि देने से बच्चा आसानी से पैदा हो जाता है। गर्भाशय की सूजन में भी लाभ दायक है। इसको ७ माशे की मात्रा में पानी मिला कर पीने से बुखार, बेहोशी और जुकाम में बहुत लाभ होता है। इसका लेप हर प्रकार के सिर दर्द को आराम करता है इसकी जड को पेडू पर लेप करने से पेशाब और मासिक धर्म साफ हो जाता हैं।

इसके फल का काढा दमे में बहुत लाभ पहुँचाता है। इसके फल को आधे तोले से १ तोले तक की मात्रा में पानी में जोश देकर पीने से गर्भाशय की वीमारी में लाभ होता है। इसको शराब के साथ मिला कर देने से पथरी में बहुत लाभ होता है। इसके पौधे को जला कर उसकी राख को जख्मों पर छिड़कने से जख्म जल्दी भर जाते हैं। इसके पत्तों की धूनी मकान में देने से मकान के सब जहरीले कीडे भाग जाते हैं। इसको शराब के साथ देने से जहरीली दवाओं का असर मिट जाती है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन गुर्दे को नुकसान पहुचाता है।

दर्पनाशक—अनीसून।

प्रतिनिधी—अफसंतीन।

मात्रा—चूर्ण की २ माशे से ७ माशे तक और काढ़े में ७ माशे से १। तोले तक। (ख० अ०)

——:०:——

बनंता

नाम—

हिन्दी—यूनानी—बनंदा।

वर्णन—

यह एक जाति का घास होता है जो जमीन पर बिछा हुआ रहता है। इसकी डालियां पतली, पत्ते छोटे २ और फूल सफेद रंग के होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति गरम होती है और इसके सेवन से पागलपन में लाभ पहुंचता है। (ख० अ०)

—:o:—

बखरुल कराद

नाम—

यूनानी—बखरुल कराद।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इस पर पत्ते बहुत आते हैं जो गुल दस्ते की तरह होते हैं। इसके फूल पीले, सब्ज़ नीले और काले और गंध तेज होती है। यह पहाड़ों पर वृक्षों की छाया में पैदा होती है। इसकी डालियों में एक लाल रंग का गोंद निकलता है जो कुंदरु की तरह होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से इस वनस्पति के पत्ते और डालियां दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती हैं और इसका गोंद तीसरे दर्जे में गरम होता है। यह सूजन को उतारती है। पथरी को तोड़ती है। गर्भ को गिरा देती है। इसका गोंद खाने से कफ से पैदा होने वाले लकवा, फालिज, सन्निपात और धनुष वात में फायदा होता है। कफ से पैदा होने वाली हर प्रकार की बीमारियों में यह लाभ पहुंचाती है। इसके निकले रस को गुलाब के तेल में मिलाकर कान में डालने से कान की पीड़ा दूर होती है और बहरे पन में लाभ होता है। इसका धुआं नाक में पहुंचाने से हिस्टीरिया में लाभ होता है।

सिरके और जैतून के तेल के साथ में इसको मलने से पुरानी वात में लाभ होता है। इस वनस्पति को हमेशा नंगोल के साथ लेना चाहिये।

—:o:—

बखुर—ऊल—सूदान

नाम—

यूनानी—बखुर-ऊल-सूदान

वर्णन—

यह भी एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके फूलों का रंग सफेद होता है। इस वनस्पति में एक प्रकार का चिकना तरल पदार्थ भरा हुआ रहता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। इसको जैतून के तेल के साथ मिला कर पका कर कफ और वायु से पैदा हुई सख्त सूजन और गृध्रसी वात में मालिश करने से लाभ होता है। इसकी मात्रा ४॥ माशे तक है।

——:०:——

बशना

नाम—

हिन्दी—यूनानी—बशना

वर्णन -

यह एक छोटा पौधा होता है, इसकी डालियां बहुत बारीक होती हैं। यह सब डालियां जमीन पर फैली हुई होती हैं। इसके पत्ते बहुत छोटे, गोल और रूएंदार होते हैं फूल बहुत छोटे और सफेद रंग के लगते हैं। इसके बीज धनिये के दाने सरीखे होते हैं।

गण दोष और प्रभाव

यह पौधा कुछ कडवा और काबिज होता है। इसको पानी में जोश देकर पीने से पेट का आफरा तिल्ली की सूजन और सांस की तगी मिट जाती है।

——:०:——

बसल सूरना

नाम—

यूनानी—बसल सूरना।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके पत्ते गधना के पत्तों सरीखे होते हैं। इसका फूल नीला होता है। इसकी जड़ में एक छोटा सा कंद रहता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। इसके बीज या इसकी जड को शराब के साथ लेने से पीलिया मिट जाता है।

बख्नू फ़रसन

नाम—

यूनानी—बख्नू फ़रसन।

वर्णन—

इस वनस्पति के पत्ते तज के पत्तों की तरह होते हैं। इन पत्तों का स्वाद तेज होता है। इसके फूल जंगली तुलसी के फूल की तरह, बीज गदने के बीजों की तरह और जड गोल गठान की तरह होती है। इसकी जड़ में शराब की तरह तेज गंध आती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से इसकी जड तीसरे दर्जे में गरम और दूसरे दर्जे में खुश्क होती है। इसका पचांग सूजन को उतारने वाला होता है। शरीर के अन्दर कहीं कांटा अथवा कील अथवा तीर की अणी लग जाय तो इसका रस लगाने से खींच ली जाती है। इसके पत्तों को पीस कर लगाने से बड़े २ फोड़े बिखर जाते हैं। इसके बीजों को पीस कर कफ की सूजन पर लगाने से सूजन बिखर जाती है।

बकला-अल-बरार

नाम—

यूनानी— बकला-अल-बरार

वर्णन—

इस वनस्पति के पत्ते जंगली कासनी की तरह मगर उनसे कुछ छोटे होते हैं। इसकी जड जमीन के अन्दर फैली हुई रहती है। इसके फूल पीले रंग के और बीज बिनौले की तरह होते हैं। यह रेतीली जमीनों में ज्यादा पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह पहले दर्जे में सर्द और तर होती है। यह दिल की घबराहट को दूर करती है। मुंह में खुशबू पैदा करती है। मसूढ़ों को मजबूत करती है। यह आमाशय, यकृत और आंतों को ताकत देती है। इसकी जड़ को धूनी देने से चौथिया ज्वर मिटता है।

—:o:—

बकाल यहूदिया

नाम—

यूनानी—बकाल यहूदिया ।

वर्णन—

कुछ लोगों ने इसको जंगली कासनी माना है मगर हकीम गिलानी का मत है कि यह जंगली कासनी नहीं है । इसका पौधा कांटे वाला होता है । इसके पत्ते गोल होते हैं जिनके किनारों पर नाजुक कांटे होते हैं । इसकी डालियां और जड़ सफेद होती है यह वनस्पति अक्सर रेगिस्तान और समुद्र के किनारों पर पैदा होती है ।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह पहले दर्जे में गरम और खुश्क होती है । इसकी जड़ और सुद्दाव के पत्तों का काढ़ा करके पीने से पसलियों का दर्द मिटता है । हाथी पांव, पिंडलियों की सूजन और फोडे फुन्सियों पर इसको जौ के आटे के साथ लगाने से लाभ होता है ।

——:o:——

बलसू

नाम—

यूनानी—बलसू ।

वर्णन—

यह एक जंगली वृक्ष होता है । यह मोटे २ कांटों से भरा हुआ रहता है । हर कांटे के नीचे २ पत्ते मेंहदी के पत्तों की तरह मगर उनसे कुछ छोटे लगे हुए रहते हैं । पत्तों के बीच में फूल आते हैं । इसके फल फालसे के फल के बराबर मगर उनसे कुछ चपटे होते हैं । इसके कच्चे फल हरे, आधे पके हुए फल केसरिया और पूरे पके हुए फल लाल हो जाते हैं । हर एक फल में एक से लेकर तीन तक बीज रहते हैं ।

गुण-दोष और प्रभाव—

इसका फल गरम, तर, शक्तिवर्धक, काम शक्ति को बढ़ाने वाला और कामेन्द्रिय में उत्तेजन पैदा करने वाला होता है । यह पेचिश को मिटाता है, प्रमेह और धातुस्राव में लाभ पहुंचाता है । इसके पत्ते ज्वर में बहुत लाभदायक होते हैं ।

——:o:——

वलतुल अरज

नाम—

यूनानी—बलतुल अरज।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके पत्ते कासनी के पत्तों की तरह चौड़े और हरे होते हैं। यह रेतीली जमीन में ज्यादा पैदा होती है। औषधि में इसकी जड़ काम में आती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। यह शरीर के भीतर की सूजन को बिखेर देती है। पेशाब और मासिक धर्म को साफ करती है। इसको पीस कर शहद में मिला कर खाने से तिल्ली के रोग आराम होते हैं। इसके लेप से पुराने फोडे साफ हो जाते हैं। मसाने की पथरी में भी यह लाभ पहुँचाती है।

बलबूस

नाम—

यूनानी—बलबूस।

वर्णन—

इसका पौधा प्याज के पौधे की तरह होता है, इसके पत्ते प्याज के पत्तों की तरह मगर उससे कुछ चौडे होते हैं, इन पत्तों की गंध और स्वाद प्याज के समान होता है। सरदी के दिनों में इस पौधे पर पीले रंग के फूल आते हैं जो बनफशा के फूलों की तरह होते हैं। इसकी जड प्याज की छोटी गांठ के बराबर मगर उससे कुछ लम्बे आकार की होती है।

इसकी दो जातियां होते हैं। एक जाति विषैली होती है जो खाने के काम में नहीं आती है। दूसरी जाति खाई जा सकती है जिसका स्वाद कुछ कड़वा और मीठा होता है। इसकी हर एक गठान के अन्दर एक बीज होता है। जो सफेद रंग का होता है। इसकी विषैली जाति को खाने से बहुत जोर से वमन होती है। इसके खाने से हलक में सूजन पैदा होकर आदमी मर जाता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी विषैली जाति चौथे दर्जे में गरम और खुश्क और दूसरी जाति पहले दर्जे में गरम और दूसरे दर्जे में खुश्क होती है।

इसकी दूसरी अर्थात् बिना विष वाली जाति को पानी में जोश देकर सिरका मिलाकर पीने से पट्ठों का दर्द मिटता है। इसको पीस कर शहद में मिलाकर लगाने से अधिक पसीने का आना बन्द हो जाता है। श्वेत कुष्ट की बीमारी ने अगर अधिक जोर न पकड़ा हो तो इसको लगाने से आराम हो

जाता है। फोडे फुन्सी आराम होने के बाद अगर वहां काले दाग रह गये हों तो इसका लेप करने से मिट जाते हैं। शरीर के अन्दर अगर किसी शस्त्र की नोक रह गई हो तो इसका लेप करने से वह चमड़े के तरफ खिंच आती है। सिर के जखम और डाढ़ी की फुन्सियों पर भी इसको लगाने से बड़ा लाभ होता है।

इसकी मीठी जाति पाचन क्रिया को शुद्ध करती है। भूख और कामशक्ति को बढाती है। इस को आमाशय और पेंडू पर लेप करने से गर्भस्थ बच्चा और आंवल बहुत जल्दी निकल जाते हैं। पागल कुत्ते के काटने पर भी इसको लगाने से लाभ होता है। बिच्छू के विष पर इसको लगाने से और अजीर के साथ खाने से लाभ होता है।

इसकी जहरीली जाति को खाने से पहले बदन में खुजली पैदा होती हैं, फिर खून के दस्त लगते हैं और फिर गला सूज कर आदमी मर जाता है। इसके विष को नष्ट करने के लिये रोगी को पहिले मूली खिलाना चाहिये फिर पोदीने के पत्तों का पानी और काजी पिलाना चाहिये तथा काफी मात्रा में शहद चटाना चाहिये और तेज एनिमा लगाना चाहिये।

मुजिर—यह पट्ठों को नुकसान पहुचाती है, जबान और तालू में खुश्की पैदा करती है जिससे जबान फट जाती है। स्मरणशक्ति कम हो जाती है और पेट में मरोड़ होकर पेट फूल जाता है।

दर्पनाशक—कासनी, ताजा दूध, शहद और अनीसून।

प्रतिनिधि—कौली कांदा।

—:o:—
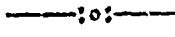
वंशलोचन

नाम—

संस्कृत—वंशलोचन, त्वकक्षीरी, क्षीरिका, कपूर रोचना, तुङ्गा, रोचनिका, पिंगा, वंशशर्करा, वंश कर्पूर। **हिन्दी**—वंशलोचन। **गुजराती**—वाँसकपूर। **बंगाल**—बंशलोचन, वांशकावर। **मराठी**—वंशलोचन। **फारसी**—तबाशीर। **अंग्रेजी**—Bamboo Manna। **लेटिन**—Bambuna Arundinacea (बांबूना अरंडीनेसीआ)।

वर्णन—

वंशलोचन एक जाति के बाँस के अन्दर से- जिसे नजला बांस कहते हैं- निकलता है। यह बाँस मादा जाति का होता है और इसमें एक जाति का मद जम जाता है जो सूखने के पश्चात् निकाला जाता है। इसको हिन्दी में वंशलोचन और गुजराती में बांसकपूर कहते हैं। इस वस्तु की कीमत अधिक होने से इसमें कई प्रकार की नकली चीजों की मिलावट करदी जाती है। इसलिये इसको लेते समय बहुत सावधानी रखने की जरूरत है। असली वंशलोचन सफेद रङ्ग का होता है मगर उस पर नीले

रंग की झाई होती है। इसको लकड़ी अथवा पत्थर पर घिसने से किसी प्रकार का निशान नहीं होता। इसको हाथ की चुटकी में लेकर दबाने से यह नहीं टूटता और मुँह में रखने से भी एक दम नहीं गलता। नकली वंशलोचन असली के बराबर ओज पूर्ण नहीं होता। उसको पत्थर पर घिसने से उसकी लकीर उघड़ जाती है। असली वंशलोचन में पानी को सोख लेने की शक्ति रहती है और पानी सोख लेने के पश्चात् वह पार दर्शक हो जाता है। नकली वंशलोचन पानी में डालते ही घुल जाता है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से वंशलोचन रूखा, कसैला, मधुर, रक्त का शुद्ध करने वाला, शीतल, ग्राही, वीर्यवर्धक, कामोद्दीपक और क्षय, श्वास खांसी, रुधिर विकार, मन्दाग्नि, रक्त पित्त, ज्वर, कुष्ट, कामला, पांडुरोग, दाह, तृषा, व्रण, मूत्रकृच्छ और वात को नष्ट करता है।

रासायनिक विश्लेषण—

वंशलोचन में ७० प्रतिशत सेलिसिक एसिड और ३० प्रतिशत पोटास तथा चूना रहता है। डाक्टर देसाई के मत से इसमें ९०॥ प्रतिशत सेलिसिक एसिड, १॥। प्रतिशत यवक्षार और ३ प्रतिशत मण्डूर का अंश रहता है।

जिस वंशलोचन में जितनी अधिक सेलिसिक एसिड होती है वह उतना ही उत्तम रहता है। इसके प्रयोग से श्वासेन्द्रिय की श्लेष्म त्वचा को बल मिलता है और इस वजह से उसके द्वारा उत्पन्न होने वाला कफ कम तादाद में उत्पन्न होता है। इस कार्य के लिये शीतोपलादि चूर्ण का योग बहुत उत्तम साबित हुआ है। यह चूर्ण बच्चों और नौजवानों के लिये विशेष रूप से उपयोगी होता है। इस से कफ रोगों के अन्दर त्वचा की दाह कम होती है और कभी २ कफ के साथ खून का पड़ना बन्द हो जाता है।

कर्नल चोपरा के मतानुसार वंशलोचन एक उत्तेजक और ज्वर नाशक वस्तु है। इससे पक्षाघात की शिकायतें, दमा, खांसी और साधारण कमजोरी में बहुत लाभ होता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में सर्द और खुश्क होता है। यह काबिज, हृदय को आनन्द देने वाला, आमाशय की गरमी को दूर करने वाला और प्यास को बुझाने वाला होता है। हृदय, यकृत और आमाशय को यह ताकत देता है। इसको पीसकर मुँह में बुर बुराने से मुँह के छाले मिटते हैं। खांसी, बुखार, पित्त के रोग, गरमी का पागलपन, बेहोशी तथा पित्त के दस्त और वमन में यह बहुत मुफीद है।

गर्मी की वजह से दिल में दहशत, गमगीनी और वहम पैदा हो जाय तो इसके प्रयोग से बहुत लाभ होता है। गर्मी की वजह से पैदा हुई अङ्गों की कमजोरी में इससे बहुत लाभ होता है। बवासीर से बहने वाले खून और अनैच्छिक वीर्यस्राव को भी यह बन्द करता है। इसको एक पोटली में बांधकर पानी में डाल दें और उस पानी में से थोड़ा २ पानी ऐसे रोगियों को पिलावें जिनको बहुत प्यास लगती

हो तो उनको बहुत लाभ होगा। मिट्टी खाने वाले बच्चों को इसकी ककरी हाथ में देने से उनकी मिट्टी खाने की आदत छूट जाती है।

उपयोग--

सूखी खाँसी—इसको १० रत्ती से २० रत्ती तक की मात्रा में शहद के साथ चटाने से सूखी खांसी मिटती है।

पेशाब की जलन—गोखरू, वंशलोचन और मिश्री के चूर्ण को कच्चे दूध के साथ देने से मूत्र की जलन मिटती है।

विष विकार—साधारण विष विकार के अन्दर इसको शहद के साथ चटाने से शान्ति मिलती है।

मुँह के छाले—वंश लोचन को शहद में मिलाकर लेप करने से मुँह के छाले मिटते हैं।

श्वास और खाँसी—इसको शहद के साथ चटाने से बालकों का श्वास और खांसी मिटती है।

पुराना ज्वर—वंशलोचन और गिलोय के सत को शहद में मिलाकर चटाने से पुराना ज्वर मिटता है।

रक्त पित्त—शहद और मिश्री के साथ इसका सेवन करने से रक्त पित्त मिटता है।

बनावटें—

शीतोपलादि चूर्ण—मिश्री १६ तोला, वंशलोचन ८ तोला, छोटी पीपर ४ तोला, छोटी इलायची के बीज २ तोला और दालचीनी १ तोला। इन सब चीजों को पीसकर कपड़े में छान लेना चाहिये। यह आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध शीतोपलादि चूर्ण का पाठ है। जो कि शरीर की साधारण कमजोरी, दुर्बलता, क्षय, दम, खांसी और मन्दाग्नि में बहुत उपयोगी माना जाता है। मगर हमारे अनुभव में आया है कि यदि इस नुस्खे में ४ तोला गिलोय सत्व और २ तोला प्रवाल भस्म और मिला दी जाय तो यह बहुत प्रभावशाली हो जाता है और मनुष्य के बल, कांति और ओज के बढ़ाने में बड़ा सहायक होता है।

सुजाक नाशक गोली—वंशलोचन, कवाब चीनी, असली नाग केशर और इलायची के बीज ये चारों चीजें समान भाग लेकर पीसकर कपड़े में छान लेना चाहिये। फिर इस चूर्ण को असली मलयागिरी चन्दन के तेल में अच्छी तरह तर करके झड़ बेर के बराबर गोलियाँ बना लेना चाहिये। इन गोलियों में से एक २ गोली सबेरे शाम ४ तोला पानी में डालकर उसमें आधा तोला शक्कर मिलाकर अच्छी तरह घोलकर पी जाना चाहिये। इस प्रयोग से व्यभिचार जनित नई सुजाक की जलन एक ही दिन में शान्त हो जाती है और ७ दिन में तो भयङ्कर सुजाक भी नष्ट हो जाता है। यह औषधि जब तक चालू रहे तब तक पथ्य में सिर्फ गेहूं की रोटी, घी और शक्कर ही देना चाहिये। (जंगलनी जड़ी बूटी)

——:०:——

बरांगोम (परदेसी भांगरो)

नाम--

गुजराती—परदेशी भांगरो । संथाल—बरांगोम, वीरबरांगोम । लेटिन—Glossogyne Pinnatifida (ग्लोसोजिने पिनेटिफिडा) ।

वर्णन—

इस वनस्पति के पौधे २ से ३ फीट तक लम्बे होते हैं। ये अक्सर जमीन पर फैले हुए रहते हैं। इसके पत्ते गहरे हरे रग के और कगूरेदार होते हैं। इन पत्तों के बीच में से फूलों की लम्बी डंडियां निकलती हैं और हर एक डण्डी पर एक २ पीले रंग का फूल आता है। इसके बीज भूरे और रुएँदार होते हैं। इस सारे पौवे पर सख्त रुए रहते हैं। इस पौवे का दृश्य बहुत ही सुन्दर होने से यह कई जगह बगीचों के क्यारों में लगाया जाता है। इस पौवे की मूल उत्पत्ति स्थान अमेरिका है। मगर आज कल यह इस देश में भी बहुत लगाया जाता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके पत्तों का रस तेल में मिलाकर कान में टपकाने से कान का दर्द आराम होता है। सूजन और चर्म रोगों पर भी इसका रस लगाया जाता है। बवासीर के ऊपर इसके पत्तों का पुल्टिस बांधा जाता है।

संथाल जाति के लोग इसकी जड़ को सांप और बिच्छू के विष पर लगाने के काम में लेते हैं।

——:०:——

बावची

नाम—

संस्कृत—सोमराजि, कृष्णफला, कुष्ठनाशिनी, सोमवल्ली, कालमेषिका, चन्द्रलेखा, सुप्रभा, कुष्ठ हन्त्री, कांबोजि, पूतिगंधा, चन्द्राणी इत्यादि। हिन्दी-बावची बकुचि। बंगाल-बावची, हकुच, लता कस्तूरी। बम्बई—बावची। गुजराती—बावची। मराठी—बावची, पंजाब - बावची। तामील—करपोकरपी, करपूल्हरीशी। तेलगू—भवजी, कालागिजा। उर्दू—बावची। लेटिन -Psoralea Corylifolia (सोरेलिया कोरिलीफोलिया) ।

वर्णन -

बावची के पौधे बरसात के दिनों में बहुत पैदा होते हैं। ये एक से लेकर ४ फीट तक ऊंचे होते हैं। इनकी डालियां सीधी होती हैं। इसके पत्ते ग्वार के पत्तों से मिलते जुलते होते हैं। इन पत्तों पर काले रङ्ग के कुछ छींटे पड़े हुए रहते हैं। इन पत्तों के कोनों में से १ से ३ इञ्च तक लम्बे डण्ठल निकलते हैं और उन डण्ठलों के ऊपर फीके और गहरे बैंगनी रंग के अनेकों छोटे २ फूल आते हैं। इन फूलों

का आकार तुलसी की मंजरी की तरह दिखलाई देता है। इन फूलों में से बारीक और तोते के समान हरे रंग की फलियां निकलती हैं जो पकने पर काली पड़ जाती हैं। इन फलियों में से काले रंग के बीज निकलते हैं जिनको बावची के बीज कहते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बावची मधुर, कड़वी, पचने में चरपरी, धातु परिवर्तक कब्जियत को दूर करने वाली, शीतल, रुचिकारक, सारक, कफ और रक्त पित्त का नाश करने वाली, रूखी, हृदय को हितकारी तथा श्वास, कुष्ट, प्रमेह, ज्वर और कृमियों का विनाश करने वाली होती है।

बावची का फल पित्त जनक, कुष्टनाशक, कफ और वात को दूर करने वाला, कड़वा, केशों को उत्तम करने वाला, कांतिवर्धक, तथा वमन, श्वास, मूत्रकृच्छ, बवासीर, खाँसी, सूजन, आम और पांडु रोग का नाश करने वाला होता है।

बावची पाक में चरपरी, कड़वी, शीतल, रसायन मधुर, रुचिकारक, रूखी, हृदय को हितकारी, ग्राही, अग्निदीपक, बलकारक, कसैली. हलकी, मेधाजनक तथा रक्तपित्त, कफ, कोढ़, कृमि, श्वास, खांसी, प्रमेह, व्रण, त्रिदोष, वात, त्वचा के विकार, विष, कंडू और खुजली को नष्ट करती है।

बावची की एक दूसरी जाति और होती है जिसको संस्कृत में श्वित्रारि कहते हैं। यह जाति कुष्ट, त्रिदोष, रक्त विकार, वात रक्त और श्वेत कुष्ट को दूर करती है।

बावची की जड़ दांतों की सड़ान को दूर करती है। इसके पत्ते अतिसार को रोकने में उपयोगी हैं। इसके फल कड़वे, मूत्रल, पित्त को पैदा करने वाले, गलित कुष्ट को दूर करने वाले तथा चर्मरोग, कफ, वात, वमन, दमा, श्वास कुष्ट, बवासीर, ब्रोंकाइटीज, सूजन और पांडु रोग में लाभदायक है। इसके बीज मीठे, कड़वे, ज्वर और तृषा को मिटाने वाले, धातुपरिवर्तक, मृदुविरेचक, कृमिनाशक, और ज्वर नाशक होते हैं। ये कफ और रक्त पित्त को दूर करते हैं और हृदयरोग, दमा, श्वेत कुष्ट, तथा अनैच्छिक वीर्यश्राव में लाभदायक है। जख्म, चर्म रोग और गीली खुजली में ये फायदा पहुँचाते हैं। इनका तेल हाथी पांव में उपयोगी होता है।

बावची और श्वेत कुष्ट—

बावची के बीज भारतवर्ष में बहुत प्राचीन काल से श्वेत कुष्ट की एक प्रामाणिक औषधि की तरह काममें लिये जाते हैं। महर्षि चरक अपनी चरक संहिता में लिखते हैं कि चार भाग बावची के बीज और १ भाग तबकिया हडताल को लेकर गाय के मूत्र में पीसकर सफेद कुष्ट पर लेप करने से यह रोग नष्ट हो जाता है। आगे चल कर यही महर्षि लिखते हैं।

तीव्रेण कुष्टेन पुरीतमर्ती, यंसोमराजी नियमेनखादेत् ॥
संवत्सरं कृष्ण तिलद्वीतीयां स सोमराजी वपुषलातिशेते ॥

अर्थात् तीव्र कुष्ट रोग से जिसका शरीर खराब हो गया हो वह मनुष्य यदि १ वर्ष तक बावची

पाया जाता है।

सन् १६२३ में सेन, चटर्जी और दत्त ने इसके बीजों की विशेष रूप से परीक्षा की। उनके परिणाम स्वरूप इसमें एक साबुन बनाने के अयोग्य तेल (२) एक प्रकार का पीला अम्ल द्रव्य (३) और एक प्रकार का ग्लुकोसाइड पाया जाता है। इन लोगों ने बतलाया कि इसमें पाया जाने वाला तेल सबसे अधिक महत्वपूर्ण और प्रभावशाली वस्तु है। उन्होंने इस तेल का श्वेत कुष्ट और दूसरे चर्म रोग के रोगियों पर उपयोग किया और काफी सफलता प्राप्त की।

सन् १६२७ में चोपरा और चटर्जी ने बावची के बीजों के रासायनिक तत्वों का अध्ययन किया। उन्होंने बतलाया कि इसके बीजों में पाई जाने वाली सबसे अधिक महत्व की वस्तु एक प्रकार का उड़नशील तेल है। इसके अतिरिक्त इनमें एक स्थिर तेल, एक प्रकार की राल (Resin) और एक प्रकार का उपखार की तरह पदार्थ पाया जाता है। उन्होंने इसमें पाये जाने वाले उड़नशील तेल का विशेष रूप से अध्ययन किया। यह उड़न शील तेल भफके की क्रिया द्वारा (Distilled) प्राप्त किया जाता है।

कर्नल चोपरा लिखते हैं कि इसमें पाये जाने वाले उड़न शील तेल का त्वचा पर और श्लेष्मिक झिल्लियों पर प्रदाहक असर होता है। जीवन तत्व (Protoplasm) के ऊपर भी इसका प्रभाव ध्यान देने योग्य होता है। एक भाग इसेंशियल ऑइल का १० हजार भाग में डायल्यूशन करके देने से वह शरीर के भीतर के स्ट्रेप्टो कोसी (Streptococci) नामक कीटाणुओं को १० मिनिट में मार देता है। टाइफ्सस (Typhosus) नामक ज्वर के कीटाणुओं पर इस तेल का कोई भी प्रभाव नहीं होता है। विशूचिका और बेसेलेरी डिसेंट्री के कीटाणुओं पर भी इस तेल का प्रयोग किया गया, मगर उसके परिणाम भी आशा जनक नहीं रहें। चर्म रोगों के कीटाणुओं पर इस तेल के डायल्यूशन का प्रभाव काफी प्रभावशाली रहा।

कर्नल चोपरा लिखते हैं कि बावची के बीज बहुत प्राचीन काल से भारतवर्ष में श्वेत कुष्ट की एक लोकप्रिय औषधि रही है। इतना ही नहीं पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति से काम करने वाले राय बहादुर कन्हैयालाल दे ने भी इस औषधि की श्वेत कुष्ट के ऊपर बहुत जोरदार सिफारिश की है।

सन् १६२६ में कलकत्ता स्कूल आफ ट्राविकल मेडिसन में इसके बीजों से बनाये हुए कई प्रकार के प्रयोग भिन्न २ प्रकार के चर्म रोगियों पर आजमाये गये। इसके इसेंशियल ऑइल के १-१० हजार और १-२० हजार के तैयार किये हुये डायल्यूशन तीव्र चर्म रोगियों पर (Streptococcal Dermatitis) प्रयोग किये गये लेकिन दुर्भाग्यवश इस प्रयोग से उनकी यन्त्रणा बढी और स्थिति और खराब हो गई। इसमें पाये जाने वाले रेजिन को शुद्ध करके उसका अलकोहल में सोल्यूशन बनाकर उसका भी श्वेत कुष्ट पर प्रयोग किया गया, मगर उसका परिणाम भी कुछ नहीं हुआ। इसके इसेंशियल ऑइल का अलकोहल में तैयार किया हुआ सोल्यूशन भी प्रयोग किया गया मगर उसका परिणाम

भी असतोष जनक रहा, लेकिन इसके बीजों से तैयार किया हुआ ओलियोरेज़िनस एक्स्ट्रेक्ट बहुत ही उपयोगी वस्तु साबित हुई। इसके अन्दर इसेंशियल ऑइल का भी हिस्सा रहता है। इस एक्स्ट्रेक्ट का बाह्य प्रयोग मालिश के रूप में श्वेत कुष्ट के रोगियों पर दिन में एक बार या दो बार किया गया। यह प्रयोग जिन अनेक रोगियों पर किया गया उन रोगियों में तीन प्रकार के रोगी थे। पहली प्रकार के वे रोगी थे जिनका रोग उपदंश जनित विष (Syphilitic-Origin) की वजह से था। दूसरे प्रकार के वे रोगी थे जिनका रोग उपदंश जनित नहीं था। तीसरा ग्रुप उन रोगियों का था जो दाद, इत्यादि दूसरे चर्म रोगों से ग्रसित थे।

इस एक्स्ट्रेक्ट का प्रभाव उन्हीं रोगियों पर विशेष रूप से सफल हुआ जिनका श्वेत कुष्ट उपदंश जनित नहीं था। उपदंश जनित विष के रोगियों पर इसका बिलकुल प्रभाव नहीं हुआ। इस औषधि का प्रभाव बिलकुल बाह्य प्रयोग से ही होता है। हिन्दू चिकित्सक बावची के बीजों का चूर्ण मुह के द्वारा भी खिलाते हैं मगर इस पद्धति का प्रयोग श्वेत कुष्ट की चिकित्सा में नहीं किया गया। इसके प्रभाव शाली असर इस प्रकार कहे जाते हैं।

(१) यह औषधि पेट के अन्दर जाती है और वहां अपनी क्रिया करके अपने में के तेल को चमड़े के द्वारा शोषण करके बाहर निकालती है।

(२) आंतों की श्लैष्मिक झिल्लियों पर इसका उत्तेजक असर होता है जिसकी वजह से यह एमिनोएसिड के शोषण को उत्तेजित करता है।

(३) पाक स्थली की आंतों के विस्तार में इसका कृमिनाशक असर होता है।

मगर ये सब बातें हमारे अपने अनुभव में नहीं आ सकी हैं। हमने इसमें पाये जाने वाले उड़न शील तेल का बाहरी प्रयोग ही विशेष रूप से किया है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। वायु को बिखेरती है। दिल और मेदे को कुवत देती है। भूख पैदा करती है। आमाशय के कीड़ों को मारती है। श्वेतकुष्ट, स्याह कुष्ट, खुजली, कोढ और रक्त के उपद्रवों को मिटाती है। इन बीमारियों में इसका खाना और लगाना दोनों मुफीद है। अगर कोई स्त्री मासिक धर्म से शुद्ध होकर बावची के बीजों को तेल में पीसकर योनि में रख ले तो वह बांझ हो जाती है।

बावची के बीज गाढे कफ को पतला करते हैं। खांसी को मिटाते हैं। मसूड़ों को मजबूत करते हैं। प्राणवायु को उत्तेजित करते हैं। बावची के बीजों को हलदी और मूली के बीजों के साथ पीसकर इतवार की रात को जमाये हुए गाय के दही के तोड़ में मिलाकर सफेद कुष्ट के दाग पर मालिश करें तो बहुत लाभ होता है।

गेरू पाव भर, बावची आधा पाव, आमलासार गंधक एक पाव इन सब चीजों को बासी पानी के साथ ६ प्रहर तक खरल करें, फिर गोलियां बांधकर दिन को धूप में और रात को खुली छत पर सुखावें।

जरूरत के वक्त इन गोलियों को पानी में पीसकर सफेद दागोंपर लगानेसे बहुत लाभ होता है। इसके साथ ही ।।। सेर बाबची और ।।। पाव नमक को पीसकर इस चूर्ण में से हथेली भर चूर्ण रोज खा लिया करे और पथ्य में सिर्फ चने की रोटी खावें तो श्वेत कुष्ट में बहुत लाभ होता है। बाबची के बीजों को गौमूत्र में इस प्रकार भिगोवे कि गौमूत्र उससे ४ अँगुल ऊपर रहे। जब बीज खूब अच्छी तरह से तर होजाय तब उनको निकालकर छाया में सुखाकर जितने बीज हों उनसे आधा जीरा मिलाकर पानी के साथ पीस कर अरीठे के बराबर गोलियां बना लें। इनमें से एक २ गोली रोज खाने से और पथ्य के साथ रहने से सफेद दागों में बहुत लाभ होता है। गौमूत्र में भिजोते समय इस बात का खयाल रखना चाहिये कि बीजों की कोंपलें न फूटने पावें।

बाबची के बीजों को पानी में पीसकर लस्सी की तरह पका कर बांधने से बदगांठ एक दिन में बैठ जाती है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन पित्त को बढ़ाता है और बुखार में नुकसान पहुंचाता है। कोई २ कहते हैं कि बाबची आंख की रोशनी को कम करती है। धातु को सुखाती है और खांसी में नुकसान पहुंचाती है।

दर्पनाशक—शिकंजबीन और दूसरी खटाइयां।

प्रतिनिधि—काली जीरी।

मात्रा—बाबची के बीजों के चूर्ण की ३ माशा, काढ़े की १। तोला।

बनावटें—

श्वेत कुष्ट हर लेप—बाबची के बीज १६ तोला, तबकिया हरताल ४ तोला, सफेद चिरमी के बीज ४ तोला, चित्रक की जड़ की ताजी छाल ४ तोला, मैनसिल २ तोला और काला भाँगरा २ तोला। इन सबको लेकर बारीक पीसकर कुछ दिनों तक गौमूत्र में खरल करना चाहिये। फिर सफेद कुष्ट के दागों को कुछ रगड़ कर उन पर इस लेप को लगाने से लाभ होता है।

श्वेत कुष्ट नाशक तेल—बाबची के बीज २५ तोला, पवांर के बीज ५ तोला, सफेद चिरमी के बीज २ तोला, काली मिरची २ तोला, मैनसिल ३ तोला, हरताल ४ तोला और चित्रक की जड़ की ताजी छाल २ तोला। इन सब चीजों को कूटकर आतशी शीशी में भरकर बालुकागर्भ यन्त्र से मंदाग्नि के द्वारा तेल निकालना चाहिये। इस तेल को नियमित रूप से लगाने से श्वेत कुष्ट, दाद, छाजन, इत्यादि रोग नष्ट होते हैं।

बृहत् सोमराजि तेल—बाबची के बीज ५ सेर, पवांर के बीज ५ सेर। इन दोनों को कूटकर ४० सेर पानी के साथ उबालना चाहिये। जब १० सेर पानी शेष रह जाय तब उसको छानकर उस काढ़े में २५६ तोला गौमूत्र और ६४ तोला सरसों का तेल मिलाकर नीचे लिखी औषधियों की लुगदी

उसमें रखकर मदाग्नि से औटाना चाहिये। जब पानी का भाग जलकर सिर्फ तेल का भाग शेष रह जाय तब उसको उतार कर छान लेना चाहिये।

लुगदी की औषधियाँ—चित्रक की जड़, कलिहारी की जड़, सोंठ, हलदी, करंज के बीज, हरताल, मेंसिल, अनन्त मूल, आकड़े की जड़, कनेर की जड़, सप्तपर्ण की छाल, गाय का गोबर, खैर सार, नीम के पत्ते, काली मिर्च और कसौंदी के बीज। इन सब चीजों को एक २ तोला लेकर पानी के साथ खरल करके इनकी लुगदी बनाकर उसमें रख देना चाहिये।

इस तेल का मालिश करने से श्वेत कुष्ठ, दाद, खाज, चित्र कुष्ट, इत्यादि अनेक रोग दूर होते हैं।

रोगी के शरीर का अगर बहुत हिस्सा सफेद हो गया हो तो सारे भाग पर एक ही साथ दवा नहीं लगाना चाहिये। क्योंकि बावची के बीज से बनाई हुई औषधियां बहुत प्रदाहक होती है और इनको लगाने से बहुत जलन होती है। इसलिये थोडे २ भाग पर ऐसी औषधियों को लगाना चाहिये। जब वह भाग अच्छा हो जाय तब दूसरे भाग पर औषधि लगाना चाहिये। बावची के बीज कुछ अशों में मिलाने का स्वभाव रखते हैं। इसलिये नाजुक प्रकृति वाले रोगियों को खिलाने से या उनके रोग ग्रस्त अङ्ग पर लगाने से रोग ग्रस्त अङ्ग पर जलन पैदा होकर छोटी २ फुन्सियां पैदा हो जाती है। इन फुन्सियों के फूटने और उनके अच्छा होने के साथ ही चमड़ी का रंग बदल जाता है। अगर किसी व्यक्ति को इसकी जलन सहन न हो तो तिल और खोपरे को पानी के साथ पीस कर लेप वाली जगह पर लगाने से और तिल तथा खोपरे को खिलाने से उपद्रव की शान्ति हो जाती है।

राबर्टस के मतानुसार सीलोन में सर्प दंश के केसों में इसके बीजों को पीसकर पानी के साथ उनका द्रव बना कर बेहोशी और मूर्च्छा में नाक के अन्दर टपकाया जाता है और इसके बीजों का चूर्ण बना कर मुँह के द्वारा खिलाया जाता है।

चीन और मलाया में इसके बीज पौष्टिक और कामोद्दीपक माने जाते हैं और यह कुछ विशेष प्रकार के चर्म रोगों में उपयोग में लिये जाते हैं।

इण्डोचायना में इसका फल उदर शूल, अनैच्छिक वीर्यस्राव और कुछ विशिष्ट चर्म रोगों में काम में लिया जाता है।

अनाम में इसके बीजों का अलकोहल में तैयार किया हुआ द्रव सधिवात और स्त्रियों के रोगों में काम में लिया जाता है।

अमेरिका में इसके बीजों से तैयार की हुई अनेक प्रकार की बनावटें मज्जा तन्तुओं के लिये उत्तेजक और पौष्टिक समझी जाती हैं। वहां पर गलित कुष्ट के रोगियों पर भी आंशिक सफलता के साथ इसके प्रयोग किये गये हैं।

कोमान का कथन है कि इसके बीजों का चूर्ण श्वेत कुष्ट के रोगियों को खिलाया गया और इसके बीजों का ओलियोरेजिन रोगग्रस्त अगों पर लगाया गया। कुछ दिनों के प्रयोग से श्वेत कुष्ट

के दाग लाल रङ्ग में परिवर्त्तित होते दिखाई देने लगे, मगर इस औषधि की जलन और वेदना इतनी अधिक थी कि रोगियों ने इस प्रकार के इलाज में रहना अस्वीकार कर दिया।

गवार के बीजों के साथ बावची के बीजों का चूर्ण बनाकर उसको नींबू के रस में मिलाकर दाद के ऊपर प्रयोग किया गया और उसका परिणाम बहुत सन्तोषजनक रहा।

—:+:—

ब्राह्मी

नाम—

संस्कृत—ब्राह्मी, वयस्था, मत्स्याक्षी, सुरसा, ब्रह्मचारिणी, सोमवल्लरी, महौषधि, स्वायंभुवि, सुरश्रेष्ठा, सरस्वती, सौम्यलता, सुरेष्टा, दिव्या, शारदा, सोमवल्ली, इत्यादि। हिन्दी—ब्राह्मी, सफेद चमनी। बंगाल—ब्रह्मीसाक, श्रदबिरनी, धूपचमनी। गुजराती—ब्राह्मी, बिघब्राह्मी। मराठी—ब्राह्मी। उड़िया—कृष्णापर्णी। तामील—ब्रह्मी, निरब्रह्मी। तेलगू-साम्राणिचेट्टु। अंग्रेजी—Indian Pennywort। लेटिन—Herpestis Monniera (हरपेस्टिस मोनियरा), Moniera Cuneifolia (मोनीरा कुनीफोलिया)।

वर्णन—

ब्राह्मी के क्षुप गीली और तर जमीनों में पैदा होते हैं। यह वनस्पति वैसे तो सारे भारतवर्ष में जलाशयों के किनारों पर पैदा होती है मगर हरिद्वार से लेकर बद्रीनारायण के मार्ग पर यह बहुत बड़ी तादाद में पाई जाती है और वहां की ब्राह्मी उत्तम भी होती है। ब्राह्मी की पहिचान करते समय अक्सर भ्रम हो जाया करता है। क्योंकि इसी के समान आकार प्रकार वाली मंडूकपर्णी या ब्रह्म मडूकी नामक एक वनस्पति और होती है। साधारण तौर से इसकी पहिचान करना बड़ा कठिन होता है। मगर बारीक निगाह से देखने पर इन दोनों का भेद समझ में आजाता है। ब्राह्मी के पत्ते मडूकपर्णी के पत्तों की अपेक्षा पतले होते हैं और उनका अग्र भाग गोलाकार होता है। उनके डखल की तरफ का भाग क्रमशः क्षीण होता जाता है। इन पत्तों के ऊपर बहुत छोटे २ चिन्ह भी रहते हैं। इस वनस्पति की डालियां जमीन पर ही फैलती हैं और इन शाखाओं की प्रत्येक गठान में से जड़ निकल कर जमीन में घुस जाती है। बसन्त ऋतु से लेकर ग्रीष्म ऋतु तक इसके फूल और फल आते हैं। ये फूल सफेद और कुछ नीली झांई लिये हुए होते हैं। ब्राह्मी के सारे पौधे का स्वाद बहुत कड़वा होता है।

मंडूकपर्णी का पौधा भी ब्राह्मी के पौधे की तरह जमीन पर फैला हुआ रहता है और उसकी डालियों की गठानों से भी जड़ें निकल कर जमीन में घुसती हैं। मगर इन दोनों वनस्पतियों में मुख्य भेद यह है कि ब्राह्मी की अपेक्षा इसके पत्ते बड़े और गोल होते हैं। दूसरा अन्तर यह है कि इसके फूलों का रङ्ग रक्त के समान लाल होता है। इसके सारे पौधे का स्वाद तूरापन लिये हुए कड़वा होता है और अकेले इसके पत्तों को चबाने से इन में एक प्रकार की विचित्र गन्ध आती है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—भाव प्रकाश के मतानुसार ब्राह्मी शीतल, सारक, हलकी, मेधाकारक, कसैली मधुर, स्वादुपाकी, आयुवर्धक, रसायन, स्वर को उत्तम करने वाली, स्मरण शक्ति को बढ़ाने वाली तथा कुष्ट, पांडु, प्रमेह, रुधिर विकार, खांसी, विष, सूजन और ज्वर को हरने वाली होती है।

निघट्ट रत्नाकर के मतानुसार ब्राह्मी शीतल, कसैली, कड़वी, बुद्धिदायक, मेधाजनक, आयुवर्धक अग्निदीपक, सारक, स्वादिष्ट, हलकी, कण्ठ शोषक, हृदय को हितकारी, स्मरण शक्ति वर्धक, रसायन तथा प्रमेह, विष, कोढ़, पांडुरोग, खाँसी, ज्वर, सूजन, कण्डु, प्लीहा, वातरक्त, पित्त, अरुचि, श्वास, शोष, कफ और वात को दूर करने वाली होती है।

ब्राह्मी और मस्तिष्क सम्बन्धी रोग—

ब्राह्मी की मुख्य क्रिया मस्तिष्क और मज्जा तन्तुओं के ऊपर होती है। यह मस्तिष्क को शान्ति देती है और उसके लिये एक पौष्टिक वस्तु का काम करती है। इस गुण की वजह से ब्राह्मी मस्तिष्क और मज्जा तन्तुओं के रोगों में विशेष रूप से दी जाती है। मस्तिष्क को बहुत अधिक श्रम पड़ने पर जब वह थक कर ऊटपटांग काम करने लगता है तब उसको इस वनस्पति का कोई प्रयोग देने से आराम और पौष्टिक तत्व मिल जाते हैं। तब वह अपनी क्रिया ठीक करने लग जाता है। उन्माद और अपस्मार के रोगों में भी यही बात होती है। इसलिये इन में भी ब्राह्मी का प्रयोग होता है। सिर्फ नवीन और जोरदार रोगों में ब्राह्मी नहीं देना चाहिये। क्योंकि ब्राह्मी के अन्दर कुछ मस्तिष्क को उत्तेजित करने का धर्म रहता है और तीव्र रोगों में उत्तेजक औषधि देने से रोग का बल बढ़ जाता है। इसलिये नवीन और तीव्र उन्माद में तीव्र रेचक वस्तु देकर उसके पश्चात् खुरासानी अजवायन के समान कोई शामक वस्तु देना चाहिये। उन्माद और अपस्मार के पुराने होने पर उनमें एक ओर तो मस्तिष्क को पुष्ट करने वाली औषधियों की जरूरत होती है और दूसरी ओर कुछ उत्तेजक औषधि की भी आवश्यकता होती है। ब्राह्मी में ये दोनों ही गुण पर्याप्त मात्रा में रहते हैं और इसलिये ऐसे रोगों में ब्राह्मी देने से अच्छा लाभ होता है।

ब्राह्मी के अन्दर कुछ कब्जियत पैदा करने का दोष भी रहता है। इसलिये इसके साथ कुछ हलकी मृदु विरेचक औषधि देना उपयोगी होता है। प्राचीन ग्रंथों में इसके साथ शखपुष्पी देने का विधान दिया गया है। रोगी की नाड़ी शिथिल होने की हालत में ब्राह्मी के साथ कूट या पेठे का रस देना चाहिये। ब्राह्मी के अन्दर भूख को कुछ कम करने का भी दोष रहता है। इसलिये इसके साथ कुछ दीपक औषधि दी जाय तो इसका यह दोष दूर हो जाता है। इस कार्य के लिये प्राचीन ग्रन्थों में इसके साथ बच को देने का विधान दिया गया है जो वास्तव में बहुत उपयोगी है। तबियत की उदासीनता में तथा अधिक बोलने की वजह से पैदा हुए स्वर भग में ब्राह्मी का उपयोग होता है।

ब्राह्मी के अन्दर एक प्रकार का उड़नशील तेल रहता है वही इसके सब गुणों का आधार है।

आंच लगने से यह तेल उड़ जाता है। इसलिये ब्राह्मी को धूप में नहीं सुखाना चाहिये और आंच पर बनाये हुए प्रयोग की अपेक्षा बिना आंच पर बनाये प्रयोग विशेष रूप से उपयोग में लेना चाहिये।

इसके पत्तों का रस पैट्रोल में मिलाकर मालिश करने से संधिवात में फायदा होता है। इसका १ चम्मच रस बच्चों को देने से जुकाम, ब्रोंकाइटीज, वमन और दस्त में लाभ होता है।

पांडिचेरी में यह वनस्पति कामोद्दीपक मानी जाती है।

सीलोन में ज्वर के अन्दर इसका उपयोग होता है और इसका सारा पौधा बच्चों के लिये मृदु विरेचक माना जाता है। अग्नि विसर्प और श्लीपद रोगों में इसका सेंक किया जाता है। इसकी डालियों और पत्तों का ताजा रस सर्पदंश के उपचार में पिलाया जाता है।

कोमान के मत से ब्राह्मी घृत जो कि ब्राह्मी के पौधे से तैयार किया जाता है, मृगी और हिस्टीरिया के कुछ केसों में और विशूचिका के एक केस में अजमाया गया। मृगी के केसों में इससे काफी लाभ हुआ और उसके दौरे जो जल्दी २ आते थे वे बहुत देरी से आने लगे। हिस्टीरिया के केस इससे बिलकुल आराम हो गये। और विशूचिका या हैजे के केस में इससे कोई लाभ नहीं हुआ।

रासायनिक विश्लेषण—

के० सी० बोस और एन० के० बोस ने सन् १६३१ में इस वनस्पति का रासायनिक विश्लेषण किया और उन्होंने इस में से ब्राह्मीन (Brahmin) नामक एक विषैला उपक्षार प्राप्त किया जो कि कुचले में पाये जाने वाले स्ट्रिकनाइन (Strychnine) से मिलता जुलता था। उन लोगों ने इस उपक्षार का अध्ययन किया और इसको बहुत तीव्र विषैला पाया। इसकी बहुत थोड़ी मात्रा ने मेंढक को १० मिनिट में और चूहे को २४ घंटे में मार डाला। इसकी बहुत थोड़ी मात्रा शरीर के रक्तभार को बढ़ाती है और हृदय की पेशियों को उत्तेजित करती है। श्वासक्रियाप्रणाली, गर्भाशय और छोटी आंतों को भी इसकी अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा उत्तेजित करती है।

बोस ने इसके सूखे पत्तों के चूर्ण का बहुत ही सफलता के साथ हृदय क्रिया की दुर्बलता, स्नायु जाल की गिरावट, मस्तिष्क की कमजोरी और दूसरी दुर्बलताओं पर प्रयोग किया। उनके कथनानुसार इसके सत्व में स्ट्रिकनाइन से कई प्रकार की विशेषताएं हैं। यह उसके बराबर विषैला नहीं होता और स्ट्रिकनाइन और नक्सवोमिका के लम्बे समय के सेवन से जो प्रतिक्रियाएं और प्रदाह पैदा होते हैं वे इससे नहीं होते। इसके अतिरिक्त ब्राह्मी हृदय के ऊपर सीधा पौष्टिक प्रभाव बतलाती है मगर स्ट्रिकनाइन हृदय के ऊपर बहुत गौण रूप से उत्तेजक असर बतलाता है। इन सब बातों से यह मालूम होता है कि भविष्य में इस वनस्पति के सम्बन्ध में किये गये अनुसंधान और भी अधिक उपयोगी सिद्ध होंगे।

बनावटें—

ब्राह्मी घृत—घोड़ा बच, कूट और शङ्खाहूली की जड़ इन तीनों का चूर्ण बीस २ तोला, ब्राह्मी के पौधे का रस ६० तोला, गाय का घी ६४ तोला और पानी २४० तोला। इन सब चीजों को मिलाकर

हलकी आंच पर चढ़ाना चाहिये। जब पानी जलकर घी मात्र शेष रह जाय तब उसको उतार कर छान लेना चाहिये। इस घृत को १ से २ तोले तक की मात्रा में दूध के साथ सवेरे शाम लेने से सब प्रकार का पागलपन, मृगी, अपस्मार और स्वर भग दूर होता है।

सारस्वत घृत—ब्राह्मी के पौधे को जड़ समेत उखाड़ कर पानी से धोकर लकड़ी के दस्ते से कूट कर उनका २५६ तोला रस निकाल लेना चाहिये। इस रस में गाय का ६४ तोला घी तथा हलदी, मालती के फूल, कूट, निसोथ और हरड़, इन सब चीजों का चूर्ण चार २ तोला और लौंडी पीपल वाय विडग, सेंधानमक, शक्कर और घोड़ा बच इनका चूर्ण एक २ तोला डालकर हलकी आंच पर चढाना चाहिये। जब रस का भाग जलकर सिर्फ घी रह जाय तब उसको उतार कर छान लेना चाहिये।

रस रत्नाकर नामक ग्रंथ के कर्ता का कथन है कि इस घी में से एक से दो तोला तक घी दूध में डालकर प्रतिदिन दो बार पीने से मनुष्य का कण्ठ स्वर किन्नरों की तरह होजाता है। उसकी स्मरण शक्ति ऐसी प्रबल हो जाती है कि कठिन से कठिन शास्त्र भी सिर्फ १ बार के पढ़ने से उसको याद हो जाते हैं। सब जाति के कुष्ट इससे दूर होकर मनुष्य का शरीर चन्द्रमा की कांति की तरह हो जाता है। हर एक प्रकार की बवासीर, ५ प्रकार के वायु गोले तथा पांचों जाति की खांसी इससे दूर होती हैं। बांझ स्त्रियां इसके सेवन से गर्भ धारण के योग्य हो जाती है और क्षीण वीर्य वाले पुरुषों में भी रमण शक्ति पैदा हो जाती है। बल और जठराग्नि में भी इसके सेवन से वृद्धि होती है।

सारस्वतारिष्ट—पुष्य नक्षत्र के दिन सवेरे सूर्योदय के पहिले ८० तोला ब्राह्मी के पौधे जड़ समेत उखाड़ कर पानी में धोकर साफ कर लेना चाहिये। फिर शतावरी की जड़, विदारीकंद, अदरक और सोया ये सब चीजें बीस २ तोला लेकर इन सब को कूट कर १०२० तोला पानी के साथ औटाना चाहिये। जब २५६ तोला पानी बाकी रह जाय तब उसको उतार कर, मसलकर छान लेना चाहिये। इस क्वाथ में ४० तोला पुरानी शहद, १०० तोला शक्कर, २० तोले धावड़ी के फूल, और निर्गुंडी के बीज, निसोथ, की जड़, छोटी पीपर, लौंग, वच, कूट, असगध, बहेड़ा, गिलोय, इलायची, बायविडग और तज सब चीजे एक २ तोला पीसकर डाल देना चाहिये। इन सब चीजों को चीनी मिट्टी की बरनियों में भरकर उनमें एक दो तोला सोने के बारीक वरक डालकर, उन बरनियों का मुंह बन्द कर एक महिने तक पड़ी रखना चाहिये। उसके पश्चात् पतले कपड़े से छानकर इस औषधि को बोतलों या बरनियों में भर लेना चाहिये।

भैषज्यरत्नावली नामक ग्रंथ के कर्ता का कथन है कि यह औषधि सारस्वतारिष्ट के नाम से प्रसिद्ध है और इसको सबसे पहिले भगवान धन्वन्तरि ने अपने मन्द बुद्धि शिष्यों के लिये बनाया था।। इसको प्रति दिन सबेरे, शाम और दुपहर एक तोले की मात्रा में पानी में मिलाकर पीने से मनुष्य दीर्घायु होता है, उसका वीर्य शुद्ध होता है। उसकी साधारण शक्ति, स्मरण शक्ति, बुद्धि बल और कांति बढ़ती है। वाणी शुद्ध होती है हृदय की गति को बल मिलता है। यह शरीर में रहने वाले ओज नामक दिव्य तत्व

की वृद्धि करता है। इसके सेवन से स्त्रियों के ऋतु दोष और पुरुष के वीर्य्य दोष मिटते हैं।

अधिक पढ़ने से, गाने से, या भाषण करने से जिनका बल या स्मरणशक्ति कमजोर हो गई हो उन लोगों को इससे बड़ा लाभ होता है। वह अकाल मृत्यु के पंजे से बच जाता है। उन्माद, अपस्मार, इत्यादि रोग इसके सेवन से नष्ट हो जाते हैं।

ब्राह्मी रसायन—छांह में सुखाई हुई ब्राह्मी का चूर्ण ५ तोला, मुलैठी का चूर्ण ५ तोला, शंखाहूली का चूर्ण ५ तोला, गिलोय का चूर्ण ५ तोला और सोने की भस्म आधा तोला। इन सब चीजों को पीसकर चूर्ण कर लेना चाहिये। इस चूर्ण को १ माशे से लेकर ३ माशे तक की मात्रा में असमान शहद और घी के साथ खाने से स्मरण शक्ति के अन्दर बहुत वृद्धि होती है।

——:०:——

बांस

नाम—

संस्कृत—बहुपल्लव, धनुर्द्रुम, वृहतृण, घातुष्य, दृढ़ग्रथ दृढ़कांड, दुरारुह, कमठ, कंटकी, कंटालु कीचक, मृत्यु बीज, मस्कर, वंश, वेणु, यवफला, इत्यादि। हिन्दी—बाँस, कांटा बांस, मगर बांस, मलबास, कंटक। बंगाली—बांस, बेहुर बांस। बम्बई—दोंगी, कलक, मांडगे। मध्यप्रान्त—कटंक। गुजराती—वांस, तोन कोर। मराठी—कलक, बाबू। संथाल—मट। फारसी—नाइ। पंजाब—नल, मगर, मगेरी। उर्दू—वांस। तामील—अबल, अबु, वेणु। तेलगू—वोंगू, वोंगू वेदुरू। अंग्रेजी—Spiny Bamboo, Thorny Bamboo। लेटिन—Bambusa Arundinacea (बांबूसा अरंडीनेसिया)।

वर्णन—

बांस भारतवर्ष में सभी दूर जंगल और पहाड़ों की तलहटियों में उत्पन्न होते हैं। इसके पौधे एक दम सीधे और लम्बे २ चले जाते हैं। कहीं २ इनकी ऊंचाई ४०।५० फीट तक हो जाती है। इस सारे पौधे पर दो २ ढाई २ फुट के अन्तर पर पेरियां बनी रहती हैं। इन पर डालियां और पत्ते बहुत कम लगते हैं। पहाडों पर की तलहटियों में बांसों की बहुत लम्बी चौड़ी झाड़ियां रहती हैं। एक २ झाड़ी में हजारों बाँस निकलते हैं। जब वर्षा ऋतु में बादल गरज जाते हैं तब इनकी पेरियां फूटती हैं। बांसों की दो जातियां होती हैं। एक नर और एक मादा। नर बांस ठोस होते हैं और मादा बांस पोले होते हैं। जब स्वाति नक्षत्र का पानी मादा बाँस के अन्दर गिरता है तब वह जम कर बंशलोचन का रूप धारण कर लेता है। बांस के सूखने पर बंशलोचन उसमें से निकाल लिया जाता है। बंसलोचन का वर्णन हम इस भाग में पहिले दे चुके हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—राजनिघटु के मत से दोनों प्रकार के बांस (बांस और रंध्र बांस) खट्टे, कसैले

किंचित कड़वे, शीतल और मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, पवासीर, पित्त, दाह, और रक्त विकार को हरने वाले होते हैं।

रक्त वांस अग्नि को दीपन करने वाला, अजीर्ण नाशक, रुचि कारक, पाचक, हृदय को हितकारी तथा शूल और गुल्म को नष्ट करने वाला होता है।

बाँस के अंकुर, चरपरे, कड़वे, खट्टे, कसैले, हलके, शीतल तथा रक्त पित्त, दाह और सुजाक में लाभ दायक होते हैं।

बाँस के चाँवल कसैले, मधुर, पौष्टिक, बलवर्धक तथा कफ, पित्त, विष और प्रमेह को दूर करते हैं। कभी २ बांसों के ऊपर जौ के समान फल आते हैं। इनमें से चांवल के समान दाने निकलते हैं। इन्हीं को बांस के चांवल कहते हैं।

बांस की प्रधान क्रिया गर्भाशय के ऊपर होती है। इससे गर्भाशय का सकोचन होता है और इसीलिये इसके कोमल पत्तों का काढ़ा स्त्रियों को प्रसूति के समय पिलाया जाता है। जिससे उनके गर्भाशय की गदगी बिलकुल साफ हो जाती है और गर्भाशय असली स्थिति में आ जाता है। ढोरों को भी बच्चा जनने के पश्चात् इसके पत्ते खिलाये जाते हैं।

प्रसूति के सिवाय दूसरे दिनों में भी जब किसी स्त्री को मासिक धर्म साफ न होता हो तब इसके पत्तों का अथवा इस की गठानों का काढा इसी प्रकार की दूसरी औषधियों के साथ मिलाकर दिया जाता है।

प्रमेह और सुजाक में भी बांस के पत्ते और अनत मूल का काढा बना कर देने से लाभ होता है।

बांस के अंकुर और नारू तथा दूसरे कृमि रोग

सन् १६२३ में इंडियन साइंस कांग्रेस का अधिवेशन हुआ था। उस कानफ्रेन्स में ऑल इंडिया इन्स्टिट्यूट ऑफ हायजिन एन्ड पब्लिक हेल्थ के डायरेक्टर लेफ्टनेंट कर्नल ए डी स्टूअर्ट और बी एन मूर्ति ने बांस के अंकुरों के सम्बन्ध में एक अनुभव पूर्ण निबन्ध पढ़ा था जो उसी साल के जून महीने के इंडियन मेडिकल गजट में प्रकाशित हुआ था। इन दोनों महाशयों का कथन है कि:—

मिस्टर वॉट ने अपने इकानामिक प्राडक्टस् ऑफ इंडिया नामक ग्रंथ में बांस के गुणों को बतलाते हुये लिखा है कि इसके कोमल अंकुरों का पुल्टिस नारू के ऊपर बांधने से नारू निकल जाता है। ऐसा जिन स्थानों में नारू की बीमारी अधिक है वहां के लोग मानते हैं। वाट साहब के इस कथन को देख कर हम ने बाँस के कोमल अंकुरों को मगा कर उनके प्रयोग किये। ये कोमल अंकुर १ से १॥ फीट तक ऊंचे थे। हम ने इनके ऊपर की छाल को निकाल कर उसके कोमल हिस्सों का ही रस निकाला था और जितना वह रस था उतना ही उसमें पानी मिला दिया था। इन प्रयोगों के जो परिणाम आये वे निम्नांकित हैं।

(१) नारू के जंतु—बांस के अंकुरों के रस में नारू के जंतुओं को डालने पर वे बारह साढ़े बारह मिनिट में मर गये। उनकी गुछली डालने की खासियत थोड़े ही समय में खतम हो गई और अंत में वे बिल्कुल सीधी हालत में ही मरे। फार्मेलीन अथवा कपूर के प्रवाही में भी इन जंतुओं को डालने

से ये जतु मर जाते हैं मगर इनकी गुंछली डालने की आदत नहीं मिटती और ये गुछली डाली हुई हालत में ही मर जाते हैं।

(२) *श्लीपद के जतु*—बास के अकुरों के प्रवाही में श्लीपद रोगों के जतु १० मिनिट में मर जाते हैं।

(३) *मक्खियों के अंडे*—मक्खियां और उनके अंडे वश करीर के इस प्रवाही में ४५ मिनिट में मर जाते हैं। बडी मक्खियों के लिये इस प्रवाही में तर किया हुआ एक रुई का फोया एक ऐसे टेस्ट-ट्यूब में जिसके अन्दर मक्खियां रक्खी गई थी उसके नीचे के भाग में रखने पर ७ मिनिट में वे मक्खियां मरने लगी थीं।

(४) *मच्छर और उनके अंडों पर प्रयोग*—एक टेस्ट ट्यूब में मच्छरों को रख कर बांस के अकुरों के प्रवाही में तर किया हुआ रुई का फोया उस ट्यूब के नीचे रखने पर ३ से ५ मिनिट के बीच में वे मच्छर मरने लग गये। इन अकुरों के स्वरस को बिना पानी मिलाये हुये उपयोग में लेने पर उसने १५ मिनिट में मच्छरों के अडों का नाश किया।

मच्छरों के ये अण्डे पोटासियम सायेनाइट के ५ प्रतिशत प्रवाही में २२ मिनिट में और हाइड्रो-स्यानिक एसिड के १ से २ प्रतिशत तक के प्रवाही में १८ मिनिट में मरते हैं। इससे मालूम होता है कि वशकरीर अर्थात् बांस के कोमल अंकुरों का स्वरस (जो अचार डालने के काम में आते है), हाइड्रोस्यानिक एसिड और पोटासियम साइनेट के समान जहरीली औषधियों की अपेक्षा भी अधिक कृमिनाशक शक्ति रखता है।

बांस के अकुरों का स्वरस और पानी को समान भाग मिला कर एक चौड़ी रकाबी में भरकर खुली हवा में खुली स्थिति में ही रखकर उसकी जन्तु नाशक शक्ति का निरीक्षण किया गया और बरा-बर २५ दिनों तक प्रति २४ घन्टों के अन्तर से उसके अन्दर कितने जन्तु मरे हैं इसकी जाँच कीगई। इससे मालूम हुआ कि इस प्रवाही को रकाबी में भरकर रखने से २४ घन्टे बाद अर्थात् दूसरे दिन इस प्रवाही की जन्तुनाशक शक्ति सब दिनों की अपेक्षा अधिक तेज मालूम हुई और उसके बाद दिन प्रति दिन इसकी शक्ति क्षीण होती गई और छठे दिन तो इस प्रवाही में मच्छरों के अण्डो को मरने में ४ घन्टे १८ मिनिट लगे।

इन प्रयोगों से हम लोग इस अनुमान पर आये है कि बांस के अन्दर जो सायोजेनेटिक ग्लूको-साइड रहता है उसके ऊपर बांस में रहने वाले फेन द्रव्य के असर से हाइड्रोस्यानिक एसिड अलग होता है और यही इसके कृमिनाशक धर्म का मूल कारण हो सकता है।

इस प्रवाही में रहने वाले हाइड्रोस्यानिक एसिड की वजह से ही अगर कृमि मरते हैं, यह माना जाय तो फिर हाइड्रोस्यानिक एसिड की अपेक्षा भी इसका असर इतनी जल्दी क्यों होता है यह शका सहज में पैदा होती है। इसके समाधान में यह कहा जा सकता है कि हवा के संयोग से इस प्रवाही में

जो हाइड्रोस्यानिक एसिड पैदा होता है वह कृत्रिम हाइड्रोस्यानिक की अपेक्षा विशेष तीक्ष्ण और स्थायी असर करता है।

इस प्रकार उपरोक्त दोनों अनुसंधानकों ने यह शोध की कि गिनिवर्म अर्थात् नारू पर तथा दूसरे कृमि रोगों पर इस वनस्पति के प्रयोग बहुत सफल हो सकते हैं।

डाक्टर नाडकरनी अपने इन्डियन मटेरिया मेडिका नामक ग्रन्थ में लिखते है कि जखम और घावों में पड़े हुए कीड़ों को नष्ट करने के लिये बांस के अंकुरों का पुल्टिस बहुत ही अक्सीर इलाज माना जाता है। पहले इन अंकुरों का स्वरस उन घावों पर टपकाया जाता है और उसके पश्चात् उनका पुल्टिस उन पर बांध दिया जाता है।

रासायनिक विश्लेषण—

बांस की जलाई हुई राख में सेलेसिक एसिड २८ प्रतिशत, चूना ४ प्रतिशत, मेगनेसिया ६ प्रतिशत, पोटासियम ३४ प्रतिशत, सोडियम १२ प्रतिशत, फ्लोरिन २ प्रतिशत और गन्धक १० प्रतिशत पाया जाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह सर्द और खुश्क होता है और जला देने के बाद गरम और खुश्क हो जाता है। इसकी जड़ और छाल को जलाकर सिरके में मिलाकर बाल उड़ जाने के स्थान पर लगाने से बाल फिर जमने लग जाते हैं। इसको जलाकर दांतों पर मलने से दांत साफ होते हैं। बांस की जलाई हुई जड़ और छाल समान भाग मेंहदी के साथ पीसकर बालों पर लगाने से बालों की जड़ें मजबूत हो जाती हैं और गिरे हुए बाल फिर जम जाते हैं। बांस के कोयले को पीसकर जखम पर भुरभुराने से जखम से बहता हुआ खून बन्द हो जाता है और जखम भर जाता है। इससे सूजन भी बिखर जाती है। बाँस को सिरके के साथ पीसकर कमर और कुल्हों पर लगाने से दर्द आराम हो जाता है। बाँस और उनके पत्तों पर जो एक प्रकार की चिकनाहट जम जाती है उसको आंख में लगाने से आंख का जाला कट जाता है। बांस को पानी में जोश देकर पीने से रुका हुआ मासिक धर्म और पेशाब जारी हो जाता है। इसके कच्चे पत्तों को पानी में खूब मलकर साफ करके पीने से मुँह से खून का आना बन्द हो जाता है। इसके पत्तों को जलाकर सूखी और तर खुजली पर लेप करने से लाभ होता है। बांस की जड़ को जलाकर उसकी राख को पानी में घोल कर उसका नितरा हुआ पानी पीने से आमाशय और यकृत की गरमी शान्त होती है। चोट की वजह से अगर शरीर में कहीं दर्द हो तो इसकी बारीक छाल को छीलकर शक्कर के साथ लेने से लाभ होता है। बांस की जड़ को जलाकर चमेली के तेल में मिलाकर लगाने से सिर की गज और दाद मिट जाते हैं। इसके पत्तों का अर्क शहद के साथ पीने से खांसी में लाभ होता है।

प्रसूति के पश्चात प्रसूता के गर्भाशय में जो गन्दगी बाकी रह जाती है वह इसके पत्तों का काढा पीने से बिलकुल साफ हो जाती है।

बनावटें—

रजः प्रवर्तक क्वाथ—बाँसकी गठान अथवा कोंपल पत्ते १ भाग, अमलतास की फली की छाल २ भाग, कपास की जड़ १ भाग, गाजर के बीज १ भाग, मूली के बीज १ भाग, काले तिल १ भाग, गोखरू १ भाग, इन्द्रायण की जड़ १ भाग, कचरी के बीज १ भाग, सौंफ की जड़ १ भाग। इन सब चीजों को मिलाकर जौकुट कर लेना चाहिये। फिर इसमें से १ तोला क्वाथ लेकर ३२ तोला पानी में औटाना चाहिये। जब ८ तोला पानी शेष रह जाय तब उसको छानकर उसमें १ तोला पुराना गुड़ मिलाकर प्रातःकाल पीना चाहिये। इस प्रकार १ सप्ताह तक पीने से बहुत समय का रुका हुआ मासिक धर्म फिर से शुरू हो जाता है। मगर यह क्वाथ बहुत उग्र होता है। इसलिये गर्भवती स्त्री और कोमल प्रकृति वाली स्त्रियों को यह नहीं पीना चाहिये।

रजः शोधक क्वाथ—बांस के कोमल पत्ते, सोया के बीज, अमलतासका गूदा, बायबिडग, कलौंजी,, मूली के बीज, हंसराज, अजमोद, मजीठ, अपामार्ग की जड़, तोदरी सुर्ख, हरमल, और इन्द्रायण की जड़, ये सब चीजें एक २ तोला, चित्रक की जड़ की छाल ८ माशे, कपास की जड़ की छाल और गाजर के बीज दो दो तोले। इन सब चीजों को लेकर जौकुट कर लेना चाहिये। इनमें से २ तोला क्वाथ लेकर आधा सेर पानी में शाम को १ मिट्टी के बरतन में भिगो देना चाहिये। प्रातःकाल उसको औटाना चाहिये। जब १० तोला पानी बाकी रह जाय तब उसको उतारकर छान लेना चाहिये। इसमें से आधा क्वाथ लेकर उसमें १ तोला गुड़ मिलाकर १ माशा महा योगराज गुग्गल के साथ सवेरे ले लेना चाहिये और बाकी का शेष क्वाथ उसी प्रकार शाम को योगराज गुग्गल के साथ ले लेना चाहिये। जिस दिन मासिक धर्म हो उसी दिन से प्रारम्भ करके ४ दिनों तक लगातार इस क्वाथ को लेते रहने से मासिक धर्म के सब विकार दूर होजाते हैं। जिस स्त्री को मासिक धर्म अनियमित रूप से होता हो, कष्ट के साथ होता हो उसके लिये यह अमृत के समान है। इसके प्रयोग से मासिक धर्म खुलकर साफ आता है। गर्भाशय के सब विकार निकल जाते हैं। जमा हुआ रक्त मासिक धर्म के साथ निकल जाता है और अशुद्ध रक्त के निकल जाने से स्त्री का गर्भाशय सन्तानोत्पत्ति के योग्य हो जाता है। (जंगलनी जडी बूटी)

—:०:—

बांस छोटा

नाम—

संस्कृत—वंश, वेणु, यवफला। बंगाल कुरेल। बम्बई बांस, कबान, ऊधा बांसा। हिन्दी—बांस, नरबांस, कोपार, बांसकबन, बांसखुर्द। गुजराती—नरबांस, नक्कोर बांस। तामील—कोनाइ, सिरमुगिल। तेलगू—वेदुरु। इङ्गलिश—Male Bamboo। लेटिन—Dendrocalamus Strictus (डेंड्रोकेलेमस स्ट्रिक्टस)।

वर्णन—

यह बांस नर जाति का होता है। इसकी लकड़ी ठोस और सख्त होती है, इसकी लाठियां बहुत अच्छी बनती हैं। इसके पत्ते २·५ से सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। यह वनस्पति सारे भारतवर्ष में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी गठानें शीतल, पौष्टिक और संकोचक द्रव्य की तरह उपयोग में ली जाती है।

——:०:——

वाय विडंग

नाम—

संस्कृत—क्रिमिघ्न, भस्मक, मोघा, विडंग, क्रिमिकंटक, कैराल, जन्तुघ्न, मृगगामिनि, गर्दभ, इत्यादि। हिन्दी—वायविडंग वेबरंग। बङ्गाल—माइ विरंग, विडंग। बम्बई—वावरंग, काटकेन्नि। मध्यप्रान्त—वायविरंग। गुजराती—वाविडंग। मराठी—वावडिंग, कारकेन्नि। पंजाब—बब्रुंग। नेपाल—हिमलचेरी। फ़ारसी—बिरंज केबुली। अरबी—बाय बिडंग। तामील—वाय विलंगम्। तेलगु—विडंगनु। लेटिन—Embelia Ribes (एम्बेलिया रायबस)।

वर्णन—

वायविडंग की मोटी झाड़ी होती है। इसकी डालियां खुरदरी और बहुत गांठों वाली होती हैं। इसके पत्ते २-३ इञ्च तक लम्बे और ऊपर से कुछ चमकदार होते हैं। इसके फूल सफेद होते हैं। इसके फल काली मिरच के समान होते हैं और वे गुच्छों में लगते हैं। जब वे सूख जाते हैं तब उनपर झुर्रियां पड़ जाती हैं और उनके अन्दर एक २ बीज निकलता है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेद के मत से वायविडंग चरपरा, कड़वा, गरम, रुचिकारक, हलका, जठराग्नि को दीपन करने वाला तथा वात, कफ, मन्दाग्नि, अरुचि, भ्रांति, कृमिशूल, अफारा, उदररोग, प्लीहा, अजीर्ण, श्वास, खांसी, हृदय रोग, विष विकार, आम, मलस्तम्भ, मेदरोग और प्रमेह—को दूर करती है।

बाय विडंग भारतीय चिकित्सा पद्धति के अन्दर अपने कृमिनाशक गुणों की वजह से एक बहुमूल्य वस्तु समझी जाती है। महर्षि सुश्रुत संहिता में बड़ी से बड़ी कृमिनाशक और बड़ी से बड़ी जीवन शक्ति की रक्षा करने वाली दो औषधियों के संयोग से एक "सर्वोपघात शमनीय" नामक औषधि का आविष्कार किया। इस औषधि की प्रस्तावना में उक्त महर्षि लिखते हैं कि.—

"शरीरस्थो पघाता ये दोष जामान सात्तथा ॥
उपदिष्टा प्रदेशेषु तेषां वक्ष्यामि वारणम् ॥"

अर्थात्—वात, पित्त, कफ वगैरह शारीरिक और सत्व रज, तम वगैरह मानसिक दोषो की वजह से और प्रकृति लुब्ध आचरण से शरीर में नुकसान करने वाले जो २ उपद्रव पैदा होते हैं उन सब को यह औषधि निवारण करती है। यह औषधि इस प्रकार है।

उत्तम पके हुये पुराने बाय विडग लेकर उनके ऊपर के छिलकों को उड़ा कर जो मगज बाकी रहे उनको कूट कर बारीक चूर्ण कर लेना चाहिये। इस चूर्ण में उतने ही वजन का मुलेठी की जड़ का बारीक चूर्ण मिला देना चाहिये। इस चूर्ण में से प्रतिदिन सबेरे अपनी शक्ति के अनुसार चूर्ण लेकर ठंडे पानी के साथ खा लेना चाहिये। उसके ऊपर थोड़ा ठडा पानी और पी लेना चाहिये। जब यह चूर्ण पचजाय तब उसके बाद देरी से भोजन करना चाहिये। पथ्य में सिर्फ साँठी चावल का भात घी तथा मूंग और आंवले का यूष इतनी ही चीजें लेना चाहिये और भोजन दिन में एक ही बार करना चाहिये।

इस प्रकार इस औषधि को एक महिने तक सेवन करने से सभी जाति के बवासीर नष्ट होते हैं। किसी भी व्याधि को उत्पन्न करने वाले, किसी भी जाति के और शरीर के किसी भी अंग में रहने वाले जतु इससे नष्ट होते हैं। स्मरण शक्ति बहुत बढ़ती है। प्रति वर्ष एक २ मास तक इस औषधि का सेवन करने से मनुष्य हमेशा निरोग रहता है और दीर्घायु होता है।

सुप्रसिद्ध वैद्य कृष्णु भट्टजी ने सुश्रुत के बतलाये हुए उपरोक्त सर्वोपघात शमनीय प्रयोग का अनेक रोगियों पर अनुभव करके बतलाया कि इस औषधि में अग्नि वर्धक, कृमिनाशक, रक्त शोधक, वात कफ नाशक और ज्ञान तन्तुओं के लिये शक्ति वर्धक ये सब गुण पाये जाते हैं। इससे अतिसार सग्रहणी, अर्श वगैरह मदाग्नि से होने वाले आफरा, गोला, मूत्र शूल, वगैरह वात और कफ से होने वाले प्रमेह, उपदश, भगन्दर, कण्ठमाल, कोढ वगैरह रक्त की अशुद्धि और कृमियों से उत्पन्न होने वाले उन्माद, अपस्मार, अर्द्धाङ्ग इत्यादि ज्ञान तन्तुओ की निर्बलता से होने वाले और क्षय, खांसी, श्वास वगैरह फेंफड़ों की खराबी से होने वाले रोगों में इस प्रयोग से बहुत उत्तम लाभ होता है। इसके अतिरिक्त हैजा. मलेरिया, प्लेग, वगैरह जतु जन्य प्राणघातक रोगों के आक्रमण के समय इस प्रयोग का सेवन करते रहने से इन रोगों के आक्रमण का भय नहीं रहता।

जङ्गलनी जड़ी बूँटी के लेखक वैद्य शास्त्री शामलदास गौर लिखते हैं कि हमने भी इस सर्वोपघात शमनीय प्रयोग का कई रोगियों के ऊपर सफलता पूर्वक अनुभव किया है। इस प्रयोग में पहली वस्तु बाय विडग है जो सब प्रकार के कृमियों को नष्ट करने में सर्वोत्तम वस्तु है। और दूसरी वस्तु मुलेठी है जो प्राण तत्व की रक्षा करने में और आयु बढ़ाने में अपनी सानी नहीं रखती। इन दोनों उत्तम वस्तुओं के सयोग से यह योग बहुत ही विलक्षण हो गया है। जब कोई भी रोग बहुत हठीला हो गया हो और किसी भी उपाय से न मिटता हो तब रोगी को पहले १-२ महिने तक इस प्रयोग का सेवन करा कर पश्चात् रोग की कोई खास दवा देने से तत्काल लाभ मालुम होता है। पित्त के रोगों में तथा पित्त प्रकृति वालों को यही प्रयोग द्राक्ष के क्वाथ अथवा नीमगिलोय के स्वरस के साथ देने से और वायु तथा कफ की

प्रकृति वालों को मिलाने के क्वाथ के साथ देने से विशेष रूप से लाभदायक होता है इस प्रयोग का यदि विधि पूर्वक उपयोग किया जाय तो क्षय की प्राण घातक व्याधि से ग्रस्त रोगी तथा भयंकर उपदंश के विष से अन्तिम स्थिति में पहुचे हुए व्रण, नासूर, भगंदर, कण्ठमाल, कुष्ट, संग्रहणी, अर्धांग, इत्यादि के रोगी भी अच्छे हो जाते हैं।

डॉक्टर देसाई के मत से वायविडंग उष्ण, दीपन, पाचन, कुछ आनुलोमिक और मूत्रल, उत्तम कृमिनाशक, बलकारक, मस्तिष्क और मज्जा तंतुओं को शक्ति देने वाली, रक्त शोधक और रसायन होती है। इसके लेने से पेशाब का रंग लाल होता है और उसकी अम्लता बढ़ती है इस औषधि की क्रिया शरीर की सब ग्रंथियों पर और प्रधान रूप से रस ग्रंथि पर होती है। यह शरीर की सारी जीवन विनिमय क्रिया को उत्तेजन देती है।

मनुष्य के शरीर पर पारद का जैसा विलक्षण प्रभाव होता है वैसा ही वायविडंग का होता है। वायविडंग को लेने से भूख लगती है। अन्न पचता है। दस्त साफ होता है। वजन बढ़ता है। त्वचा की कांति दीप्त होती है। शरीर में तेज का संचार होता है और मन में प्रसन्नता पैदा होती है। बच्चों के लिये तो एक दिव्य औषधि है। जिन बच्चों को सूखे का रोग हो गया हो, खाया हुआ अन्न नहीं पचता हो, हाथ पांव पतले होकर के त्वचा ढीली हो गई हो और पेट बड़ा हो गया हो। ऐसे बच्चों के प्राण बचाने वाली औषधि वाय विडंग ही हैं और इसको अनन्त मूल के साथ देने से यह विशेष लाभदायक होती है। बच्चों के स्वस्थ रहने के लिये वाय विडंग के दानों को दूध में उबालकर वह दूध पीने को दिया जाता है गंडमाला में वाय विडंग को गूगल तथा मैंसिल और साम्हर सींग की भस्म के साथ भी और शहद में मिलाकर देते हैं। इससे धीरे २ मगर अच्छा लाभ होता है।

मज्जा तंतु सम्बन्धी रोगों में (जैसे अर्धांग वायु, इत्यादि) वाय विडंग को लहसन के साथ दूध में उबाल कर वह दूध पिलाया जाता है।

चर्म रोगों में वायविडंग का भीतरी और बाहरी दोनों प्रयोग होते हैं। तरह २ के कुष्ट रोग तथा चर्म रोग अन्न की पाचन क्रिया ठीक न होने की वजह से ही होते हैं। वाय-विडंग पाचन क्रिया को सुधारता है और दस्त साफ लाता है। इसलिये कुष्ट और चर्म रोगों पर इसका अनुकूल प्रभाव होना स्वाभाविक है। इसके अतिरिक्त त्वचा पर इसकी उत्तेजक क्रिया भी होती है।

अग्निमांद्य, अरुचि, अजीर्ण, वमन, शूल, आफरा और बवासीर में वायविडंग मट्ठे के साथ दिया जाता है। अतिसार और संग्रहणी में वाय विडंग का क्वाथ बनाकर देते हैं। अजीर्ण रोग मे कभी २ खांसी और श्वास पैदा हो जाते हैं। तब वाय विडंग को पीपल के साथ देते है। गोल और चपटे जन्तुओं को निकालने के लिये १ तोला वाय विडंग का चूर्ण पानी अथवा दही के साथ देते हैं। इससे सब कृमि मरकर निकल जाते हैं। कृमियों को नष्ट करने के लिये जब इस औषधि को देना हो तब पहले अरंडी के तेल का जुलाब देकर आंतों को साफ कर लेना चाहिये और फिर खाली पेट इस औषधि को देना चाहिये

और दूसरे दिन फिर जुलाब देना चाहिये। पीनस और आधा शीशी में बाय बिडग का चूर्ण सुँघाने से लाभ होता है।

डायमॉक के मतानुसार बायबिडग की भारतवर्ष के अन्दर एक कृमिनाशक वस्तु की तरह बहुत भारी प्रशंसा है। खास करके टेपवर्म (चपटे कृमि) को नष्ट करने में तो यह औषधि बहुत प्रसिद्ध है। छोटे बच्चों को इसके चूर्ण की १ चाय के चम्मच के बराबर मात्रा दिन में दो बार दी जाती है। और बडे लोगों को इसके चूर्ण की एक तोले तक की मात्रा दी जाती है। यह बहुत सूक्ष्म आनुलोमिक होती है। यह सुस्वादिष्ट, कुछ संकोचक और कुछ सुगंधित होती है। यह कृमियों को मारकर बाहर निकाल देती है। रोगी को पहिले एक जुलाब देकर इस औषधि के लिये तैयार कर लेना चाहिये। इसके फलों को दूध में उबालकर वह दूध पिलाने का आम रिवाज है और यह विश्वास किया जाता है कि इससे बच्चों के पेट में वादी और कृमि पैदा नहीं होते।

इन्डियन फारेस्टर के अप्रेल १९१९ के अङ्क में यह घोषित किया गया कि बायबिडंग की जड़ का क्वाथ तत्कालीन चलने वाले इन्फ्ल्यूएंजा ज्वर पर बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुआ है। इसको दिन में २ या ३ बार देना चाहिये। ऐ० सी० पंराजपे और जी० के० गोखले ने इस वनस्पति के अध्ययन का परिणाम बतलाते हुए कहा कि बाय बिडग बहुत प्राचीन काल से भारतवर्ष में कृमिनाशक वस्तु की तरह प्रचलित है। यह टेपवर्म्स को नष्ट करने की शक्ति अवश्य रखती है मगर गोलकृमि (Round Worms), हूकवर्म्स और व्हिप वर्मस पर इसका कोई असर नहीं होता। टेपवर्म के ऊपर इसका प्रभाव इसमें पाये जाने वाले इम्बेलिकएसिड या इम्बेलिन पर अवलंबित है। जोकि इसमें २.५ प्रतिशत से २.७ प्रतिशत तक पाया जाता है। टेपवर्म्स के ऊपर इम्बेलिन के असर स्पष्ट रूप से देखे गये और यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि टेपवर्म्स को नष्ट करने के लिये इम्बेलिन एक बहुत उपयोगी और सुरक्षित औषधि है।

सखाराम अर्जुन का कथन है कि बाय बिडग का १ तोला चूर्ण सोते दफे दही के साथ दिया गया और उसी दिन सवेरे रोगी को अरंडी के तेल का जुलाब दिया गया। जिसके परिणाम स्वरूप ऐसे रोगियों के चपटे कृमि दस्त के साथ निकल गये।

यूनानी मत—यूनानी मत से बाय बिडग गरम और खुश्क होती है। यह हलकी, भूख पैदा करने वाली, कृमियों को नष्ट करने वाली और पौष्टिक होती हैं। आमाशय और आंतों में होने वाले दर्द को यह मिटाती है। वायविडग के १ तोला बारीक चूर्ण को आध पाव मट्ठे में मिलाकर प्रातःकाल खाली पेट पिलाने से पेट के कीड़े मर जाते हैं। दूध में वाय विडग के दाने डालकर गरम करके छान कर छोटे बच्चों को पिलाने से उनका पेट फूलना बन्द हो जाता है। वाय बिडग को तम्बाकू के साथ चिलम में रखकर धुआँ खींचने से आमाशय और आंतों में होने वाला बादी का दर्द मिट जाता हैं।

—:o:—

वाय विडंग नम्बर २

नाम—

हिन्दी—वाय विडंग, मिगी। बम्बई—आमटी, अांवट, वर्वटी, वाय विडंग। नेपाल—अचल, कलद्वोवोटी। लैटिन—Embelia Robusta (एम्बेलियारोबुस्टा)।

वर्णन—

इस वाय विडंग का पौधा भी असली वाय विडंग के पौधे से मिलता जुलता होता है। यह भी एक झाड़ीनुमा छोटा वृक्ष होता है। इसके पत्ते ६ २ सेंटिमीटर से ११ ५ सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। और २ ८ से ५ ७ सेंटीमीटर तक चौड़े होते हैं इसके फूल हरापन लिये हुए पीले रंग के होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में यमुना से पूर्व की ओर बंगाल तक और दक्षिण की ओर सीलोन तक होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वाय विडंग कोष्टवायु को नष्ट करने वाला, कृमिनाशक, बवासीर में लाभ पहुंचाने वाला, वेदना नाशक, सूजन को दूर करने वाला और रसायन होता है। इसके दूसरे धर्म वाय विडंग के समान ही होते हैं। मगर इसमें सूजन को नष्ट करने का गुण अधिक रहता है। गंडमाला में इसकी जड़ को अनन्त मूल के साथ घोट कर पिलाते हैं और ठण्डे पानी में इसको पीसकर गठानों पर लेप करते हैं। सड़े हुए दांत की पोल में इसके पत्तों को पीसकर थोड़ी हींग मिलाकर भरने से दांत का दर्द कम हो जाता है। इसकी जड़ की सूखी छाल का मंजन करने से भी दन्त वेदना कम होती है। इसके कोमल पत्ते का सोंठ के साथ काढ़ा करके कुल्ले करने से गले के छाले मिटते हैं। फुफ्फुस के परदे की सूजन में इसके फल को मक्खन के साथ मिलाकर लेप करते हैं। इसके बीजों के चूर्ण की फक्की लेने से अर्श रोग में लाभ होता है।

—— o ——

बाबूना

नाम—

हिन्दी—बाबूना। गुजराती—बाबूना। फारसी, अरबी, उर्दू—बाबूना। इंगलिश—Willd Chamomile। लेटिन– Matricaria Chamo milla (मेट्रिकेरिया कैमोमिला)

वर्णन—

यह अकलकरे के वर्ग की एक वनस्पति होती है। जो अपने आप भी पैदा होती है और बोई भी जाती है। इसके पत्ते छोटे बारीक और कुछ लम्बे होते हैं। शाखें हरी, बारीक और नाजुक होती है। इनकी लम्बाई १ बालिश्त से १ हाथ भर होती हैं। इन शाखाओं में अनेकों छोटी २ उपशाखायें आती हैं इसके फूलों की इकहरी और दोहरी कुलियां होती हैं। इकहरे फूल औषधि के काम में आते हैं जो पीले और सफेद होते हैं। इसके फूलों में खुशबू भी रहती है। मिश्र में सफेद फूल वाला एक बड़ी किस्म

का बाबूना होता है। इसको करफाश कहते हैं। औषधि प्रयोग में बाबूना के फूल ही विशेष रूप से काम में आते हैं इसके अतिरिक्त इसकी जड़ और इसका तेल भी औषधि के काम में आता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होता है। इसकी जड़ उत्तेजिक, पौष्टिक और शांति दायक होती है। इसके फूल तीक्ष्ण स्वाद वाले और उत्तम सुगंधित होते हैं। ये मस्तिष्क के लिये पौष्टिक और छाती के रोगों के लिये हितकारक होते हैं। ये रक्त शोधक, कामोद्दीपक, मूत्रल, पसीना लाने वाले और शांतिदायक होते हैं। मस्तक शूल, सुजाक, छाती का दर्द, गीली खुजली और नेत्र रोग में ये उपयोग में लिये जाते हैं। मूत्राशय और गुर्दे की पथरी को ये तोड़ देते हैं। इसका तेल कामोद्दीपक और दर्द को दूर करने वाला होता है। यह हर प्रकार के दर्द को दूर करने के काम में लिया जाता है। यह सूजन को कम करता है और खाँसी तथा सीने की बीमारी में मुफीद है।

बाबूना मस्तिष्क, काम शक्ति और शरीर के अंगों को ताकत देता है। यकृत के सुद्दों को खोलता है। पेशाब, पसीना और दूध ज्यादा पैदा करता है। शरीर को मुलायम करता है। पेट का दर्द, मसाने का दर्द, पीलिया और सूखी खांसी में लाभदायक है इसको चबाने से मुँह के छाले मिट जाते हैं। इसका लेप सरदी के सिर दर्द को दूर करता है आँख में दर्द हो तो इसके काढ़े से आंख धोने से लाभ होता है। इसके ३॥ माशे फूलों की फक्की देने से कुछ दिनों में पथरी टूट जाती है। सूजन को दूर करने के लिये यह प्रथम श्रेणी की औषधि है। इसको शराब या सिरके के साथ औटाकर उसकी भाफ को कान के अन्दर पहुंचाने से नवीन बहरापन मिट जाता है। सख्त सूजन को बिखेरने के लिये इससे बढ कर दूसरी दवा नहीं है। तने हुये अंग पर इसका लेप करने से ढीलापन आ जाता है। इसके बीजों की मालिश कड़वे बादाम के तेल की मालिश से ज्यादा मुफीद है। इसको पानी में जोश देकर इसका धुआं दिमाग में पहुँचाने से नजला आराम होता है।

अगर आंख के कोये पर नासूर हो गया है तो बाबूना को पीस कर लेप करने से फौरन अच्छा हो जाता है। बाबूने का चूर्ण उस पर भुर भुराने से भी लाभ होता है। बाबूने के सेवन से सीने की सफाई होती है और सांस लेने में सहूलियत पैदा हो जाती है।

इसके काढे के टब में गर्भवती स्त्री को बैठाने से बच्चा आसानी से पैदा हो जाता है आंवल निकल जाता है और हैज का खून जारी हो जाता है।

डॉक्टरों के मतानुसार गुल बाबूना ताकतवर और क्रियाशील औषधि है। आमाशय की कमजोरी के वास्ते अच्छी दवा है। इसका तेज काढ़ा ठंडा करके आंखों पर लगाने से आंखों को शक्ति मिलती है और गरम काढ़ा पिलाने से वमन होती है।

बाबूने का तेल—बाबूने का तेल दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होता है। इसकी मालिश शरीर

के गुणों से मिलते जुलते होते हैं। यह वायु को बिखेरने वाला, सुद्दों को निकालने वाला और पथरी को तोड़ने वाला होता है। कफ और वायु के दोषों को यह दस्त की राह निकाल देता है। इसकी छोटी जाति को घर में रखने से मच्छर मर जाते हैं। इसको चौगुने जैतून के तेल या तिल के तेल में डाल कर ४० दिन तक धूप में रक्खे फिर उस तेल को लकवा या अर्धांग वाले रोगी के शरीर पर मालिश करने से लाभ होता है। इस तेल की मालिश से रोम छिद्र खुल जाते हैं और पसीना आने लग जाता है।

शेख का कथन है कि इसकी लाल जाति धातु पतन को रोकती है। इसको सूंघने से बहुत नींद आती है। रात के वक्त बाबूना गाव, छिले हुये जौ और बाबूना को जोश देकर उस पानी में खसखस का तेल मिला कर अनिद्रा रोग के रोगियों के सिर पर धर देवें तो उनका रोग मिट कर उन्हें नींद आने लगती है। मालीखोलिया और मिरगी में भी यह लाभ पहुचाता है क्योंकि इसमें वायु और कफ को साफ करने की ताकत रहती है। ६ माशे बाबूनागाव को ३० दिन तक लगातार पीने से मिरगी बिलकुल जाती रहती है। इसी प्रकार इसके ७ माशे फूलों को प्रति दिन २५ रोज तक शराब के साथ पीने से मिरगी चली जाती है। इसके पीने से लकवे में भी लाभ होता है। इसके फूलों को जला कर आंख के कोये के नासूर में भरने से नासूर मिट जाता है। नेत्र रोगों में भी यह मुफीद है।

बाबूना गाव पीलिया और जलोदर में लाभ पहुँचाता है। यह यकृत के सुद्दों (गांठों) को खोलता है और तिल्ली की सूजन को दूर करता है। अगर मूत्राशय और आमाशय में खून जम जाय और पेशाब रुक जाय तो इसको शराब के साथ देने से लाभ होता है। गुर्दे की पथरी को भी यह तोड़ कर निकाल देता है। इसको शराब के साथ लेने से गर्भवती स्त्री का गर्भ गिर जाता है। इसकी बत्ती को योनि में रखने से मासिक धर्म बहुत ताकत के साथ जारी हो जाता है और गर्भाशय की सूजन और गांठ मिट जाती है। ताजा बाबूना गाव का लेप करने से लिंगेंद्रिय, अण्डकोष, जांघ और काम शक्ति को बहुत ताकत मिलती है। इसको दूध के साथ खाने से धातु और काम शक्ति बढ़ती है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन गुर्दा, मसाना, तिल्ली और आमाशय को नुकसान पहुंचाता है तथा स्मरण शक्ति को कमजोर करता है।

दर्पनाशक—गुर्दे और मसाने के लिये धनियाँ, तिल्ली और आमाशय के लिये अनीसून और धनियां, मस्तिष्क के लिये गुलनीलोफर है।

मात्रा—३ माशे से ६ माशे तक है।

——:०:——

बाकला

नाम—

हिन्दी यूनानी—बाकला। लेटिन - Phaseolus Vulgaris (फेसिओलस व्हलगेरिस)।

[illegible] बाकला

वर्णन—

यह एक दाना होता है। जो लम्बी २ फलियों में पैदा होता है। यह मोटा सफेद और काले छिलके वाला होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में सर्द और तर होता है। इसके दाने की दोनों दालों के बीच में एक छोटी सी कड़वी वस्तु निकलती है वह गरम और खुश्क होती है इसके दानों में सूजन को बिखेरने की कुछ शक्ति है। यह पेट में फुलाव पैदा करता है। वायु बढ़ाता है और देरी से हजम होता है अगर बिना छिले हुए बाकले को सिरके में पकाकर खावें तो वमन और दस्त आना बन्द हो जाता है। सिरके के साथ छिला हुआ बाकला खाने से गुर्दे की सफाई होती है। सोंठ के साथ लेने से काम शक्ति बढ़ती है। इसका काढ़ा पीने से मासिक धर्म जारी होता है और अंकुर गर्भाशय से निकल जाता है।

इसका काढ़ा पुराने दस्त और आंतों के जख्म को आराम करता है। सिर पर किसी किस्म की चोट से सूजन पैदा हो गई हो तो बाकले को जौ के आटे के साथ लेप करने से मिट जाती है। कान के पीछे की सूजन पर इसको गेहूं मेथीदाना और शहद के साथ लेप करने से फायदा होता है। स्त्रियों के स्तनों पर दूध इकट्ठा हो जाने से या चोट लगने से सूजन पैदा हो जाय तो इसको शराब या सिरके के साथ पकाकर बांधना चाहिये। कण्ठमाला के ऊपर बाकला जौ का आटा, मिश्री और जैतून का पुलटिस तेल मिलाकर लेप करने से बहुत लाभ होता है। बाकला के छिलके और ताजा पत्तों का लेप आग से जले हुए स्थान पर बहुत फायदा करता है। बिना छिले हुए बाकले को पानी में पीसकर मोटे बालों पर खिजाब की तरह लगाया करें तो बाल बहुत बारीक हो जावेंगे। जहाँ के बाल गिर गये हों वहां पर बाकले के छिलकों को लगाने से बाल फिर से आने लगते हैं।

बाकले के आटे को पानी में मिलाकर उबटन की तरह लगाने से शरीर का रंग निखर जाता है। इसके हरे पौधे को जलाकर उसकी राख को चेचक और फोड़े फुन्सियों के काले दागों पर मलते रहने से दाग दूर हो जाते हैं। अण्डकोष की सूजन और बदगांठ पर बाकले के आटे और जौ को शराब में पका कर लेप करने से लाभ होता है। बाकले को शराब में पकाकर पागल कुत्ते के काटे हुए स्थान पर लगाने से लाभ होता है।

कुछ जानकार लोगों का मत है कि अगर किसी जगह की हड्डी टूट जाय तो इसके बिल्कुल ताजा दानों को कूटकर उसका रस निकाल कर २। तोले की मात्रा में पीने से हड्डी जुड़ जाती है। इसके पौधे के पत्ते पिसे अरसानी के साथ पीने से भी यही लाभ होता है। बाकले के दानों को अंजीर के साथ जोश देकर पीने से खांसी जाती रहती है। कफ में खून का आना बन्द हो जाता है और सीने में लाभ होता है।

मुजिर—बाकले का अधिक सेवन पेट में फुलाव पैदा करता है। सुस्ती, हृदय की धड़कन और

सारे शरीर में तर तथा खुश्क खुजली को उत्पन्न करता है। इसके अधिक खाने से खराब स्वप्न दिखलाई देने लगते हैं। स्मरण शक्ति कमजोर हो जाती है। रंज और गम पैदा करता है। इसके ऊपर का छिलका मुँह में छाले पैदा करता है। इसके उपयोग से हलक में खुश्की पैदा होकर सूजन पैदा होती है, इसलिये इस वस्तु का अधिक उपयोग कभी न करना चाहिये।

दर्पनाशक—सोंठ, जीरा, काली मिरच, पोदीना सद्दाव इत्यादि।

प्रतिनिधि—उड़द।

—:o:—

बाजरा

नाम—

संस्कृत—वर्जरी, नालिका, नाली, नीलसस्य, साजक अग्रधान्य, वर्जरिका नीलकणा। **हिन्दी**—बाजरा, बाजरी, लहरा, कासजोनार बम्बई—बाजरा। **मराठी**—बाजरी। **पजाब**—बाजरा। **बिहार**—गहुमा, जोंधारिया। **इङ्गलिश**—Spikedmillet। (स्पाइक्ड मिलेट)। **लेटिन**—Penisetum Spicatum (पेनिसेटम स्पिकेटम)।

वर्णन—

बाजरी का पौधा ज्वार के पौधे की तरह एक दम सीधा बढ़ता है। यह ज्वार के पौधे से कुछ पतला होता है। इस पौधे को पशु घास की तरह खाते हैं। इसके अन्दर एक लम्बा भुट्टा लगता है। जिसमें बाजरी के दाने पड़ते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत से बाजरी वायु पैदा करने वाली, हृदय को हितकारी, पौष्टिक, कान्तिवर्धक, अग्नि दीपक, गरम, रूखी, पित्त को कुपित करने वाली, स्त्रियों की काम वासना को बढ़ाने वाली तथा देर में पचने वाली होती है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह कब्जियत और खुश्की पैदा करती है। कमर और काम शक्ति को बल देती है। इसका हरीरा (अवलेह) बनाकर पीने से पित्त और वायु की वमन बन्द हो जाती है। इसका सत्तू भी वायु और पित्त की वमन को रोकता है। यह मासिक धर्म और पेशाब को साफ करती है। और जलोदर में लाभ पहुचाती है।

बाजरी का सेंक भी एक महत्व पूर्ण वस्तु है। इसकी पोटली बनाकर सेंकने से सर्दी का सिर दर्द दूर हो जाता है। इसके सेक से सूजन भी बिखर जाती है; आमाशय में वायु इकट्ठी हो जाने की वजह से अगर पेट फूल जाय तो इसकी पोटली का सेक करने से अच्छा हो जाता है। बवासीर के दर्द में भी इसका सेक लाभदायक होता है। अगर बाजरी को भूनकर गरमा गरम सेक किया जाय तो पेट की मरोड़ी दूर हो जाती है। इसके सेक से अधिक पेशाब भी आना बन्द हो जाता है।

बाजरी को पीसकर नमक मिलाकर टिकिया बनाकर गुदा पर बांधने से कांच निकलना बन्द हो जाता है। यह टिकिया पेचिश में भी फायदा करती है और आंतों के रुके हुए मल को निकालने में भी मदद करती है।

मुजिर—हमेशा बाजरे के खाने से फेफड़े को नुकसान पहुंचता है, गुर्दे में पथरी पैदा हो जाती है, खुश्क खून पैदा होता है और कभी २ गर्भवती स्त्री के गर्भ गिरने का भी भय रहता है। यह हजम होने में जरा कठिन होता है। जो लोग इसको हमेशा खाते हैं उन्हें चाहिये कि वे हमेशा गरम पानी से नहाते रहें। घी, दूध और मीठी चीजों का खूब सेवन किया करें।

दर्पनाशक—कचरी के तेल की कूंपर।

उपयोग—

पागल कुत्ते का विष—बाजरी के भिट्टे में जो फूल लगते हैं उन फूलों को १ माशे की मात्रा में गुड़ में मिलाकर गोली बनाकर खिलाने से १ हफ्ते में पागल कुत्ते का विष नष्ट हो जाता है।

——:0:——

बादियान खताई

नाम—

बम्बई—अनीसून, अनसफल। उर्दू—बादियान खताई। तेलगू—अनासपुगु। इङ्गलिश—Star Anise। लेटिन—Illicium Anisatum (इल्लिसियम एनिसेटम)।

वर्णन—

यह एक प्रकार का फल होता है जिसका रंग जायफल के समान होता है। हर एक फल में ७-८ परदे होते हैं। जिनमें इसके बीज रहते हैं। इन बीजों का स्वाद सौंफ के समान होता है इसीलिये इसको बादियान खताई कहते हैं क्योंकि सौंफ का फ़ारसी नाम बादियान है। यह औषधि नेपाल और चीन की तरफ से हमारे देश में आती है। हमारे यहां के बहुत से लोग इसको चाय में डालकर पीते हैं। क्योंकि इसको चाय में डालने से वह खुशबूदार हो जाती है।

गुण दोष और प्रभाव—

बादियान खताई दीपक और कोष्ठ वायु को शमन करने वाला होता है। बड़ी मात्रा में इसको लेने से वमन होती है और मनुष्य बेसुध हो जाता है। जुकाम सर्दी, खांसी, ज्वर, अजीर्ण, इत्यादि रोगों में यह विशेष रूप से उपयोगी होती है। शाकाहारी लोगों के अजीर्ण और कुपचन रोगों में इसके फलों का चूर्ण गुणकारी होता है। मरोड़ी युक्त आंतों के रोगों में और पेट के फूलने पर यह दिया जाता है। इसके फल में एक प्रकार का सुगन्धित तेल पाया जाता है जो भपके के द्वारा प्राप्त होता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होता है। कोई २ इसे गरम और तर बतलाते हैं। इसको चाय में मिलाकर पीने से गरम प्रकृति वालों को खुश्की बढ़ जाती है। सर्द

प्रकृति वालों के लिये फायदे मंद होता है। यह आमाशय को ताकत देता है और पाचन शक्ति को बढ़ाता है आँतों के दर्द को दूर करता है, कफ को बिखेर देता है। और पेशाब अधिक लाता है।

मात्रा—२ माशा है।

——:०:——

बारतंग

नाम—

हिन्दी—बालतंग, बारतग। बंगाल—बालतग, बारतग। अँग्रेजी—Ribwort रिबवर्ट। लेटिन—Plantago Lanceolata (प्लेंटेगो लेंसिओलेटा)।

वर्णन—

यह वनस्पति पश्चिमी हिमालय में काश्मीर से शिमला तक ५ हजार से आठ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है। यह एक बहु वर्षजीवी क्षुप होता है। इसके पत्ते रुएँदार, छोटे डंखल वाले, शल्याकृति और कंगूरेदार होते हैं। इसके फूल डंडियों पर आते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके पत्तों का ताज़ा रस जख्मों के ऊपर लगाया जाता है। इसके सूखे पत्तों का लेप सूजन, फोड़ों और जख्मों पर दिया जाता है। इसके बीज शक्कर के साथ विरेचक औषधि की तरह उपयोग में लिये जाते हैं।

यूरोप में इसके पत्ते सकोचक माने जाते हैं। और व्रणों पर भरने के लिये इनका लेप किया जाता है। जख्मों को धोने के काम में भी इनका उपयोग होता है। इसकी जड़ का चूर्ण बसंत कालीन ज्वर को दूर करने के उपयोग में लिया जाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में सर्द और खुश्क होता है। इसके पत्ते सकोचक होते हैं इसलिये खून के बहने को रोकते हैं। पुराने और नये जख्मों को भरने के लिये इससे दूसरी कोई अच्छी वस्तु नहीं है। इसके पत्तों का रस पीने से शरीर के भीतरी अंगों से होने वाला रक्तश्राव बन्द हो जाता है। इसके पत्तो को सीने पर लेप करने से कफ के साथ खून का आना रुक जाता है ललाट पर इसका लेप करने से नकसीर का खून बन्द हो जाता है। इसकी जड़ के काढ़े से कुल्ले करने से मसूढ़ों से खून का आना रुक जाता है। मतलब यह कि हर प्रकार के रक्त श्राव को रोकने के लिये यह एक अद्भुत वस्तु है। इसके ताजा पत्तों को पीसकर उनका रस कान में निचोड़ने से गर्मी से होने वाला कर्ण शूल मिट जाता है। इसका सत यकृत और गुर्दे को ताकत देता है। तृषाशामक है। अपचन को दूर करता है। पेशाव और मासिक धर्म की जलन को रोकता है खूनी बवासीर में मुफीद है पैत्तिक ज्वर राजयक्ष्मा और सुजाक में लाभ पहुँचाता है। इसका पचांग आतों के जख्म को दूर करता है और पित्ती उछलने में मुफीद है।

हकीम गिलानी का कथन है कि इसका लेप खराब फोड़ों पर किया जाय तो वे फैलने नहीं पाते। अगर जखम को साफ करने, उसमें नया गोश्त पैदा करने और शान्ति देने की जरूरत हो तो इन पत्तों को बिना धोये उपयोग में लेना चाहिये अगर किसी के बाल बहुत खिरते हों तो बारतंग के पत्तों का लेप करने से लाभ होता है। इसके पत्तों को कुचलकर उनका रस निकाल कर कुल्ले करने से गर्मी से पैदा हुई गले की सूजन मिट जाती है। इसके पत्तों का रस क्षय में भी लाभ पहुँचाता है इसके बीजों की मगज कामोत्तेजक होती है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन फेफड़े और तिल्ली को नुकसान पहुंचाता है।

दर्पनाशक—बनफशा, शहद और मस्तगी।

मात्रा—पत्तों के रस की ४ तोले से ६ तोले तक।

बारतंग २ (लहूरिया)

नाम—

हिन्दी—बारतंग, लहूरिया। उर्दू—बारतंग। बम्बई—बारतंग। कुमांउ—लहूरिया। काश्मीर—गुल, इसफ धुल। पंजाब—इसफगोल, गुल, फरेट। इंगलिश—Waybroad वे ब्रॉड। लेटिन—Plantago Major (प्लेंटेगो मेजर)।

वर्णन—

यह इसफगोल के वर्ग की एक वनस्पति होती है। इसका पौधा वर्ष जीवी होता है। इसके पत्ते २.५ से १२.५ सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके बीज छोटे लम्बे गोल, भूरे रंग के और इसफगोल की तरह दिखलाई देते हैं। यह वनस्पति प्रधान रूप से ईरान में उत्पन्न होती है। हिमालय, आसाम, बरमा, कोकण, पश्चिमी घाट और नीलगिरी पर भी यह पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—इसका पौधा सधिवात और आंतों की मरोड़ को दूर करने के लिये उपयोगी है। इसके पत्ते व जड़ संकोचक होते हैं और ज्वर के अंदर इनका उपयोग होता है। इसके बीज रक्तातिसार को दूर करते हैं।

इसके बीज उत्तेजक, गरम और पौष्टिक माने जाते हैं। रक्तातिसार के लिये ये एक सफल औषधि समझी जाती है। इसफगोल के बदले में इसका उपयोग सफलता पूर्वक किया जा सकता है।

यूरोप में इसके पत्ते ठंडे, धातु परिवर्तक और मूत्रल माने जाते हैं। इसके ताजा पत्तों को बर्र, ततैया इत्यादि जानवरों के डंक पर रगड़ने से शांति मिलती है जखमों से होने वाले रक्त श्राव को भी ये बंद करते हैं। अतिसार और बवासीर में भी इनका उपयोग होता है। इंगलैंड के अंदर इन पत्तों का पुल्टिस बना कर वृण और जख्मों पर बांधते हैं अथवा इसके गरम काढ़े से उन पर सेक करते हैं। अथवा

इसके काढ़े को ठंडा करके मुख क्षत को मिटाने के लिये इनका उपयोग करते हैं। स्वीजर लैंड में इसके पत्ते दंतशूल को रोकने के लिये एक घरेलू औषधि की तरह काम में लिये जाते हैं। इसके पत्तों का काढा आंखों को धोने के लिये भी एक उत्तम वस्तु मानी जाती है। इसमें रक्तस्राव रोधक तत्व भी रहते हैं।

इसके पौधे का दबा कर निकाला हुआ रस ऐसे क्षय में जिस (Tubercular Consumption) में कफ के साथ खून गिरता हो बहुत उपयोगी माना जाता है। इसकी जड़ और पत्ते पार्यायिक ज्वरों को दूर करने के लिये बहुत उपयोग में लिये जाते हैं।

बलूचिस्तान में इसके बीज खांसी को दूर करने के लिये तथा बच्चों को दस्त देने के लिये उपयोग में लिये जाते हैं।

चीन और इंडोचीन में इसका पौधा रक्त स्राव रोधक और घाव को भरने वाला माना जाता है। इसके बीज अतिसार और रक्तातिसार की एक उत्तम औषधि माने जाते हैं ये छाती के रोगों को दूर करने वाले, शांति दायक माने जाते हैं और बच्चों के लिये भी उपयोग में लिये जाते हैं।

जापान में इसके बीजों का द्रव सत्व हूपिंग कफ को दूर करने के लिये दिया जाता है।

फिलिपाइन में इसके पत्तों को कुचल कर और मक्खन के साथ मिला कर मसूढ़ों की सूजन पर लगाते हैं।

दक्षिणी अफ्रिका में वहां के मूल निवासी और वहाँ के बसने वाले यूरोपियन इस पौधे को औषधि की तरह बहुत उपयोग में लेते हैं। झुलू जाति के लोग इसके पत्तों का दबा कर निकाला हुआ रस मुंह और कान की बीमारियों में उपयोग में लेते हैं और इसकी जड़ के काढे का एनेमा नव जात शिशु की आंतों को साफ करने के लिये लगाते हैं। वहाँ के यूरोपियन इसके पत्तों का क्षय जनित ग्रंथियों पर लेप करते हैं। इसके पत्तों का ताजा रस वहां पर मलेरिया की एक मशहूर औषधि माना जाता है। ऐसा कहा जाता है कि यह मलेरिया के आक्रमण को तुरत रोकता है और फिर नहीं पैदा होने देता।

डॉक्टर देसाई के मत से आमातिसार में इसफगोल की तरह ही इसका उपयोग किया जाता है। जब अतिसार गर्मी से होता है तब इसफगोल दिया जाता है मगर वह सरदी से होता है तब इस वनस्पति का प्रयोग किया जाता है। इसकी जड़ और पत्तों का काढा ज्वर के अन्दर उपयोगी माना जाता है।

बाग नेला

नाम—

हिन्दी—बाग नेला। मद्रास -गोलगडो। लेटिन—Tradescantia Axillaris (ट्रेडेसकेंटिया एक्सलेरिस)।

गुण दोष और प्रभाव—

कर्नल चोपरा के मत से यह वनस्पति कर्ण प्रदाह या कान की सूजन में लाभ दायक है।

वाघ चूटा

नाम—

हिन्दी—वाघ चूटा। बंगाल—वाघ चूटा। तामील—कारिंदु, मुसक्कालि। तेलगू—इंग्डुदी। लेटिन—Pisonia Aculeata (पिसोनिया एक्यूलिएटा)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति की बहुशाखी झाड़ी होती है। इसके पत्ते २.५ से ७.५ सेंटीमीटर तक लम्बे और १.३ से ३.८ सेंटीमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके नर और मादा दोनों तरह के फूल लगते हैं। यह वनस्पति बरमा, अण्डमान और आसाम से गोदावरी तक पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति की छाल और इसके पत्ते जलन युक्त सूजन और जोड़ों के दर्द पर उपयोग में लिये जाते हैं इसके रस में काली मिरच मिला कर बच्चों को उनकी फुफ्फुस सम्बन्धी शिकायतों को दूर करने के लिये देते हैं।

वाराही कंद

नाम—

संस्कृत—वाराही कद, शूकर कद, ब्राह्मी कंद, कुष्टनाशक, महावीर्य इत्यादि। हिन्दी—वाराही कंद, सूअर कद, गिरवोली कद, गेठी। मराठी—डुक्करकद। गुजराती—वाराही कद, वणावेल, एककोकन्द, नीवेल। लेटिन—Tacca Aspera (टेक्का एस्पेरा)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति की बेल होती है जो पहाड़ों पर पैदा होती हैं। इसके पत्ते नागर वेल के पत्तों के समान होते हैं। इसकी जड़ में एक कंद रहता है जिस पर सूअर के बाल के समान करडे बाल रहते हैं।

गुण दोष और प्रभाव

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से वाराही कद चरपरा, कड़वा, बलकारक, पित्त जनक, रसायन कामोद्दीपक, वीर्यवर्धक, भूख बढाने वाला, मधुर, गरम, कांतिवर्धक स्वर को शुद्ध करने वाला, आयुवर्धक तथा कोढ़, प्रमेह, त्रिदोष, कफवात, कृमि और मूत्रकृच्छ रोग को नष्ट करता है।

वाराही कंद वात, बवासीर और गुल्मरोग को नष्ट करता है।

प्राचीन चर्म रोगों पर इसका शरबत बनाकर देने से लाभ होता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह धातुवर्धक कामोद्दीपक, शरीर को मोटा करने वाला, सूजन को बिखेरने वाला, प्रमेह, पेशाब की जलन और सुजाक में लाभ पहुचाने वाला होता है इसके सेवन से भूख बढ़ती है, चेहरे का रंग खिल जाता है और कुष्ट में लाभ होता है।

बालू रेत

नाम—

संस्कृत—सिका, बालुका, शीतला, इत्यादि। हिन्दी—बालू, बालूरेत । मराठी—बालु,रेती। गुजराती—रेती। फ़ारसी—रेत। अंग्रेजी—Sand। लेटिन—Silica (सिलिका)।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेद के मत से बालू रेत, मधुर, शीतल, लेखन, तापनाशक तथा अग्निदग्ध व्रणव्रण, उरक्षत श्रम और कुष्ट का नाश करती है। इसका सेक वात नाशक है।

——:o:——

बारीलुमाए

नाम—

हिन्दी, यूनानी—बारी लुमाए।

वर्णन—

यह एक जाति का घास होता है। इसमें डालियां नहीं होती। चारों तरफ़ पत्ते लगे रहते हैं। इसके पत्तों का रंग सफेद होता है। इसके पत्ते इश्क़ पेंचा के पत्तों की तरह होते हैं। इन पत्तों के पास छोटे २ तार फूटते हैं। इनमें चने के दाने से कुछ छोटा फल लगता है। इस फल पर छोटा २ रुआं होता है। इसके अन्दर ऐसा चिकना और तरल पदार्थ रहता है कि अगर यह कपड़ों से लग जाय तो चिपक जाता है। यह कबरों और खण्डहरों में पैदा होता है। इसके पास अगर कोई दूसरा पौधा हो तो यह उससे चिपट जाता है। इसके फलों को इकट्ठे करके छाया में सुखा लेते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानी मत से यह तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क है। यह सूजन को उतारने वाली, बद गोश्त को काटने वाली और बहुत खुश्की पैदा करने वाली होती है। इसके फल को शरीर पर मलने से शरीर में गर्मी पैदा होती है। अगर सर्दी से शरीर में सुस्ती आ गई हो तो इसको जैतून के तेल में मिलाकर मालिश करना चाहिये। मलेरिया ज्वर में दौरे के शुरुवात में इसको दे देने से ठण्ड का लगना रुक जाता है। शराब के साथ इसको ३॥माशे की मात्रा में रोज देने से दमें में लाभ होता है। हिचकी मिट जाती हैं औरतिल्ली की सूजन बिखर जाती है। बच्चा पैदा होने के समय इसको खाने से बच्चा आसानी से पैदा होता है (ख० अ०)

——:o:——

बाघ नख

नाम—

हिन्दी, यूनानी—बाघनख।

वर्णन—

यह एक औषधि है जो शेर के नाखून की तरह मगर उनसे कुछ चौडी होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यह औषधि सांप और शेर के नाखून के विष में लाभदायक है। इसका तिला लिंगेन्द्रिय पर लगाने से लिंगेन्द्रिय में बहुत ताकत पैदा होती है।

——:o:——

बांब

नाम—

हिन्दी, यूनानी—बांब।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। जहां पानी के झाग जमे हुए हों और जमीन गीली हो उस पर यह फैली हुई रहती है। इसके पत्ते खुरफे के पत्तों की तरह मगर उनसे कुछ कम चौड़े होते हैं। इसके फूल धनिये के फूल के आकार के और रंग में सफेद, लाल काले और पीले होते हैं। इसके बीज खुरफे के बीज से कुछ छोटे होते हैं। कई लोग इसको जल ब्राह्मी मानते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानी मत से यह वनस्पति जिगर के सुद्दों को खोलती है। बुखार, खुजली, कुष्ट और श्वेत कुष्ठ में यह लाभदायक है। यह पाचन क्रिया को बढाती है कंठ माला को दूर करती है। इसका शीत निर्यास ३ तोला, सफेद जीरा, ६ माशा, और शक्कर १ तोला। इन तीनों चीजों को अच्छी तरह मिलाकर पीवें और पथ्य में बिना नमक की रोटी खावें तो मूत्राशय और लिंगेन्द्रिय का जखम भर जाता है। अगर बाम के पत्ते जल पीपल के पत्ते और धतूरे के पत्तों को घी में पीसकर शेर के काटे हुए जखम पर लगावें तो जखम भर जाता है। टूटी हुई हड्डी और चोट पर इसके पत्तों को कूटकर बांधें और अलसी का तेल शक्ति के माफिक पिलावें तो टूटी हुई हड्डी जुड़ जाती है।

——:o:——

बायकुंभा

नाम—

हिन्दी यूनानी—बायकुंभा।

वर्णन—

यह एक मध्यम कद का वृक्ष होता है। इसका वृक्ष शहतूत की तरह होता है पत्ते शहतूत के पत्तों से लम्बे होते हैं। इसके फल वसन्त ऋतु में आते हैं। ये खाकी रंग के और सख्त होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति समशीतोष्ण होती है। शरीर के दोषों को बिखेरती है। पेट को मुलायम करती है।

आमाशय के दर्द और बवासीर में लाभदायक हैं। बच्चों के लिये विशेष रूप से हितकारी है। इसलिये इसको जनमघुटी में मिलाकर देते हैं।

——:०:——

बालपीम

नाम—

हिन्दी, यूनानी—बालपीम।

वर्णन—

यह एक जाति का पत्थर होता है। यह मुलायम नाजुक, साफ और सफेद होता है। इसकी तीन जातियां होती हैं। पहली सफेद कुछ सुरखी लिये हुए शहद की तरह, दूसरी सफेद दूध की तरह, तीसरी खड़िया मिट्टी की तरह। पहली जाति सबसे उत्तम होती है और तीसरी जाति सबसे हलकी होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत - यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में सर्द और खुश्क होती है। यह सूजन को उतारने वाला, संकोचक और रक्त श्राव को रोकने वाला होता है। स्त्रियों के श्वेत प्रदर में यह लाभ पहुँचाता है। इसको पीसकर मंजन करने से दातों से बहने वाला खून बन्द हो जाता है और दांत मजबूत होते हैं। ३॥ माशे बालपीम को ३॥ माशे मिश्री के साथ कुछ दिनों तक लेने से पुराना प्रमेह आराम हो जाता है। खजायनुल अदविया के लेखक इस योग को अपना अनुभूत बतलाते हैं।

——:०:——

बालखता

नाम—

हिन्दी, यूनानी—बालखता।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसका पौधा जमीन पर फैला हुआ रहता है। इसकी डालियाँ पतली २ और लाल रंग की होती हैं तथा आपस में एक दूसरे से उलझी हुई रहती हैं। इसके फूल लाल और सफेद होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से इसकी जड़ तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क तथा इसके दूसरे अंग पहले दर्जे में गरम और खुश्क होते हैं। इसको जोश देकर उस पानी से कुल्ले करने से गले में चिपकी हुई जोंक छूट जाती है। इस काम के लिये यह बेजोड़ है। इसके पत्तों के लेप से चाहे कैसी ही सूजन हो बिखर जाती है। यह वनस्पति विशेष कर बाह्य प्रयोग के ही काम में आती है। भीतरी प्रयोग में इसे नहीं लेना चाहिये।

——:०:——

बाल

नाम—

हिन्दी—बाल, केश, रोम, इत्यादि।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानी मत से मनुष्य के सिरके जले हुए बाल तीसरे दर्जे में गर्म और खुश्क होते हैं। इन बालों को जलाकर जख्मों पर भुरभुराने से जख्म सूख जाते हैं। इनकी राख को जैतून के तेल के साथ मिलाकर आग से जले हुए स्थान पर लगाने से लाभ होता है। इनकी राख को सिरके में पीसकर मसों में लगाने से मस दूर हो जाते हैं इनकी राखकी बत्ती योनि में रखने से श्वेत प्रदर में लाभ होता है। ऐसा कहा जाता है कि आदमी के बालों की धूनी देने से स्त्रियों का गर्भ गिर जाता है।

तालीफ शरीफ में लिखा है कि आदमी के सिरके बालों को जलाकर रोगन गुल में मिलाकर नाक में टपकाने से पागलपन जाता रहता है।

——:o:——

वाकेरी मूल

नाम—

संस्कृत—ध्रुव करंज। हिन्दी—वाकेरी मूल। बम्बई—वाकेरी मूल, वाकेरी चेमातें, गड मातें। गुजराती—वाकेरी नुमातू। बंगाल—ठमुल छचि। तेलगू—नूने गच्चा। बरमा—सनलेथे। लेटिन—Caesalpinia Digyna (केसलपिनिया डिगिना)।

वर्णन—

वाकेरी मूल की करकरंज के समान बड़ी और कांटेदार झाड़ी होती है। इसके पत्ते १५ से लेकर २३ सेंटी मीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूलों के लाल तुर्रे आते हैं। इन फूलों के ऊपर फलियां आती हैं। इस वनस्पति की जड़ के नीचे एक गठान रहती है। इस गठान को दक्षिण में वाकेरीचा माता अथवा गड गठान कहते हैं। यह गठान रताल के समान होता है। कई बार यह गठान बड़े कंद के रूप में भी हाथ लगती है। मगर यह वस्तु बहुत दुष्प्राप्य होती है क्योंकि बहुत गहराई पर होने की वजह से इसको निकालना बहुत कठिन होता है। फिर भी जब वर्षा ऋतु में सैहाद्री पर्वत के अन्दर मोटी २ तहें फटती हैं तब यह कंद दिखलाई देता है। इस वनस्पति की विशेष उत्पत्ति बंगाल में और कोकण के अन्दर सैहाद्री पर्वत में होती है।

यह वस्तु बहुत दुष्प्राप्य होने की वजह से इसकी जगह नकली चीजें बाजार में बिकती हैं। इसलिये इसको लेते समय हमेशा इस बात का ख्याल रखना चाहिये कि यह कंद वजन में बहुत ही हलका होताहै। हाथ में आते ही इसके हलकेपन का अनुभव मनुष्य को होने लगता है और इसका कंद बहुत आसानी से टूट जाता है।

गुण दोष और प्रभाव—

बाकेरी मूल शोषक स्तम्भक, व्रण रोपक, और बल कारक होती है। इसको अधिक मात्रा में देने से कुछ नशा आता है। भगदर, नाड़ी व्रण, नासूर, कार बकल, वगैरह रोगों में इसका बहुत उपयोग होता है। इन रोगों में यह औषधि पेट में पिलाई जाती है और इसको ठंडे पानी में पीस कर इसका लेप भी किया जाता है।

इसकी जड़ में महत्व पूर्ण संकोचक तत्व रहते हैं। यह राजयक्ष्मा और कंठमाला के रोग में घी, जीरा, शक्कर और दूध के साथ ४-५ रत्ती की मात्रा में मिला कर दी जाती है। कंठमाला की गठानों पर इसका लेप भी किया जाता है। मधु प्रमेह के अन्दर भी इसका उपयोग होता है।

बरमा के कुछ भागों में इसकी जड़ को ठंडे पानी में मिला कर ज्वर के अन्दर पिलाई जाती है। इसके अन्दर कुछ नशीला असर भी रहता है।

मूत्र रोगों के ऊपर भी यह औषधि बहुत कामयाब सिद्ध हुई है। मूत्र का कम उतरना, रुक २ कर उतरना, मूत्र उतरते समय जलन होना, लाल, पीला अथवा धातु मिश्रित मूत्र का उतरना, मूत्र में धातु अथवा फास्फोरस का जाना, स्वप्न दोष का होना इत्यादि रोगों में यह वनस्पति बहुत लाभ दायक सिद्ध हुई है। इसके अतिरिक्त खूनी बवासीर, नाक और मुह के मार्ग से होने वाला रक्त श्राव, शरीर की अंतर्दाह, हलका बुखार, सूखी अथवा गीली खुजली, प्रदर, व्रण, नासूर, भंगदर, उपदंश, अस्थिव्रण कंठमाल और क्षय के समान भयंकर रोगों पर भी यह वस्तु लाभ पहुचाती है।

इन सब कार्यों के लिये सवेरे और शाम प्रति बार ३ माशे यह वनस्पति लेकर पानी के साथ घिस कर उसमें ५ तोला गाय का दूध अथवा ५ तोला ठंडा पानी मिला कर पिलाना चाहिये। साधारण रोगों में इसका ४० दिन का सेवन पर्याप्त होता है परन्तु क्षय अथवा भंगदर के समान भयंकर रोगों में इसको ६ महिने से लेकर १ वर्ष तक लगातार उपयोग में लेते रहना चाहिये। जिन रोगों में गर्मी का प्रभाव अधिक हो उनमें इस पेय के अन्दर थोड़ा घी, शक्कर और जीरे का चूर्ण भी मिला देना चाहिये। कंठमाला, व्रण, घाव, इत्यादि बाह्य रोगों में इस औषधि को पिलाने के साथ २ इसका बाह्य लेप भी भी करना चाहिये। (जंगलनी जड़ी बूटी)

बालुंज

नाम—

संस्कृत—वरुणा। **हिन्दी**—बेंगस, बेंस, बेशी, वेद, बेंद, बेट, बिलश, लेला। **बंगाल**—बोहशकी, पानीजामा। **बम्बई**—बच, बेशी, बेद, बालुंज। **मराठी**—बालुंज, बितस, बोच, बोचा। **देहरादून**—बेद, जलमाला। **अवध**—बिलस। **पंजाब**—बेधा, बेंद, बचोल, बेइस, मगशेर। **सिंध**—बेधा, बितसा, सुफेदा। **तेलगु**—एटीपाला। **मध्यप्रान्त**—धानी, धनई। **लेटिन**—Salix Tetrasp-

-erma (सेलिक्स टेट्रासपरमा) ।

वर्णन—

यह वेद मुश्क के वर्ग का एक वृक्ष होता है । इसका झाड़ बहुत सुन्दर और बड़ा होता है । इसकी छाल काली, रेशेदार, चौड़ी, कड़वी तूरी और सुगंधित होती है ।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति के गुण धर्म साधारणतया वेद मुश्क के ही समान होते हैं । यह ज्वर नाशक होती है ।

वारक कांटा

नाम—

बंगाल—वारक कांटा । नेपाल—झहारा, पीपल पाती । लेटिन—Pericampylus Incanus (पेरीकेंपिलस इनकेनस) ।

वर्णन—

यह एक पराश्रयी झाड़ी होती है । जो बंगाल की उत्तरी सीमा पर पैदा होती है ।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी जड़ बहुत लम्बे समय से सांप पालने वाले कारवेलियों में सर्प विष को दूर करने की औषधि के रूप में प्रसिद्ध है । दूसरे विषैले कीड़ों के डंक पर भी भी इसकी जड़ का लेप करने से और उसको घोट कर पिलाने से उनका विष निस्तेज हो जाता है । किसी भी विष के साथ इस औषधि का रस मिला देने से उसका प्राण घातक धर्म नष्ट हो जाता है ।

वालू का शाग

नाम—

संस्कृत—वालू, वालुका, सुगंधी, कुष्ट गंधी, कपित्थ, गंधत्वक, एलवालुक, इत्यादि । हिन्दी—वालुका शाग । बंगाल—वालुक । तामील—मनलि किराई । मद्रास—पेनी किराइ । लेटिन—Gisekia Pharnacoides (जिसेकिया फारनेसोआइडिस) ।

वर्णन—

यह एक तरकारी होती है इसके क्षुप छोटे और बहु शाखी होते हैं । इसके पत्ते मान्सल, अंडाकृति और करीब १ इंच लम्बे होते हैं । इसके बीज काले रंग के होते हैं ।

गुण दोष और प्रभाव—

वालू की तरकारी सुगंधित, कृमिनाशक और मृदु विरेचक होती है इसके पचांग के स्वरस को

१ औंस की मात्रा में १ औंस ठंडे पानी के साथ प्रातः काल निहारे पेट देने से पेट के अन्दर पड़ने वाले चपटे जाति के जंतु (Taenia) मर जाते हैं। इसका कृमिनाशक धर्म बहुत उत्तम है।

आयुर्वेदिक मत से यह वनस्पति कड़वी, चरपरी पाचक, कृमिनाशक, घाव को अच्छा करने वाली गीली खुजली में लाभदायक होती है और प्यास, नाक की सूजन, ओंकारटीज, हृदय पीड़ा, गलित कुष्ट श्वेत कुष्ट, मूत्र सम्बन्धी रोग और भूख की कमी को दूर करती है।

बालसन

नाम—

हिन्दी—बालसन। बम्बई—हब्बुल बालसन। लेटिन—Balsamodendron Opobalsamum (बाल्समोडेंड्रोन ओपोबालसेमम)

वर्णन—

यह छोटा झाड़ी नुमा वृक्ष होता है। इसके पत्ते एक के बाद एक लगे हुए रहते हैं। इसका गोंद काम में आता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसका फल शान्तिदायक, कफ निस्सारक, उत्तेजक और सकोचक होता है इसमें एक कड़वा तत्व और उड़नशील तेल पाया जाता है।

—:o:—

बालरक्षा

नाम—

पंजाब—बालरक्षा। इङ्गलिश—Jersey Cudweed (जेरसी कुडवीड)। लेटिन—Gnaphalium Luteoalbum (गेफेलियम ल्यूटोएलबम)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके पत्ते बिना डण्ठल के होते हैं। ये २ ५ से लेकर ३ ६ सेंटिमीटर तक लम्बे और ३ से १ ३ सेंटिमीटर तक चौडे होते है इसके फूलों के सिरे पीले रंग के होते हैं, यह वनस्पति सारे भारतवर्ष के गरम प्रान्तों में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके पत्ते सकोचक और घाव को भरने वाले होते हैं। बीमार के घर में इसके पौधे को जलाने से वहां की हवा शुद्ध होती है।

—:o:—

बाइस गूगल

नाम—

बम्बई—बाइस गूगल । लेटिन—Balsamodendron Pubescens (बालसेमोडेंड्रोन पबसेंस)।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति देहली में होने वाले विशेष जाति के फोड़ों पर काम में आती है।

बायलो

नाम—

उड़िया—बायलो। तामील—पोलेवू। तेलगू—दूदिका, लोलूगा, नोलिका ।लेटिन—Pterospermum Heyneanum (टेरोस्परमम हेनेनम)।

वर्णन—

यह एक मध्यम कद का वृक्ष होता है। इसके पत्ते १० से लेकर १५ सेंटीमीटर तक लम्बे और ५ से लेकर ७ ५ सेंटीमीटर तक चौडे होते हैं। इसके फूल सफेद और सुगंधित होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके पत्ते श्वेत प्रदर को दूर करने के लिये उपयोग में लिये जाते हैं। इनका तबाकू की तरह धूम्रपान किया जाता है।

बादसाह सालप

नाम—

संस्कृत—प्रजन। हिन्दी—यूनानी—बादसाह सालप। अंग्रेजी—Royal Salep, रायल सालेप। लेटिन—Allium Macleani (एलियम मेकलेनी)।

वर्णन—

बादसाह सालप के नाम से बाफ कर सुखाया हुआ कद ईरान से यहां पर आता है। इसका रंग भूरा अथवा कुछ कालापन लिये हुए होता है और इसके ऊपर खड़ी रेखायें रहती हैं। इसका आकार लहसन के समान रहता है। यह पानी में बहुत देर तक रखने से फूल जाता है। इसका स्वाद कड़वा और तीखा होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

बादशाह सालम, सालम मिश्री के बदले में उपयोग में लिया जाता है। मगर यह स्वाद, धर्म और गुण में सालम मिश्री से हलका होता है।

बारीक भंवरी

नाम —

मराठी—बारीक भवरी । गुजराती—गुलाबी गरियों, कटालोगरियो । कच्छी—पोटियार । कोकण—रावण पुडिया । अंग्रेजी—Traveller's Midnight Lilies । लेटिन—Ipomaea Muricata (इपोमिया मुरीकेटा) ।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति की वर्ष जीवी बेल होती है । इसकी शाखाओं पर बहुत बारीक और पतले कांटे होते हैं । इसके पत्ते चौडे, पतले और नोकदार होते हैं । इसके फूल गुलाबी रंग के होते हैं और ये शाम को खिलते हैं । इसके फूल गोलाई लिये हुये नोकदार होते हैं । ये ऊपर से चिकने होते हैं और हर एक फल में ४ बीज होते हैं । इसके बीज कालापन लिये हुए भूरे पन के होते हैं । इसके अंगों में एक प्रकार का दूधियां रस भरा हुआ रहता है ।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति रेचक, सूजन को नष्ट करने वाली और पौष्टिक मानी जाती है । इसके पत्ते नारू के ऊपर तथा दूसरे फोडे फुन्सियों की सूजन पर बांधे जाते हैं । इसके फूल के नीचे के जाडे डंठल का गरीब लोग शाग करते हैं । यह पौष्टिक माना जाता है । इसके बीज रेचक होते हैं ।

एचिसकेरीनेटा सांप के विष पर इसकी जड़ मनुष्य के पेशाब में पीस कर पिलाई जाती है । कोकण के वैद्यों का मत है कि इस सर्प के विष को नष्ट करने के लिये यह एक विश्वसनीय वस्तु है । नारू के ऊपर इसकी जड़ों को पीस कर इसका लेप किया जाता है ।

बिखमा

नाम—

हिन्दी—बिखमा । लेटिन—Aconitum Palmatum (एकोनिटम पालमेटम) ।

वर्णन—

यह भी बछनाग के वर्ग का एक क्षुप होता है । जो नेपाल, सिकिम और दक्षिणी तिब्बत में १० हजार फीट से १६ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होता है । इसकी जड़ें गठानदार और फीके उदी रंग की होती हैं । इनकी लम्बाई २ से ४ इञ्च तक की होती है । ये शीशे के समान बहुत भारी वजनदार होती हैं । इन जड़ों का भीतरी हिस्सा सफेद रंग का रहता है ।

गुण दोष और प्रभाव—

बिखमा के अन्दर पालमेटीसाइन नामक उपक्षार पाया जाता है । इसकी जड़ें विषैली और

निर्विषैली दो प्रकार की होती है। इसकी निर्विष जड़ का धर्म अतीस के धर्म के समान होता है। यह कटु पौष्टिक, अग्निदीपक, सकोचक और पार्यायिक ज्वरों को दूर करने वाली होती हैं। दस्त, उल्टी, अतिसार, उदर शूल इत्यादि आँतों से सम्बन्ध रखने वाले रोगों में यह अच्छा लाभ पहुंचाती है।

जङ्गलनी जड़ी बूँटी के लेखक लिखते हैं कि नेपाल होकर भूतान जाने के रास्ते पर बिखमा नामक वनस्पति के ४-५ फुट ऊँचाई के पौधे दिखलाई देते हैं। इन पौधों में यह तासीर रहती है कि इनके नजदीक होकर कोई मनुष्य चला जावे तो वह बेहोश हो जाता है और इसी से इसकी जड़ें लाकर के लोग उन जड़ों को क्लारोफार्म की तरह बेहोश करने के लिये सुंघाते हैं और ये जड़ें क्लोरोफार्म का काम बहुत सफलता के साथ करती हैं। क्लोरोफार्म से पैदा की हुई बेहोशी अगर कभी खतरनाक होती है तो उसको दूर करने के लिये डाक्टरों को अनेक उपाय करने पड़ते हैं। मगर इस वनस्पति से पैदा की हुई बेहोशी को दूर करने के लिये विशेष खटपट नहीं करना पड़ती। क्योंकि प्रकृति के उसी भण्डार में जहां यह बिखमा नामक वनस्पति पैदा होती है। वहीं बिखमा के पौधों के नजदीक ही एक निर्विषी नामक वनस्पति भी पैदा होती है जिसकी जड़ मनुष्य के नाक के आगे रखते ही मनुष्य की बेहोशी दूर होकर उसको होश आ जाता है।

——:०:——

बिसफेज

नाम—

बम्बई—बिसफेज, बसफेज, । लेटिन—Polypodium Vulgare (पोलीपोडियम व्हलगेर)

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके पत्ते कंगूरेदार और जड़ें बहुत होती हैं। ताजी हालत में इसकी जड़ का रंग हरा और सूखने पर भूरा हो जाता है। इसकी जड़ में कुछ सुरखी की झलक भी होती है। इसकी जड़ की हर एक गांठ में बारीक २ रेशे लगे हुए रहते हैं। जिससे यह कनखजूरे की तरह दिखलाई देती है अच्छी जड़ वह होती है जो मोटी और ताजा हो। ऊपर से सुर्ख और पीलापन लिये हुए हो। भीतर से पिस्ते के मगज की तरह हरी निकले। चबाने से उसका स्वाद कुछ, कड़वा और मीठा मालूम हो और जबान में खिंचावट पैदा करे।

गुण दोष और प्रभाव—

बिसफेज की जड़ कुछ कड़वी और कुछ कसैली होती है। इसमें कफ निस्सारक, वेदना नाशक और शोथघ्न ये तीन धर्म रहते हैं। इसका कफ निस्सारक धर्म अधिक जोरदार नहीं होता तो भी यह कफ और पित्त को बाहर निकाल देती है। इसमें एक दोष यह रहता है कि इसको अधिक दिन तक बड़ी मात्रा में सेवन करने से आमाशय में दाह पैदा हो जाता है।

पित्त प्रकोप में बिसफेज को पित्त पापड़ा और हरड़ के साथ देते हैं। सूजी हुई सन्धियों पर और पीड़ा युक्त गठानों पर इसका लेप करने से लाभ होता है। इससे त्वचा में सुन्नता पैदा होती है।

यूनानी मत—यूनानी मत से दूसरे दर्जे में गरम और तीसरे दर्जे में खुश्क होती है। यह हृदय को शक्ति देती है और प्रसन्नता पैदा करती है। दिल और दिमाग की खराबी को दस्त की राह निकाल देती है। इसको मिश्री के साथ लेने से वायु और कफ तथा रक्त के दोषों को दस्त की तरफ निकाल देती है। आमाशय में जमे हुए सुद्दों को बिखेर देती हैं। कुष्ट और रक्त विकार में बहुत लाभ पहुचाती है। माली खोलिया और गठिया में भी यह लाभदायक है। इसको अनीसून और मुलेठी के साथ जोश देकर पीने से खांसी और दमे में लाभ होता है। शहद के पानी के साथ इसका जोशांदा (काढ़ा) बना कर पीने से कॉलिक उदर शूल मिटता है।

इसको अमलतास या तुरञ्जबीन के साथ लेने से बवासीर, आमाशय का पुराना दर्द और मृगी में लाभ होता है। ताजा बिसफेज को ऊपर से छील कर पानी और नमक में एक रात भिगो कर फिर धो कर पीस कर शहद में मिला कर अवलेह तैयार करें। इस अवलेह को प्रति दिन चाटने से फोड़े और फुन्सियां दूर हो जाती हैं।

मुजिर—इसका अधिक मात्रा में सेवन मतली को पैदा करता है। सीने और गुर्दे को नुकसान पहुँचाता है और आमाशय में जलन पैदा करता है।

दर्पनाशक—हसराज, गुलाब के फूल और छीगहर्ड।

मात्रा—इसकी मात्रा के सम्बन्ध में मतभेद है। डॉक्टर देसाई ने इसकी मात्रा ५ रत्ती से १० रत्ती तक बतलाई है मगर खजाइनुल अदविया में इसकी मात्रा ४॥ माशे से १०॥ माशे तक बतलाई है जो कि बहुत अधिक मालूम होती है। जहां तक हो इसको कम मात्रा में लेना ही विशेष अच्छा है। क्योंकि इसकी प्रति क्रियायें शरीर में खराब होती हैं।

——:०:——

बिल्ली लोटन

नाम—

हिन्दी—यूनानी—बिल्ली लोटन। मराठी—कालावल। अजमेर—बिल्ली लोटन, बेबरग खताई, बदरगबोया। नेपाल—निस्वो। लेटिन—Valeriana Officinalis (वेलेरिना आफिशीनेलिस)।

वर्णन—

यह एक जाति का घास होता है जो खुशबूदार, हरा और कुछ कड़वा होता है। इस घास की खुशबू पर बिल्ली बहुत मोहित होती है और उसको देखते ही खुशी के मारे उस पर लेटती है और बहुत तमाशे करती है। यह जटामांसी और तगर के वर्ग की ही एक औषधि है।

यूनानी ग्रंथकारों के मतानुसार बिल्ली लोटन की दो जातियां होती हैं। एक दहोरी जाति जिसके

पत्ते छोटे, मुलायम पतले और लम्बे होते हैं। इनके किनारे उभरे हुए रहते हैं। इसका फूल नीला और और कुछ सुरखी लिये हुये होता है। जहाँ यह पैदा होती है वहाँ के लोग इसकी शाग बना कर खाते हैं। इसके बीज अलसी के बीजो की तरह मगर उनमे कुछ छोटे होते हैं। इनका रंग खाकी होता है।

दूसरी बड़ी जाति होती है। इसकी खुशबू पहली जाति की खुशबू से कुछ तेज होती है। इसके पत्ते लम्बे नहीं बल्कि गोल होते हैं। इनका रंग हलका हरा होता है। इनको मलने से बिजौरे नींबू के समान खुशबू आती है।

देशी वैद्यों के मतानुसार इसकी सफेद, काली और पीली तीन जातियां होती हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानी मत से यह पहले दर्जे में गरम और खुश्क होती है। यह वायु को नष्ट करती है और खून को साफ करती है। स्मरण शक्ति, काम शक्ति और आमाशय की शक्ति बढाती है। मस्तिष्क के सुद्दों को खोलती है। कफ की बीमारियों में लाभदायक है। साँस की तंगी को दूर करती है। बेहोशी, मरोड़, हिचकी और गुर्दे की बीमारी मे मुफीद है। पागलपन, दहशत और वहम को दूर करती है। इसके काढे से कुल्ले करने से दाँतों की बीमारियाँ आराम होती हैं।

जिन फोड़ों में पीप भरी हुई हो उन पर इसका लेप लाभ पहुँचाता है। वायु के कोप से जो खुजली हो जाती है उसमें यह लाभ पहुँचाती है। आंख के आसपास की सूजन भी इसके लगाने से दूर होती है। इसका लेप जोड़ों के दर्द को शांत करता है। इसके सूंघने से स्मरण शक्ति तेज होती है। मस्तिष्क को शक्ति मिलती है और मस्तिष्क की खराबी दूर हो जाती है। इसके पत्तों को कूट कर शहद में मिला कर चाटने से साँस की तंगी और खांसी आराम होती है। स्त्रियों की छाती में अगर दूध जम जावे तो इसके लेप से बिखर जाता है। यकृत और पाचन क्रिया को यह शक्ति देती है तथा हिचकी और मवली को रोकती है। इसके खाने से खुशबूदार डकारे आती हैं। दिल की कमजोरी से अगर नींद नहीं आती हो तो इसके इस्तेमाल से नींद आना शुरू हो जाती है। इसके खाने से वायु के सब दोष दस्तों के तरफ से निकल जाते हैं। इसके हरे पत्तों का रस १०॥ माशे लेकर उसमें ३॥ माशे नतरून मिलाकर खाने से हिस्टीरिया, आंतों का जखम मरोड़ और बवासीर में आराम होता है। इसकी ताजा जड़ को गर्भाशय में रखने से गर्भ गिर जाता है।

इसके बीजों को ४॥ माशे की मात्रा में लेने से मलेरिया बुखार में आराम होता है। इसके १३॥ माशे पत्तों को पीसकर शराब के साथ लेने से पागल कुत्ते और बिच्छू के जहर में लाभ होता है।

देशी चिकित्सकों के मतानुसार इसकी सफेद जाति तेज, गरम और खुश्क होती है। भूख पैदा करती है पाचन क्रिया व प्राणवायु को शक्ति देती है और इसकी पीली जाति मीठी, कड़वी, फोड़ों को आराम करने वाली और सूजन को उतारने वाली होती है। यह कफ और वायु की बीमारियों को नष्ट करती है। कष्ट प्रसूता स्त्री को बच्चा होने में मदद करती है। पीलिया, विष विकार, भूख की कमी,

पेशाब की कमी, काम शक्ति की कमजोरी, रक्त के उपद्रव, दमा, खाँसी, दिल की कमजोरी, कुष्ट, वमन पेट के कृमि तथा दाद और खुजली में यह लाभदायक होती है।

कर्नल कीर्तिकर और मेजर बी० डी० बासू के मतानुसार इसकी जड़ उत्तेजक और आक्षेप निवारक होती है। यह आक्षेप निवारक औषधि की तरह हिस्टीरिया, मृगी, हैजा और दूसरी विकृतियों में लाभ पहुँचाती है और एक उत्तेजक औषधि की तरह यह ज्वर की बढ़ी हुई स्थिति में जब शरीर में बहुत दुर्बलता पैदा हो जाती है और तापक्रम गिरने लगता है तब उपयोग में ली जाती है।

आक्षेप निवारक औषधि की दृष्टि से यह हींग की अपेक्षा बहुत कमजोर होती है। अधिक मात्रा में इसको ले लेने पर यह सिर दर्द, मानसिक उत्तेजना और ज्ञान तन्तुओं की क्रिया को अव्यवस्थित कर देती है। पार्यायिक ज्वरों में इसको सिनकोना की छाल अथवा दूसरी कटु पौष्टिक वस्तुओं के साथ लेने से लाभ होता है। इसके काढ़े से स्नान करने से तीव्र सन्धिवात में बहुत लाभ होता है।

मुजिर—इसकी अधिक मात्रा में खाने और सूँघने से सिर दर्द, होता है। पेशाब में जलन होती है। मस्तिष्क में अव्यवस्था पैदा हो जाती है और गरम प्रकृति वालों के यकृत को हानि पहुंचाती है।

दर्पनाशक—बबूल का गोंद, बादरंज बोया और धनियां।

प्रतिनिधि—माल तुलसी या फरंज मुश्क।

मात्रा—चूर्ण की ३ माशे से ७ माशे तक, बीजों की ४ माशे से १ तोले तक।

—:०:—

बादरंज बोया

नाम—

पंजाब—बिल्ली लोटन, बादरंज बोया, बेब्ररग खताइ। नेपाल—नियासवो। लेटिन—Nepeta Ruderalis (नेपेटा रुडेरेलिस)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वर्ष जीवी वनस्पति होती है इसकी उँचाई १५ से लेकर ४५ सेंटिमीटर होती है। इसके पत्ते १.३ से लेकर ५ सेंटिमीटर तक लम्बे और १ से लेकर ३.८ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। यह वनस्पति पंजाब, बंगाल, मध्यभारत और दक्षिण में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति हृदय के लिये एक पौष्टिक वस्तु है और सब प्रकार के ज्वरों में इसका बहुत उपयोग होता है, इसके काढ़े से कुल्ले करने से गले के छाले मिटते हैं। नेपाल में यह वनस्पति सुजाक को दूर करने के लिये पिलाई जाती है।

—:०:—

बिदारी कंद

नाम—

संस्कृत—भूकुष्मांडी, भूमिकुष्मांड, गजवाजिप्रिया, गजेष्ठा, गंधफल, इक्षुगंध, खडपलाश, चीरवल्ली, पयास्विनी इत्यादि। हिन्दी—बिदारीकद, बिलाइकद, दूध विदारी। बङ्गाल—शिमिय, बन्नाजि। पजाब—सुरल। गुजराती—खाकरवेल, विदारी, विदारीकद। मराठी—बाघरा, मारवा, पिठानी। मेरवाडा—घोड़ावेल। पजाब—वादर, सूरल। तेलगू—दारीगुमोदी। लेटिन—Pueraria Tuberosa (पुरेरिया टयूबरोसा)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति की वेल होती है। इसके पत्ते बडे २ लोबिया के पत्तों की तरह होते हैं और उसकी जड़ में १ बड़ा कद होता है। जो सूरण कंद के बराबर होता है। इस कद को काट २ कर टुकड़े करके सुखाये जाते हैं और वे ही टुकड़े बिदारीकद के नाम से बाजार में बिकते हैं।

इन्डियन मेडिसनल प्लांटस नामक ग्रंथ में इस वनस्पति का दो नामों से वर्णन किया गया है। दोनों जगह सस्कृत के नाम प्राय वे के वे ही हैं। मगर लेटिन नाम एक जगह पर पुरेरिया टयुबरोसा और दूसरी जगह पर इपोमिया डिजिटेटा दिया गया है। दोनों वनस्पति के चित्र भी अलग २ दिये गये हैं। इससे मालुम होता है कि इस वनस्पति की भिन्न वर्ग की २ जातियाँ होती हैं जिनको सस्कृत ग्रथकारों ने एक ही मानकर लिखा है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत – आयुर्वेदिक मत से इसके फूल ठण्डे और कामोद्दीपक होते हैं। इसका कंद मीठा, तेल युक्त, ठडा, कामोद्दीपक, पौष्टिक, मूत्रल, रसायन और कठ को सुधारने वाला होता है। यह कुष्ट, पित्त विकार, शरीर की जलन, रक्त सम्बन्धी रोग, घात, अनैच्छिक धातु स्राव और मदाग्नि को दूर करता है।

इसकी जड़ ज्वर के अन्दर तृषा शामक और शांतिदायक वस्तु की तरह दी जाती है। इसकी जड़ को कुचल कर सधियों की सूजन को दूर करने के लिये बांधी जाती है।

मुडा जाति के लोग इसकी जड को ज्वर और सधिवात में शरीर के ऊपर रगड़ते हैं।

नेपाल में यह वामक और पौष्टिक वस्तु की तरह उपयोग में ली जाती है और वहां पर यह औषधि स्तनों में दूध बढाने वाली भी मानी जाती है।

बिदारीकंद नंबर २ (बिलाईकंद)

नाम.—

संस्कृत—भूकुष्मांड, भूमिकुष्मांड, गधफल इत्यादि। हिन्दी—विदारीकद, बिलाइकद। बंगाल—

बिलाईकंद, भुइकुमड़ा, भूमिकुमड़ा। बांबे—भुइकोला। मराठी—भुइकोला, बिदारीकंद। तामील—नीलापुचेनी, पलमोदिक। तेलंगू—भूचक्र गदा। उर्दू—बलाईकंद। इंगलिश—Giant Potato लेटिन—Ipomaea Digitata (इपोमिया डिजिटेटो)।

वर्णन—

बिदारीकंद की बड़ी बेल हिन्दुस्तान में सभी दूर पैदा होती है। इसके फूल बैंगनी, घंटाकृति और पत्ते कंगूरेदार होते हैं। जमीन के अन्दर इसका बड़ाकंद रहता है जो कालापन लिये हुए भूरे रंग का और ऊबड़खाबड़ होता है इस कंद को काटने से इसके भीतर से सफेद रंग का रस निकलता है। इसके छोटे टुकड़े करके सुखाकर बिदारीकंद के नाम से बेचे जाते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत से बिदारीकंद, मीठा, शीतल, वीर्यवर्धक स्निग्ध, पौष्टिक, धातुवर्धक बल कारक, कफ जनक, दुग्धवर्धक, भारी, रसायन, मूत्रल, स्वर को शुद्ध करने वाला, रूखा, गर्भस्थापक, स्वादिष्ट तथा पित्त, वात, रुधिर विकार, दाह और वमन को दूर करता है। इसके फूल वीर्यवर्धक, शीतल, रस और पाक में मधुर, कफकारक, वातवर्धक, भारी और पित्तनाशक होते हैं।

इसकी दूसरी जाति दूधबिदारी मधुर, अम्ल, कसैली, वीर्यवर्धक, कामोद्दीपक, दूध बढ़ाने वाली, चरपरी, रसायन, बलकारक, शीतल, मूत्रल, कफ कारक, स्निग्ध, कांतिवर्धक भारी, स्वरशोधक तथा पित्तरोग, रुधिर विकार, पित्तशूल, वात दाह और प्रमेह को दूर करने वाली होती है।

क्षीर विदारी की नालरहित और नालयुक्त दो जातियां होती हैं। इसकी नालरहित जाति में रोग निवारक शक्ति (Immunity) विशेष रूप से रहती है और इसकी नाल युक्त जाति में जीवनीशक्ति (Vitality) बढाने की ताकत विशेष होती है।

बिदारी कंद में पौष्टिक, आनुलोमिक, पित्त निस्सारक दुग्धवर्धक और स्नेहन इतने धर्म रहते हैं। इससे भूख लगती है अन्न पचता है दस्त साफ होता है और कान्ति तथा वजन बढ़ता है। कॉडलिवर् ऑइल के समान अपवित्र वस्तुओं से शरीर में जो कार्य होते हैं वे ही बल्कि उनसे भी ज्यादा उत्तम इस वनस्पति से होते हैं। इसको लेते समय घृणा पैदा नहीं होती और न शरीर में किसी प्रकार की दुर्गंध आती है। प्रौढ मनुष्यों के लिये यह औषधि विशेष रूप से उपयोगी होती है।

शारिरिक अथवा मानसिक थकावट की वजह से जब वजन की की कमी होजाती है। तब इस औषधि को दी जाती है। इससे जितना जल्दी वजन बढ़ता है उतना दूसरी किसी भी औषधि से नहीं बढ़ता। यकृत और प्लीहा की वृद्धि में इसका कच्चा चूर्ण दिया जाता है। जिससे पित्त का संचालन ठीक तौर से होने लगता है और दस्त साफ होता है। दूध बढ़ाने के लिये इस को द्राक्षासव के साथ देते हैं।

रासायनिक विश्लेषण —

विदारीकंद के कन्द में आटा बहुत अधिक प्रमाण में रहता है। इसमें १० प्रतिशत शक्कर और बहुत थोड़ी मात्रा में जेलप के अन्दर पाई जाने वाली राल के समान मृदुविरेचक राल रहती है।

सुश्रुत के मतानुसार इसकी जड़ दूसरी औषधियों के साथ में साँप और बिच्छू के विष को दूर करने के उपयोग में ली जाती है। मगर केस और महस्कर के मतानुसार सांप और बिच्छू के विष पर यह निरुपयोगी है।

यूनानी मत—यूनानी मत से विदारीकद तर और गरम होता है कोई २ इसे सर्द और तर भी मानते हैं। इसके कद का चूर्ण भारी, कामोत्तेजक और पेशाब बढाने वाला होता है। यह खून को साफ करता है और स्त्रियों के दूध को बढ़ाता है।

मात्रा—पौष्टिक और रसायन कार्य के लिये इसके चूर्ण को ३ माशे से ६ माशे तक की मात्रा में घी में मिला कर उस घी को दूध में डाल कर उस दूध को औटाकर मिश्री मिला कर पीना चाहिये।

उपयोग—

दूधवृद्धि—विदारीकन्द के चूर्ण की फक्की दूध के साथ लेने से स्त्रियों का दूध बढता है।

बच्चों की निर्बलता—१ माशे बिरादरी कद के चूर्ण को शहद के साथ चटाने से बच्चों की निर्बलता मिटती है और इसी चूर्ण को पीपल के चूर्ण तथा शहद के साथ चटाने से बच्चों की पाचन शक्ति बढती है।

मासिक धर्म की अधिकता—विदारी कन्द के चूर्ण को घी और शक्कर के साथ चटाने से मासिक धर्म में रज का अधिक जाना बन्द हो जाता है

तिल्ली और यकृत की वृधि—बिदारीकद के चूर्ण की फक्की लेने से तिल्ली और यकृत की वृद्धि मिटती है।

पित्तशूल—इसके रस में शहद मिला कर पीने से पित्त शूल मिटता है।

भस्मक रोग—विदारी कन्द के रस में दूध डाल कर औटा कर पिलाने से या इसके रस में भैंस का घी मिला कर पिलाने से भस्मक रोग मिटता है।

बनावटें —

महारसायन योग – विदारीकद का चूर्ण करके उसको विदारीकन्द के स्वरस से २१ बार तर कर के सुखा लेना चाहिये। इस चूर्ण में से ६ माशे चूर्ण प्रतिदिन गाय के दूध और मिश्री के साथ लेने से मनुष्य का बल, जीवनी शक्ति, रोगनिवारक शक्ति, ओज कान्ति और काम शक्ति बहुत बढ़ती है और अनेकों स्त्रियों से रमण करने की सामर्थ्य मनुष्य में पैदा हो जाती है। यह आयुर्वेद का एक महारसायन योग है।

——x——

बिधायरा

नाम—

संस्कृत—अजन्त्री, अवेधी, छागला, छागलन्त्रिका, दीर्घ वल्लरी, दीर्घ वालुका, जतुका, मुंगा, कोटर पुष्पी, रूक्ष गंध, वृद्ध दारुक, इत्यादि। **हिन्दी**—विधारा, काला विधारा। **गुजराती**—वरधारो। **मराठी**—वरधारा बाकेरी। **बंगाल**—विधादका, वितरका। **बम्बई**—वरधारा। **तेलगू**—चन्द्रपुड़ी। **लेटिन**—Rourea Santaloides (रोरिया सेंटेलाइडस)।

वर्णन—

यह एक दूसरे वृक्षों पर चढ़ने वाली झाड़ी नुमा बेल होती है। कोंकण और त्रावणकोर में यह बहुत पैदा होती है। इसके पत्ते चंदन के पत्तों की तरह होते हैं। इसके फूल छोटे, सफेद और सुगंधित होते हैं। इसके बीज एक सेंटी मीटर लम्बे होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से विधारा चरपरा, कड़वा, कसैला, रसायन गरम, मधुर, बुद्धि वर्धक, स्वर को शुद्ध करने वाला, अग्नि दीपक, कांति वर्धक, पौष्टिक, कामोद्दीपक, रुचिकारक, हलका तथा उपदंश, पाडु रोग, क्षय खांसी, प्रमेह, वात रक्त, आमवात, सूजन और कफ को दूर करने वाला होता है।

डॉक्टर देसाई का कथन है कि इस वनस्पति की जड़ें और इसकी डालियों के टुकडे दारू हल्दी के नाम से बिकते हैं मगर यह वनस्पति असली दारू हलदी या असली विधायरा नहीं है। उनके मत से समुद्र शोष (Argyreia Speciosa) ही असली विधायरा है। समुद्र शोष का वर्णन हम आगे के भागों में यथा स्थान करेंगे।

इसकी जड का एक कटु पौष्टिक वस्तु की तरह उपयोग में ली जाती है। यह सधिवात, स्कर्वी, मधु प्रमेह और फुफ्फुस सम्बन्धी शिकायतों में उपयोगी होती हैं। उपदंश रोग में यह एक धातु परिवर्तक और पौष्टिक वस्तु की बतौर काम में ली जाती है। वृण, फोड़े, फुन्सी और दूसरे चर्म रोगों पर बाह्य उपचार के काम में ली जाती हैं।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह गरम और खुश्क होता है। कफ को दस्तों की राह से निकालता है। काम शक्ति को बढ़ाता है। वायु कफ और रक्त के दोष को मिटाता है। कब्ज को दूर करता है। यह सुजाक और सूजन में मुफीद है। गठिया और अधृसी वाय में लाभ पहुंचाता है। ३॥ माशा की मात्रा में इसको देने से जलोदर में फायदा होता है। विधायरे में चेप बहुत होता है। इस चेप का सेवन करने से खून साफ होता है। शरीर संगठन की खराबी को दूर करने के लिये इसके चूर्ण को दूध के साथ लेते हैं।

उपयोग—

मूत्र कृच्छ्—इसके पत्तों को पानी में भिगोने से पानी गाढ़ा हो जाता है। इस पानी में मिश्री डाल कर पिलाने से मूत्र कृच्छ्र मिटता है।

गठिया—शतावरी के साथ विधायरे का क्वाथ बना कर पिलाने से गठिया मिटती है।

उपदंश—त्रिफला और विधायरे का क्वाथ बना कर पिलाने से उपदंश में लाभ होता है।

श्लीपद—इसके चूर्ण को काञ्जी के साथ पीने से श्लीपद में लाभ होता है।

स्मरण शक्ति की कमजोरी—विधायरे की जड़ के चूर्ण को शतावरी के स्वरस की ७ भावना देकर उसमें से १ तोला चूर्ण प्रति दिन घी के साथ चाटने से बुद्धि और स्मरण शक्ति बढ़ती है।

बिजिंदक

नाम—

अफ़गानिस्तान—बिजिंदक। अंग्रेजी—Hairy Cress। लेटिन—Lepidium Draba (लेपिडियम ड्राबा)।

वर्णन—

इस वनस्पति की खेती पंजाब में होती है। यह एक जाति का घास होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके बीज पेट के अंदर रहने वाली गेस को निकालने के काम में लिये जाते हैं ये एक बार में ७ या ८ की मात्रा में दिये जाते हैं।

यूरोप में इसका पौधा रक्तातिसार को नाश करने के काम में लिया जाता है।

बिलिंबी

नाम—

संस्कृत—कर्कटी वृक्ष। हिन्दी—बिलंबी, बेलबू। दक्षिण—बेलयू—बंगाल—बिलंबी। गुजरात बिलंबू। तेलगू—बिली बिली, बिलु बी, गोमारेकू। तामील—पिम्बिवी। इंगलिश—Bilimbi लेटिन—Averrhoa Bilimbi (एव्हेरोहा बिलिंबी)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति का वृक्ष होता है जो विशेष रूप से मलाया में पैदा होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति संकोचक, अग्निवर्धक और ज्वर नाशक होती है। इसके फलों का शरबत प्यास को

बुझाने वाला, ज्वर के प्रकोप को कम करने वाला और भीतरी रक्तश्राव तथा बवासीर के मामूली केसों में लाभ पहुंचाने वाला होता है। इसके फलों की कढी बवासीर और स्कर्वी रोग में एक उत्तम पथ्य होती है।

फ्रेंच गायना में इसके फलों का शरबत या इसके फलों का काढा यकृत के प्रदाह तथा शरीर के किसी दूसरे प्रदाह को दूर करने के काम से लिया जाता है। यह ज्वर, अतिसार और पित्तज उदरशूल में भी लाभदायक होता है।

——:o:——

बिंजाई

नाम—

मलाया—बिंजाई। लेटिन—Mangifera Caesia (मेंगिफेरा केसिया)।

वर्णन—

यह एक आम की जाति के वर्ग का मध्यम कद का वृक्ष होता है। इसकी ऊँचाई १८ मीटर तक होती है। यह वृक्ष मलाया प्रायः द्वीप में विशेष रूप से पैदा होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसका रस त्वचा के ऊपर लगाने से तीव्र प्रदाह पैदा करता है और सूजन पैदा कर देता है। इसकी जड़ का निर्यास रेंगास (Rengas) नामक प्राणी के विष को नष्ट करने के लिये दिया जाता है।

——:o:——

बिशोनी

नाम—

संस्कृत—कंथालू, कंथापुखा, कंथापुंखिका। राजपूताना— बिशोनी। लेटिन—Tephrosia Petrosa (टेफ्रोसिया पेट्रोसा) T. Spinosa (टेफ्रोसिया स्पिनोसा)।

वर्णन—

यह सरपंखे के जाति की एक छोटी वनस्पति होती है। यह राजपूताना, जोधपुर और जैसलमेर में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसका पौधा गरम, तीक्ष्ण स्वाद वाला कृमिनाशक, और पीड़ा दूर करने वाला होता है। इसमें सरपंखे के समान ही सब तत्व रहते हैं। मगर यह उससे कुछ कमजोर होता है।

इसके पत्तों को पानी में उबालकर खाने से उपदश की बीमारी में लाभ होता है।

——:o:——

बिरमोव

नाम—

मराठी—बिरमोव। लेटिन—Flemingia Tuberosa (फ्लेमिंगिय ट्युबरोस)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति का क्षुप होता है जो बरसात में कोकण के अन्दर बहुत पैदा होता है। इसके पत्ते तीन २ के गुच्छों में लगते हैं। इसके फूल किरमची रंग के होते हैं। इसकी हर एक फली में एक गोल और काला बीज रहता है। इसकी जड़ में एक कंद रहता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसका कंद मीठा और संकोचक होता है। यह रक्तातिसार, और श्वेत प्रदर में द्राक्षासव के साथ देने से लाभ पहुंचाता है।

इसके तरुण पत्ते जहरीले होते हैं इसको पीसकर मस्तक शूल में ललाट पर लेप करते हैं। इसके फूलों से बहार के समय में मधु मक्खियां जो शहद इकट्ठा करती हैं वह सिक्किम में जहरीला माना जाता है।

——:o:——

बिना

नाम—

संस्कृत तुवरक, तुवरी, सागरोद्भूत। काठियावाड़—पेरिया। हिन्दी—बिना। बंगाल—बानी, बिना। बम्बई - तिवर। कच्छ—तवर। सिंध—तिवर। तामील—कंडल। तेलगू—इखित। अरबी—स्कोरा। इङ्गलिश—White mangrove। लेटिन—Aveceunia officinalis (एवीसिनिया आफिसिनेलिस)।

वर्णन—

इस वनस्पति के वृक्ष काठियावाड़ में समुद्र के किनारे पर बहुत पैदा होते हैं। इसके पत्ते आमने सामने लगते हैं। ये अखण्ड, लम्ब गोल और हमेशा हरे रहने वाले होते हैं। इसके फूल पीले रंग के होते हैं और शाखाओं के मुँह पर लगते हैं। इसके फल ऐक इञ्च भर लम्बे और चपटे होते हैं। इसकी छाल और बीज औषधि प्रयोग में काम में आते हैं। अकाल के दिनों में काठियावाड़ के अन्दर गरीब लोग इस वनस्पति को समुद्र के किनारे से काट लाते हैं और ढोरों के घास के लिये इसको बेचते हैं। अकाल के दिनों में यह ढोरों के लिये बहुत उपयोगी वस्तु रहती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति की जड़ कामोद्दीपक होती है। इसके कच्चे बीजों का पुल्टिस—व्रण और फोड़ों को पकाने के लिये बांधा जाता है। इसकी छाल संकोचक होती है। मद्रास में यह वनस्पति चेचक के अन्दर

उपयोग में ली जाती है।

सुश्रुत के मतानुसार इसके फल तूरे, मीठे, हलके, उष्ण, तीखे, पकाने वाले और कृमिज्वर, कब्जियत, प्रमेह, उदावर्त, कोढ़, गुल्म, उदर रोग और अर्श को नष्ट करने वाले होते हैं।

इसके बीजों का तेल गरम, मधुर, तूरा तथा पचने में कड़वा होता है। यह वमन और विरेचन के द्वारा शरीर के दोषों को हर लेता है। और वात, कफ, कोढ़, चर्बी और कृमियों को नष्ट करता है।

बिना और इन्फ्ल्यूएंजा—सन १६१६ के फरवरी मास के वैद्य कल्पतरु में इस वनस्पति की इन्फ्ल्यूएन्जा पर होने वाले प्रभाव के सम्बंध में एक लेख निकला था उसका सारांश इस प्रकार है।

मोरबी जिले के एक छोटे ग्राम में कुलमी जाति की एक स्त्री को भयंकर इन्फ्ल्यूएंजा का आक्रमण हुआ। उसकी श्वास नली में सूजन हो गया था। छाती में कफ भर गया था। श्वास रुक २ कर चलने लग था और कर्णनली (स्टेस्थसकोप) के द्वारा देखने पर उसके फेफड़ों में श्वासावरोध का आवाज बहुत खराब सुनाई दिया जिससे यह मालूम हुआ कि उसके फेफड़े भी कफ से भरे हुए हैं। देशी उपचार की बतौर उसको कफ निस्सारण के लिये अडुसे का क्वाथ, अलसी के पुलटिस का सेक, भारंग्यादि क्वाथ इत्यादि प्रयोग किये गये और बुखार के लिये उसको महासुदर्शन क्वाथ दिया गया। मगर इन सब प्रयोगों से कोई लाभ नहीं हुआ और रोगी की स्थिति खराब होती गई। इतने में अकाल का टाइम होने से बैलों के घास के लिये एक आदमी चेरिवा के पौधे (बिना) गाड़ी में भरकर ले आया। अचानक इस वनस्पति का १ पत्ता मैंने चबाया और उसमें मुझे कुछ क्षार का अंश मालूम हुआ तब मैंने उसी समय वनस्पति शास्त्र नामक ग्रंथ देखा तो इसमें इस वनस्पति में ज्वर और कफ नाशक गुण बतलाये गये थे। तब मैंने इस वनस्पति के पत्तों को १० तोले की मात्रा में लेकर थोड़े से कूटकर ६ माशा निमक डालकर उनका काढा बनाया और उसमें १ तोला शहद डाल कर रोगी को पिलाया। आधे घंटे में पीले, दुर्गंधित और चिकने कफ के गुच्छे खांसी के साथ निकलने लगे। और एक पहर भर में करीब सेर सवासेर कफ निकल गया तब मैंने सब औषधियों को छोड़ कर इसी वनस्पति के पत्तों का काढ़ा दूसरी बार दिया। जिसका परिणाम यह हुआ कि उसका ज्वर जो १०४ डिग्री की स्थिति में था उतर गया और वह स्त्री अच्छी हो गई। इसी प्रकार एक सिंधी को भी जिसको भयकर इन्फ्ल्यूएन्जा था और छाती में कफ बोलता था उसको भी इसी के पत्तों का काढ़ा दिया गया जिससे कफ बाहर निकल कर उसको भी आराम हो गया।

इन दो केसों के पश्चात और भी कई केसों पर मैंने इसको आजमाया और संतोषजनक परिणाम पाया।

इससे मालूम होता है कि इन्फ्ल्यूएन्जा पर यह वनस्पति बहुत अच्छा काम करती है।

—x—

बिंदा

नाम—

हिन्दी—बिंदा, बिंदु, पांसरा। बंबई—वह्मनी, भामिनी, देसाई, देसारी। कुमाऊ—बिदा, बिद्व। देहरादून—बिंदा। पंजाब—बरमेरा, बसूती, बरियाली, दशेनी, फिसवेकर, संद्र शकरदाना, सुवाली। सथाल—बरसापाकोर, मेंगा। लेटिन—Colebrookea Oppositifolia, Co Ternifolia (कोलेब्रूकिया आपोस्फिटी फोलिया।

वर्णन—

यह एक बहुशाखी छोटी जाति की झाड़ी होती है। इसके पत्ते हलके हरे रंग के होते हैं और तीन २ के गुच्छों में लगते हैं। इसके फूल भी गुच्छों में लगते हैं। यह वनस्पति कम ज्यादा परिमाण में सारे भारतवर्ष में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

सथाल लोग इसकी जड़ को मृगी रोग को दूर करने के उपयोग में लेते हैं।

स्टेवर्ट के मतानुसार इसके पत्ते जखम और रगड़ पर लेप किये जाते हैं।

गॅबल के मतानुसार इसकी डालियों और पत्तों को पहाड़ी लोग उनकी टांगों पर होने वाले खराब फोड़ों पर लगाने के काम में लेते हैं।

—:०:—

बिही

नाम—

सस्कृत—अमृत फल, सिविंतिका। हिन्दी—बिही, बिलू, काश्मीर की नासपाती। काश्मीर—नमसुत, बटसुंतु। उर्दू—बिही। अरबी—बिहीतुर्श, सफरजल। तेलगू—सीमादानिम्मा। तामील—सिमाई मदालाई। इंग्लिश— Quince Tree। लेटिन—Cydonia Vulgaris (सायडोनिया व्हलगेरिस)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति का झाड़ीनुमा वृक्ष होता है, इसके वृक्ष काश्मीर, हिमालय, नेपाल, ईरान और अफगानिस्तान में होते हैं। इस वृक्ष के पत्ते सादे और ५ से लेकर १० सेंटिमीटर तक लबे और ३ ८ से ७ ५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। ये गहरे हरे रग के होते हैं। इस की छाल गहरे भूरे रग की होती है। इसके फूल सफेद या कुछ गुलाबीपन लिये हुए होते हैं। सेव या नासपति के वर्ग की एक वनस्पति है।

इसके फल अमरूद के आकार के और पकने पर सुनहरी पीले रग के और मनोहर गध से सुगधित होते हैं। इनका स्वाद कुछ खट्टा होता है। इस जाति के फलों में बहुत से बीज रहते हैं। इन बीजों को

बिहीदाना अथवा मुगलाई बेदाना कहते हैं। ये बीज लबगोल, चपटे और कुछ ललाई लिये हुए भूरे रंग के होते हैं। ये बीज ही औषधि प्रयोग के काम में आते हैं। ये बीज काश्मीर, अफगानिस्तान और ईरान से यहाँ पर आते हैं,

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से इसके बीज मीठे, खट्टे, पौष्टिक, अतिसार और रक्तातिसार नाशक, कामोद्दीपक और वात तथा कफ को नष्ट करने वाले होते हैं।

यूनानी मत—यूनानी मत से इसका फल खट्टा, मीठा, पौष्टिक, संकोचक, मूत्रल, घाव को अच्छा करने वाला, कफ निस्सारक, और ज्वर नाशक होता है। यह मस्तिष्क और यकृत को शक्ति देता है। भूख को बढाता है, प्यास को दूर करता है। व्रणों में लाभ पहुंचाता है और दमें में मुफीद है। इसके बीज स्वाद रहित, घाव को भरने वाले होते हैं। ये गले के छालें, मुखशोथ अग्नि से जलना इत्यादि में लाभदायक हैं। खासी, ज्वर, शरीर की अतरदाह और आंत्रिक उदरशूल को दूर करते हैं। तथा व्रणों को भरते हैं।

इसके मीठे और कुछ खट्टे फल अरब और ईरान के लोग फलाहार की तरह आमतौर से खाते हैं और वहाँ ये मस्तिष्क और हृदय को शक्ति देने वाले माने जाते हैं। इसके पत्ते, कलियाँ, और छाल अपने संकोचक तत्वों की वजह से अरब लोगों के यहाँ घरेलू औषधि की तरह काम में लिये जाते हैं। भारत वर्ष में इसके बीज शीतल, कुछ सकोचक और तर माने जाते हैं। ये यहाँ के देशी चिकित्सकों के प्रेक्टिस में एक बहुत लोकप्रिय औषधि की तरह काम में लिये जाते हैं। इनका लुआब खांसी और आंतों की शिकायतों में एक शांतिदायक पदार्थ की तरह काम में लिया जाता है। बाह्य प्रयोग में यह छाले, फफोले और अग्नि से जले हुए तथा भाफ से झुलसे हुए स्थान पर लगाने के काम में लिया जाता है। इसके बीज अतिसार, रक्तातिसार, ज्वर और गले के छालों में एक शांतिदायक वस्तु की तरह दिये जाते हैं। इसके सूखे हुए फल ज्वर नाशक माने जाते हैं।

बिहीदानों का लुआब जले हुये चमडे पर तथा चिडचिड़ाये हुये चमडे पर शांति दायक वस्तु की तरह लगाया जाता है।

यूरोप के अन्दर पेट और आंतों की श्लेष्मिक झिल्लियों की पीडा को दूर करने के लिये बिहीदानों का उपयोग किया जाता है। ये गले की खुश्की से होने वाली खांसी और आमाशय की खराबी से होने वाले जुकाम में भी उपयोग में लिये जाते हैं। सुजाक, अतिसार और रक्तातिसार में भी इनका उपयोग होता है। इनका लोशन बना कर उससे नेत्र रोगों में आंखें धोई जाती हैं।

रासायनिक विश्लेषण —

इसके बीजों की गुठलियों में कड़वी बादाम के समान गंध और स्वाद होता है और इनमें १५

प्रतिशत तेल निकलता है। इसके बीजों के छिलकों को पानी में भिगोने से एक लुआब तैयार होता है। इस लुआब में कई प्रकार के चूने के अंश रहते हैं। इसके बीजों को जलाने से ३॥ प्रतिशत राख पड़ती है। उस राख में २७ प्रतिशत जोखार, ३ प्रतिशत सज्जी खार, १२ प्रतिशत मंगनेशिया, ७३ प्रतिशत चूना, २३ प्रतिशत गधखार, १ प्रतिशत लोह और २३ प्रतिशत नमक रहता है।

बिहीदानों की फांट बना कर सुजाक में देने से पेशाब की जलन कम होकर उसकी तादाद बढ़ती है। सूखी खांसी में इसकी फांट को पिलाने से और उससे कुल्ले करने से और उसको पेट में देने से लाभ होता है। पुराने अतिसार में इन बीजों का काढ़ा बना कर देते हैं। आंतों की श्लेष्म त्वचा पर इसबगोल के लुआब की तरह इसके बीजों का लुआब भी लिपट जाता है। जिसके परिणाम स्वरूप आँतों पर अगर कोई व्रण हो तो उसको तकलीफ नहीं होती और वह जल्द भर जाता है। खौलते हुए चालीस तोला पानी में एक तोला बिहीदाना डालने से गाढ़ा लेप तैयार हो जाता है जिसका लेप अग्नि से जले हुये स्थान पर या जखम पर करने से शांति मिलती है।

बिच्छू

नाम—

हिन्दी—बिच्छू। बंगाल—बाघनोर्की। बम्बई—विंछू। मराठी—विंछू। पंजाब—बिच्छू। इंगलिश—Devil's Claw। लेटिन—Martynia Annua (मार्टीनिया एन्नोआ) M. Diandra (मा डियंड्रा)।

वर्णन—

यह एक बहुत सुन्दर, मजबूत और छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके पत्ते बड़े २ होते हैं। इसके फूल गुलाबी और गहरे बैंगनी और खराब गंध वाले होते हैं। इसका फल काला २ आंकड़ियों वाला, बिच्छू के सदृश होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—इसका फल तीक्ष्ण स्वाद वाला, और सूजन के अन्दर उपयोगी होता है। इसके पत्ते मृगी रोग में दिये जाते हैं। क्षय जनित कंठ माला की ग्रंथियों पर इनका लेप करने से लाभ होता है। इन पत्तों का रस अथवा निर्यास गले के छालों को दूर करने के लिये कुल्ले करने के काम में लिया जाता है।

बिच्छू के डंक पर इसके फल को पानी में पीस कर लेप करने से शांति मिलती है।

यद्यपि इस वनस्पति के सम्बन्ध में प्राचीन ग्रंथों के अन्दर कोई खास बात नहीं पाई जाती है। फिर भी कुछ ऐसे साधु संत या वैद्य जिन्होंने इस औषधि का अनुभव किया है उनका कथन है कि यह वनस्पति डिजिटेलिस नामक विदेशी दवा की जाति की है और अगर इसको थोड़ी मात्रा में दी जाय तो यह हृदय

वर्णन—

यह एक वर्ष जीवी वनस्पति होती है जो बलूचिस्तान, फारस और अरब में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

बिलोचिस्तान में इस वनस्पति के पत्ते बहुत शीतल और शान्तिदायक माने जाते हैं वहां के लोग प्यास बुझाने के लिये इस वनस्पति के पत्तों को चबाते हैं।

——:०:——

बीकला (बिकंकत)

नाम—

संस्कृत—बहुफला, ब्रम्हपादप, दतकष्ट, गोपाघटा, ग्रथला, हिमाका, कटकारि, कटपत्र, किंकरी मधुपर्णी, मृदुफल, पदारोहिणा, पिंडारा, पृथुबीजा, रावण, श्रुवद्रुमा, विककत व्याघ्रपदा, इत्यादि। हिन्दी—बेकल, किंगनी, टोटर सेइनाड़, कटाइ, किंकणी। गुजराती—बीकलो, बिकारो। बम्बई—हरमेवा। बंगाली - बेचिगाछ। पंजाब—दजकर, खेराई, किंगारो, मेरोला, टालकर। पोरबन्दर—बिकारो। मराठी—भारती, भारुली, वेफल, वेकर। अजमेर—काकरा। तामील—कटजी। तेलगू—दतोसी, दती। मध्यप्रान्त बेकल, गजाचीनो। लेटिन—Gymno Sporia Montana, G. Spinosa (जिम्नो स्पोरिया मोंटेना)।

वर्णन—

बीकले के वृक्ष ५ से लेकर १५ फीट तक ऊँचे होते हैं। इसमें पीलापन लिये हुए हरे और बैंगनी रंग की अनेकों शाखाएँ ऊँची, नीची, टेढी, मेढ़ी फैल जाती हैं। इन शाखाओं पर लम्बे और तीक्ष्ण नोक वाले कांटे रहते हैं। इसके पत्ते हलके हरे रंग के ऊपर की तरफ से चौडे और डण्ठल की तरफ से सकडे होते हैं। ये कंगूरेदार और करीब १॥ से लेकर २॥ इञ्च तक लम्बे और १ से लेकर १॥ इञ्च तक चौडे होते हैं। जाडे के दिनो में इन पर कुछ सफेद रंग के छोटे २ फूल आते हैं। इसके फल शुरू में कुछ पीलापन लिये हुए हरे, फिर बैंगनी रङ्ग के और पकने पर काले हो जाते हैं। इन फलों का आकार काली मिरची के दानों के समान होता है और जब ये पकते हैं तब ये बीच में से फट जाते हैं और इनमें से दो २ तीन २ बीज निकल जाते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत— आयुर्वेदिक मत से वेकल खट्टा, मीठा, पाक में मधुर, लघु दीपन, कामलारोग को नष्ट करने वाला, खून को साफ करने वाला, पाचक और पित्त नाशक होता है।

बेकल मीठा, खट्टा, कसेला, शीतल तथा कफ, पित्त, रुधिर विकार और कामला रोग को दूर करता है। दाह शोष, व्रण और बवासीर को भी यह दूर करता है। इसका फल मीठा और सर्व दोषनाशक

और कफवात अच्छे हो जाते हैं इसको पास में रखने से खराब स्वप्न नहीं दिखाई देते। इसको आँख में लगाने से आंख की खुजली मिट जाती है। स्त्रियों के स्तनों पर इसको लगाने से उनका दूध बढ़ता है। (ख० अ०)

——:o·——

बिजीमुंडू

नाम—

मलयालम—बिजीमुङ्डू, मुङ्डू। लेटिन—Garcinia Dulcis (गार्सिनिया डलसिस)

वर्णन—

यह एक मध्यम कद का वृक्ष होता है। इसके पत्ते गहरे हरे रङ्ग के होते हैं। इसके फूल कुछ हरापन लिये हुए पीले रङ्ग के होते हैं। इसका फल ६ ३ से लेकर ७ ५ सेंटिमीटर तक लम्बा होता है। यह वनस्पति मलाया प्रायःद्वीप में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके तेल युक्त बीज मलाया प्रायः द्वीप में प्राचीन अतिसार और रक्तातिसार नाशक औषधि की तरह काम में लिये जाते हैं।

——:o:——

बिर्मकंवल

नाम—

पञ्जाब—बिर्मकवल, कवल। लेटिन—Saussurea Obvallata (सुसारिया ओबवेलेटा)

वर्णन—

यह वनस्पति हिमालय में काश्मीर से सिकिम तक १० हजार फीट से १५ हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी जड़ कटी हुई और कुचली हुई जगह पर लगाने के काम में आती है।

——:o:——

बीबीबूंटो

नाम—

बिलूचिस्तान—बीबी, बीबीबूंटो, बुतग; केमार, सागीदोंतन। लेटिन—Pycnccycla

गुण दोष और प्रभाव—

स्टेवर्ट के मतानुसार इसका फल रजो रोध और कॉलिक उदर शूल को नष्ट करने के लिये दिया जाता है।

—+—

बिंदी मुट्ठी

नाम—
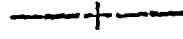
संथाल—बिंदी मुट्ठी। लेटिन—Fimbristylis Junciformis (फिंब्रीस्टेलिस जुंसीफार्मिस)।

वर्णन—

यह वनस्पति प्रायः सारे भारतवर्ष और सीलोन में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

कैंप बेल के मतानुसार इसकी जड़ रक्तातिसार के अन्दर काम में ली जाती है।

—+—
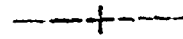
बिष्णू कंद

नाम—

संस्कृत—विष्णू कंद, वृहद् कंद, जलवासा, बहुसम्पुट, सुपुष्ट, दीर्घवृत्त, इत्यादि,

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—राजनिघंटु के मतानुसार विष्णू कंद मधुर, शीतल, पित्तनाशक, दाह नाशक, रुचिकारक और तृप्ति कारक होता है।

—:०:—

बिल्लौर

नाम—
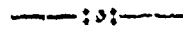
हिन्दी, यूनानी—बिल्लौर।

वर्णन—

यह एक खनिज द्रव्य होता है। यह जमरूद से नरम और कांच से सख्त होता है। जितना ही मुलायम होता है उतना ही खराब होता है। हकीम अरस्तू के मतानुसार बिल्लौर कांच ही की एक जाति है। यह चमकदार और सफेद रंग का होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानी मत से यह सर्द और खुश्क होता है। इसको घिसकर आंखों में आंजने से आंख का जाला कट जाता है। बच्चों के गले में लटकाने से उनकी नींद में चोंक पड़ने

की गति को बढ़ाती है परन्तु अधिक मात्रा में देने पर यह हृदय की गति को मद करती है। इसके अतिरिक्त यह जीर्ण ज्वर को मिटाती है। कफ को पतला करके बाहर निकालती है। निमोनिया में इसको देने से फेफड़े की सूजन कम होती है और कफ छूट कर निकल जाता है। मूत्र नाली के रोगों में इसके देने से मूत्रल असर होकर रोग दूर हो जाता है। सर्वांगशोथ में इसका वाह्य प्रयोग और अ तः प्रयोग दोनों होते हैं।

इन सब कार्यों के लिये इसके पत्ते जब आसोज और कार्तिक के महिने में पीले पड़ जाते हैं। तब इकट्ठे करके छाया में सुखा लेना चाहिये और उनका चूर्ण करके रख लेना चाहिये। इस चूर्ण में से १ रत्ती से २ रत्ती तक चूर्ण शहद के साथ मिलाकर ६ घटे के अन्तर से देना चाहिये।

बनावटें—

सोमल और हरताल की भस्म—बिच्छू के पौधों को जला कर उनकी राख कर लेना चाहिये। इस राख को एक हांडी में आधे भाग तक भर देना चाहिये। फिर बिच्छू के १० पत्तों को लेकर उनको पीस कर लुग्दी बना कर उस लुग्दी में २ तोला शुद्ध सोमल अथवा २ तोला शुद्ध हरताल की डली रख देना चाहिये। उस लुग्दी को उस हाँडी में रख कर बाकी की राख से उस हांडी को गले तक दबा २ कर भर देना चाहिये। फिर उस हांडी को चूल्हे पर चढा कर ५ घटे की मद, ५ घटे की मध्यम और ५ घटे की तीव्र आंच देना चाहिये जिससे उत्तम भस्म तैयार हो जाती है।

इस भस्म को एक चावल की मात्रा में भोजन के पश्चात् नागर बेल के पान में रख कर खाने से दमा खाँसी, कुष्ट इत्यादि रोगों में बहुत लाभ होता है। लेकिन यह प्रयोग लगातार १० दिन से अधिक एक साथ जारी न रखना चाहिये और पथ्य में सिर्फ गेहू, चावल, घी, शक्कर, दूध इत्यादि सौम्य वस्तुऐं ही सेवन करना चाहिये। (जगलनी जड़ी बूंटी)

बिंगली

नाम—

पंजाब—बिंगली, बिगनो, बटकर, ब्रिंगू, ब्रिमला, ब्रिमलू, चोकू, काईं, खड़ग, रोखू। देहरादून—खाराकचरा। काश्मीर ब्रिमिज। कुमाऊँ—खारक। सिन्ध—ताघा। इङ्गलिश—Europen Nettle Tree। लेटिन—Celtis Australis (सेल्टिस आस्ट्रेलिस)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। इसकी ऊँचाई ३० मीटर तक होती है। इस की छाल भूरी और मुलायम होती है। इसके पत्ते ७ ५ से लेकर १५ सेंटिमीटर तक लम्बे और ३ ८ से ७ ५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल छोटे और कुछ हरापन लिये हुए होते हैं। यह वनस्पति हिमालय नेपाल तक ४ हजार फीट से ८ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

सुश्रुत के मतानुसार इसकी जड़, डाली, छाल और पत्तों से तैयार किया हुआ क्षार गदा नामक प्रयोग साँप के विष को दूर करता है। इसकी छाल को सरसों के तेल में मिला कर लगाने से सिर की जुएँ और लीकें मर जाती हैं।

इसके पत्तों को पानी के साथ औटा कर उस पानी को छान कर उसमें शक्कर डालकर पीने से खून की खराबी, बवासीर, पांडु कामला और सूजन दूर होती हैं। बिगड़ा हुआ पित्त सुधर जाता है। जठराग्नि प्रदीप्त होती है। जिससे भूक खूब लगती है और खाया हुआ अन्न अच्छी तरह से पचता है।

इसके पत्तों का रस निकाल कर आँख में आँजने से आँख का फूला जल्दी नष्ट होजाता है।

इसके पत्तों को भाफ कर रतुआ नामक रक्त रोग के ऊपर बांधने से बहुत लाभ होता है।

——:o:——

बुब्बुर बूंटी

नाम—

बंगाल—बब्बुर बूँटी। अंग्रेजी—Burma Beon। लेटिन—Phaseolus Lunatus (फेसिओलस लूनेटस)।

वर्णन—

यह एक ऊँची जाति का दो २ साल में होने वाला पौधा होता है। इसके ऊपर अनेकों छोटे २ हरापन लिये हुए पीले रंग के फूल आते हैं। इसके बीज सफेद होते हैं। इस वनस्पति का मूल उत्पत्ति स्थान ब्राझील है और भारतवर्ष में इसकी खेती की जाती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति संकोचक होती है। ज्वर के अन्दर इसके बीजों की दाल बना कर पथ्य के बतौर दी जाती है। इसकी एक जाति में कभी २ विषैले तत्व भी पाये जाते हैं।

इसके बीजों का रासायनिक विश्लेषण करने पर इनमें हाइड्रोसायनिक एसिड, एक विषैला ग्लुकोसाइड और फेसिओल्यूनेटिन नामक पदार्थ पाये जाते हैं (Phaseolunatin)।

——:——

बुन्दुक

नाम—

अरबी—बुन्दुक। तामील—कचुरम। तेलंगू—गच्च्य। इंग्लिश—Bezoar Nut। लेटिन—Caesalpinia Jayabo (कैसलपिनिया जयाबो) C Bonduc।

वर्णन—

यह कट करंज या तनगच के वर्ग की एक वनस्पति होती है जो सीलोन, मलाया प्रायः द्वीप और

वर्णन—
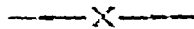
यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। इसकी नवीन डालियों पर रेशमी रूयें रहते हैं। इसके पत्ते नवीन हालत में रेशमी रहते हैं। इसके फूल पीले रंग के होते हैं। उत्तरी पश्चिमी हिमालय में इस वनस्पति की खेती की जाती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी छाल पौष्टिक, संकोचक, और ज्वर नाशक होती है। इसका काढा ज्वर के अन्दर होने वाले जोड़ों के दर्द में दिया जाता है। अतिसार रक्तातिसार में भी इसका उपयोग किया जाता है।

बुराचूचा

नाम—

बंगाल—बुराचूचा। लेटिन—Cyperus Iria (साइप्रस इरिया)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है जो अक्सर चांवल के खेतों में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसका पौधा पौष्टिक, उत्तेजक, अग्नि वर्धक और संकोचक होता है।

—:o:—

बुकी

नाम—

पंजाब—बुकी, चंदकेई, माटी, नारी, स्किनग, त्रोटका। लेटिन—Equisetum Debile (इक्वीसेटम डेबाइल)।

गुण दोष और प्रभाव—

इसका पौधा एक शीतल औषधि की तरह उपयोग में लिया जाता है और फेलम के आसपास के प्रान्तों में यह सुजाक के अन्दर दिया जाता है।

—:o:—

बुइ छोटी

नाम—

पंजाब—बुई, बुइ छोटी, कौरेरो। लेटिन—Kochia Indica (कोचिया इंडिका)।

वर्णन—

यह एक ऊंची जाति की सीधी वर्ष जीवी वनस्पति होती है। इसकी डालियां और शाखायें सफेद

रुएँदार होती हैं। यह वनस्पति उत्तरी पश्चिमी भारत और सिंध और दक्षिण में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति का पौधा हृदय को उत्तेजित करने वाली वस्तु होती है और यह ऐसे रोगियों को जिनका हृदय दुर्बल और अव्यवस्थित रहता है। उनके साथ ज्वर भी रहता है तब इस वनस्पति का उपयोग किया जाता है।

बुलु

नाम—

नेपाल—बुलु, सेनुचिमाल। लेटिन—Rhododendron Cinnabarinum (रोडोडेंडोन सिनेबेरियम)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति की झाड़ी होती है। इसकी छाल पतली और ललाई लिये हुये भूरे रंग की होती है इसके फूल केशरिया रंग के अथवा गहरे लाल रंग के होते हैं। यह वनस्पति सिक्किम और भूटान में १० हजार फीट से लेकर १२ हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके पत्ते पशुओं और बकरों के लिये जहरीले होते हैं। इसका तम्बाखू की तरह किया हुआ धूम्रपान, आंखों की सूजन और चेहरे की सूजन पैदा करता है।

बुंदार

नाम—

बम्बई—बुंदार। लेटिन—Eupatorium Cannabinum (यूपेटोरियम केनेबिनम)।

वर्णन—

यह वृक्ष हिमालय के मध्य भाग में समशीतोष्ण कटिबन्ध में बहुत पैदा होते हैं। इसके पत्ते कुछ रुएँदार हाथ के पंजे की आकृति के, कटी हुई किनारों वाले और शल्याकृति होते हैं इसके फूल झूमकों में आते हैं और इन फूलों में उग्र गंध रहती है इस वनस्पति का सब ही भाग कड़वा रहता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यह वनस्पति साधारण मात्रा में मूत्रल और पसीना लाने वाली होती है। बड़ी मात्रा में यह वामक और भेदक होती है। कामला, रक्त पित्त, दुष्ट व्रण और फोड़ों की सूजन में इसकी फांट बनाकर पिलाते हैं और इसी फांट से व्रण को धोते हैं। इसकी फांट एक सेर भर खौलते हुए पानी में एक औंस

इसके पत्ते डालकर आधे घंटे तक उस बरतन का मुँह बन्द करके फिर उसको छान करके काम में लिया जाता है। इसको दो २ औंस की मात्रा में दो २ घंटे के अन्तर से दिया जाता है।

——:o:——

बूयोनून

नाम—

यूनानी—बूयोनून।

वर्णन—

इसका पौधा तीन बालिश्त के करीब ऊँचा होता है इसके पत्ते अजमोद के पत्तों की तरह, फूल सोया के फूल की तरह और बीज अजवायन खुरासानी की तरह होते हैं। इसकी डालियों और पत्तों से सत निकाला जाता है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती हैं। यह वायु को नष्ट करती है। खुश्की बढ़ाती है। शरीर में सचित दोषों को निकालती है। मगर यह बहुत तेज होती है। इसलिये जहां तक बने इसका प्रयोग कम करना चाहिये। शहद के पानी के साथ इसका प्रयोग करने से इसकी तेजी कम हो जाती है। गुर्दे, मसाने और तिल्ली के दर्द में यह बहुत लाभदायक है। इसके सेवन से पेशाब की रुकावट और बूँद २ पेशाब आना बन्द हो जाता है। इसके सत को योनि में रखने से गर्भ मे कामरा हुआ बच्चा निकल जाता है। इसको शराब और नमक के साथ पीसकर गले में लेप करने से गले की सूजन उतर जाती है।

मुजिर—यह सिर दर्द और मतली पैदा करती है।

दर्पनाशक—उन्नाब और ताजा दूध।

प्रतिनिधि—कुदर।

मात्रा—पत्तों की ४ नग तक और बीजों की १॥ माशे तक (ख० अ०)

——×——

बुरांस

नाम—

पंजाब—बुरांस, अर्दवाल, आरू, ब्रास, ब्रोआ चचिओन, च्यू। गढवाल—बुरांस। अलमोड़ा—ब्रोस। नेपाल—भोरांस, घोनास। पश्चिमी हिमालय—बुरांस, च्यू। लेटिन—Rhododendron Arboreum (रोहोडेन्ड्रोन आर्बोरियम)।
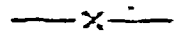
बूजिदान

नाम—

यूनानी—बूजिदान ।

वर्णन—

यह एक जाति की जड़ होती है । इसकी लंबाई १ ऊंगली के बराबर होती है । अन्दर से ठोस और सख्त होती है । इस पर बहुत सी लकीरें पड़ी हुई रहती हैं । बहुत से लोग इसे शतावरी समझते हैं । मगर यह शतावरी से अलग होती है ।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानीमत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है । इसकी क्रिया सुरंजान के समान होती है । यह काम शक्ति को उत्तेजित करती है । जलोदर में लाभ पहुंचाती है । आमाशय से कीड़ों को निकाल देती है । बदन को मोटा करती है । जोडो के दर्द में लाभ पहुंचाती है । बवासीर में लाभ दायक है । कफ और सरदी की बीमारियों को दूर करती है । स्त्रियों के लिये विशेष रूप से लाभदायक है ।

मात्रा—इसके चूर्ण की मात्रा ६ माशे से १ तोले तक है । (ख० अ०)

——:o:——

बूश

नाम—

यूनानी—बूश ।

वर्णन—

यह एक जाति का घास होता है । इसके पत्ते, मेहदी के पत्तों की तरह, बीज भग के बीजों की तरह मगर उनसे कुछ छोटे और पीला पन लिये हुए होते हैं ।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में सर्द और तर है कुछ लोगों के मत से यह सर्द और खुश्क होती है । इसको गुलाब और सिरके के साथ लेप करने से गरमी का सिर दर्द आराम होता है । गर्मी से होने वाले फोडे फुन्सियों पर इसका लेप करने से बहुत जल्दी आराम होता है । मकोय के पत्तों के रस में पीस कर इसको आंख पर लेप करने से गरमी से दुखती हुई आँख आराम हो जाती है । (ख० अ०)

——:(o):——

बेकरियो

नाम—

गुजराती—बेकरियो। शोलापुर—बरवेद। लेटिन—Indigofera Glandulosa (इन्डिगोफेरा ग्लेंड्यूलोसा)

वर्णन—

यह नील की जाति का एक पौधा होता है। इसके पत्ते नील या सर पखे के पत्तों की तरह होते हैं इन पत्तों में सुन्दर बारीक काले रग के छींटे होते हैं। इसके फूलों की मनोहर गुच्छियाँ लाल रग की होती हैं। इसकी फलियां चौधारी होती हैं। इसके बीज लब गोल और काले तथा भूरे रग के होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

गुजरात के अन्दर इसके बीज बेकरियो के नाम से मशहूर है। यह एक उत्तम पौष्टिक और वाजीकरण औषधि की तरह प्रसिद्ध है। जाड़े के दिनों में इनका पाक बनाकर सेवन करने का गुजरात में बहुत रिवाज है।

बेलांतर

नाम—

संस्कृत—पल्लतरु, दीर्घमूल, बीरद्रु, बहुवारक, क्षुधाकुशल-सशक, बीरवृक्ष। हिन्दी—बरवेल, बिलवान्तर, बेलतर। मराठी—बेल्लतूर। तेलगू—वेणुवुरुचेट्ट। तामील—विढ़ात्तर।

वर्णन—

बेलतर के वृक्ष मारवाड़ देश में तथा नर्मदा नदी और दूसरी नदियों के तट पर होते हैं। इसपर कांटे होते हैं। इसके पत्ते खेजडे के समान और छोटे २ होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—निघटु रत्नाकर के मतानुसार बेलंतर चरपरा, गरम, अग्नि दीपक, रस और पाक में कडुआ, मलरोधक, वातरोग नाशक तथा मूत्र कृच्छ्र, पथरी, संधिशूल, योनिरोग और मूत्राघात को दूर करता है।

—०—०—

बेल

नाम—

संस्कृत—बिल्व, श्रीफल, पूतिवात, शैलपत्र, लक्ष्मीपुल, गंधपत्र, शिवेष्ट, इत्यादि। हिन्दी—बेल, बिली, श्रीफल। बंगाल—बेल, बिल्व। बम्बई—बेल, बिला। मराठी—बेल। गुजराती—बिली।

तामील—विलूवम। तेलगू—विल्वसु। उर्दू—वेल। अरबी—सफरजले। हिन्दी— शुल। अँग्रेजी—Bael fruit tree। लेटिन—Aegle Marmelos (इगल मारमेलोस)।

वर्णन—

वेल का वृक्ष मध्यम आकार का होता है। इसकी शाखाओं में कांटे होते हैं। पत्ते त्रिदल या तीन २ के गुच्छों में लगते हैं फूल सफेद और सुगंधित होते हैं। इसके फल गोल स्वादिष्ट और सख्त छिलके वाले होते हैं। इसके फल में बहुत से बीज होते हैं और उन बीजों में गोंद होता है। ग्रीष्मऋतु के आरंभ में इसके पुराने पत्ते गिरकर नये आने लगते हैं। भारतवर्ष के प्रत्येक खंड में बेल का वृक्ष पाया जाता है। यह वृक्ष शिवजी को बहुत प्रिय होता है और इसके पत्ते अर्थात् बिल्वपत्र हमेशा शिवजी को चढ़ाने के काम में लिये जाते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत— आयुर्वेदिकमत से वेल मीठा, हृदय को बल देने वाला, गरम, कसैला, रुचिकारक, अग्निदीपक, संकोचक, रुखा, पित्तकारक, कड़वा, चरपरा, भारी पाचक तथा वातातिसार और ज्वर को नष्ट करने वाला होता है।

वेल का कच्चा फल स्निग्ध, भारी, रुचिकारक, जठराग्नि को दीप्त करने वाला, मल रोधक, पाचक, कड़वा, हलका, गरम, कसैला तथा शूल आमवात, संग्रहणी और कफ के अतिसार को दूर करने वाला होता है।

वेल का तरुण फल संकोचक, कसैला, खट्टा, स्निग्ध, चरपरा, तीक्ष्ण, गरम, हलका, दीपन, पाचक हृदय को हितकारी तथा कफ और वात को नष्ट करने वाला होता है।

वेल का पक्का हुआ फल दाह पैदा करने वाला, मधुर, भारी, कसैला, मल रोधक, कड़वा, गरम त्रिदोष कारक, दुस्पच और वात कारक तथा मंदाग्नि को उत्पन्न करने वाला होता है।

वेल की जड़ मधुर तथा त्रिदोष, वमन शूल को नष्ट करने वाली, हलकी तथा मूत्रकृच्छ्र, वायु कफ और पित्त का नाश करने वाली होती है। इसकी जड आर्य चिकित्सा शास्त्र के सुप्रसिद्ध योग दश मूल क्वाथ का एक अंग है।

वेल के पत्ते कफ, वात, आम और शूल को नष्ट करते हैं तथा संकोचक और रोचक होते हैं। वेल के फूल अतिसार तृषा और वमन को नष्ट करते हैं। वेल के बीजों का तेल गरम और वात विनाशक होता है। वेल का सूखा हुआ गूदा, कफ, वात, आम और शूल को नष्ट करता है।

यह ऐक ध्यान में रखने की बात है कि यहां दूसरे सब प्रकार के फल पकी हुई अवस्था में गुणकारी होते हैं वहां वेल कच्चा ही अधिक गुणकारी होता है। पका हुआ वेल अनेक प्रकार के दोषों को उत्पन्न करता है।

वेल की लकड़ी चन्दन के समान पवित्र मानी जाती है। दशमूल के काढ़े में भी यह डाली जाती

है। इसके पत्तों को पीस कर आंख में लगाने से आंख का रोग आराम हो जाता है। इसके पत्तों का अर्क बालकों के लिये दस्तावर और कफ का नाश करने वाला होता है।

बेल की जड़ में शामक धर्म रहता है और यह मज्जा तंतुओं के ऊपर यह अपना शामक धर्म बतलाती है। इससे कुछ नशासा मालुम देता है। इसके हरे फलों का गूदा स्निग्ध, दीपन सकोचक और आंतों को शक्ति देने वाला होता है। इसके पके हुये फलों का गूदा आनुलोमिक होता है। इसके पत्ते कटु पौष्टिक, आनुलोमिक, सूजन को नष्ट करने वाले ज्वर नाशक कफ निस्सारक, व्रण शोधक और व्रण रोपक होते हैं।

डॉक्टर देसाई के मतानुसार बेल की जड़ दशमूल के अन्दर डाली जाती है। वात रोगों में यह लाभ पहुंचाती है। हृदय की धड़कन, उदासीनता, निद्रानाश, उन्माद और माली खोलिया, इत्यादि। मज्जा ततु सम्बन्धी रोगों में इसकी जड़ दी जाती है। विषम ज्वर के अन्दर इसकी जड़ का क्वाथ दिया जाता है। वीर्य पतला होने पर इसकी जड़ की छाल और जीरे को पीस कर घी में मिला कर देते हैं। विषैले कीड़ों के डंक पर इसकी जड का लेप किया जाता है। इसकी जड को चांवलों के माड में उबाल कर उसमें शक्कर मिला कर बच्चों को उल्टी और दस्त बंद करने के लिये देते हैं।

आंतों के विकारों में अथवा मदाग्नि रोगों में जब कि मनुष्य को कभी तो कब्जियत हो जाती है और कभी अधिक दस्त लगने लगते हैं। ऐसी अव्यवस्थित स्थिति में इसके पके हुये फलों का शरबत देने से बहुत फायदा होता है।

इसके कच्चे फलों को रक्तातिसार और जीर्णातिसार में दिया जाता है। जो रोगी पाचन क्रिया के बिगडने से अशक्त हो गया हो, मगर जिसको ज्वर न हो उसको यह वस्तु बहुत लाभ करती है। कच्चे बेल फल, बड़ी सौंप और बच इन तीनों चीजों का क्वाथ प्राचीन आमातिसार में विशेष रूप से लाभदायक होता है। रक्त पित्त के रोगी मनुष्यों को अतिसार होने की हालत में यह औषधि विशेष रूप से लाभदायक होती है इसके ताजे फलों का गूदा कबाबचीनी के साथ दूध में मिला कर देने से प्राचीन सुजाक में लाभ होता है। तिलों के तेल में इसके कच्चे फलों का गूदा ८ दिनों तक रख कर उस तेल को अग्नि-दग्ध स्थान पर लगाने से शांति मिलती है। इसके ताजे पत्तों का स्वरस ज्वर, सूजन, खांसी और नेत्राभिष्यद रोग में लाभदायक होता है। इससे दस्त साफ होकर ज्वर हलका पड़ जाता है। अग्निमांद्य से होने वाले दमे में कफ निकालने के लिये इसके पत्तों का क्वाथ बना कर देते हैं। कफ ज्वर में इसका स्वरस देते हैं जल शोथ और कब्ज पर मिरची के साथ इसका स्वरस दिया जाता है। व्रणों के ऊपर इसके ताजा पत्तों को पीस कर बांधने से बहुत लाभ होता है।

बिल्व पत्र और मधुमेह

मधुमेह के अन्दर बिल्व पत्र बड़े लाभदायक सिद्ध हुये हैं। प्रति दिन सवेरे कोमल बिल्व पत्रों को कूट कर उनका १ तोला रस निकाल कर लगातार कुछ दिनों तक पीते रहने से पेशाब के अन्दर शक्कर

-जाना धीरे २ कम होकर अंत में बिलकुल बद हो जाती है। जिस दिन इस औषधि को शुरु किया जाय उस दिन पेशाब की स्पेसिफिक ग्रेविटी और उस में जाने वाली शक्कर के तादाद की जाँच कर लेना चाहिये और फिर १ महिने के बाद उसके पेशाब की जांच करवाना चाहिये। जब शक्कर की तादाद बिलकुल कम हो जाय तब रोगी को पथ्य के अन्दर धीरे २ छूट देतेजाना चाहिये और जब तक पेशाब में शक्कर जाना बिलकुल बद न हो तब तक बिल पत्र का रस बराबर देते रहना चाहिये।

जंगलनी जड़ी बूटी के लेखक लिखते हैं कि मधु प्रमेह के एक भयंकर केस में प्रति दिन सवेरे शाम दो बार बिल्व पत्र का रस देते रहने पर २ महिने में उसका बहुत ही उत्तम परिणाम दृष्टिगोचर हुआ। मधु प्रमेह की व्याधि बहुत भयंकर मानी जाता है मगर उसके ऊपर यह वनस्पति बहुत लाभ दायक मालूम हुई है।

दूसरे प्रमेह और सुजाक में भी इसके बीजों का तेल बड़ा लाभ पहुँचाता है। और उसकी विधि इस प्रकार है। आधे पके हुए बेल के फलों को लेकर उसको पानी में डालकर उबालना चाहिये। जब उसके बीज उसमें से अलग हो जाएँ तब उन बीजों को उसमें से निकाल लेना चाहिये। उन बीजों का बारीक चूर्ण करके उनको त्रिफले के काढ़े की ७ भावनाएँ देना चाहिये। उसके बाद उस चूर्ण को घानी में डालकर उसका तेल निकलवा लेना चाहिये।

वमन विरेचन इत्यादि से शरीर को शुद्ध करके पहले दिन इस तेल को ८ रत्ती की मात्रा में दूध में डालकर पी लेना चाहिये। फिर प्रति दिन आठ २ रत्ती तेल बढ़ाते हुए दसवें दिन १० माशा की मात्रा में उस तेल को दूध में डालकर पीना चाहिये। उसके पश्चात १०-१५ दिन तक उस तेल को और १० माशे को मात्रा में पीते रहना चाहिये और जब तक यह दवा चालू रहे तब तक पथ्य में सिर्फ दूध और भात का ही प्रयोग करना चाहिये इस प्रयोग के सेवन से प्रमेह और सुजाक का भयकर रोग नष्ट हो जाता है। शरीर में शक्ति और नेत्रों में तेज की बढ़ती होती है। कान का बहरापन और दूसरे कितने ही प्रकार के वायु रोग भी दूर हो जाते हैं। इस तेल को उपयोग में लेने के पहिले अगर एक महिने तक जमीन में गडा हुआ रक्खा जाय तो विशेष लाभ करता है।

बेलफल और अतिसार—

कोमान का कथन है कि बेल के फल का द्रवसत्व रक्तातिसार और अतिसार के अनेक रोगियों पर आजमाया गया और उसका परिणाम बहुत सन्तोष जनक रहा। इसके फलों के गूदे का शरबत आंतों की सूजन के कुछ रोगियों को दिया गया और लम्बे टाइम तक लगातार लेते रहने के बाद उन रोगियों को उससे लाभ हुआ।

इसके कच्चे फलों को काटकर उनको सूरज की धूप में सुखाया जाता है। इन सूखे फलों का चूर्ण सकोचक, पाचक और अग्निवर्धक होता है। प्रवाहिका और रक्तातिसार के रोगों में यह बहुत लाभ

पहुँचाता है। अक्सर करके यह प्राचीन अतिसार के रोगियों में जब कि दूसरी सब दवाएँ असफल सिद्ध हो जाती हैं, बहुत कारगर सिद्ध होता है। विशेष तौर से प्राचीन प्रवाहिका रोग में इसका उपयोग बहुत ही उपयुक्त होता है। भोजन के टाइम में कुछ हेर फेर कर देने से और साधारण पथ्य में कुछ सुधार कर देने से तथा उसमें बेल के फल को शामिल कर देने से हमेशा बहुत लाभ दिखलाई देता है।

कर्नल चोपरा बेल के फल का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि बेल का वृक्ष हिन्दू धर्मशास्त्र के अंदर बहुत पवित्र माना गया है और हिन्दू लोग इसके पत्तों को भगवान शिव के ऊपर हमेशा चढ़ाते हैं हिन्दू चिकित्सा शास्त्र के अन्दर भी इस वनस्पति के भिन्न २ अंग उपयोग में लिये जाते हैं। इसकी जड़ की छाल काढे के रूप में पार्यायिक ज्वर, हृदय की धड़कन (Palpitation of the Heart), माली खोलिया और चित्तोन्माद में उपयोग में ली जाती है। दशमूल के प्रसिद्ध योग में भी इसकी जड़ डाली जाती है। इसके पत्ते पुल्टिस के रूप में व्रण और सूजन के ऊपर बांधे जाते हैं। इसका ताजा रस पानी के साथ मिलाकर जुकाम और हरारत में दिया जाता है इसके कच्चे और पक्के फल प्रवाहिका (Diarrhoea) और आंतों बीमारी में दिया जाता है। रक्तातिसार और प्रवाहिका में इसके सूरज की धूप में सुखाये हुए कच्चे फल का चूर्ण दिया जाता है। भारतीय इतिहास में लम्बे समय से बेल फल के समान कोई भी औषधि यहां के निवासियों के द्वारा इतनी पसन्द नहीं की गई। इसकी दो जातियां बाजार में मिलती है। एक छोटी और जङ्गली जाति और दूसरी बड़ी और लगाई हुई जाति। इसका पूरा बढ़ा हुआ फल जो कि पकने की सीमा के नजदीक पहुंच गया हो यह औषधि के लिये विशेष उपयोगी होता है।

(१) इसका कच्चा और अर्ध पक्व फल सकोचक, पाचक, अग्नि वर्धक और प्रवाहिका रोग की चमत्कारिक औषधि माना जाता है। क्योंकि इसका मूल कारण इसमें पाये जाने वाले टेनिन्स (उपक्षार) और लुआबदार पदार्थ है। प्राचीन प्रवाहिका रोग में यह विशेष रूप मे उपयोगी कहा जाता है। आयुर्वेदिक चिकित्सक इसको कभी २ अफीम के साथ मिलाकर देते हैं। इसके फल का मुरब्बा बनाकर भी हिन्दू चिकित्सक प्रवाहिका और अतिसार की चिकित्सा में काम में लेते हैं।

(२) इसका पका हुआ फल मीठा, सुगंधित और शीतल होता है। ताजी हालत में इसमें कुछ मृदुविरेचक तत्व रहते हैं। इसके सूखे फलों के गूदे का शरबत बनाया जाता है जिसमें कुछ हलके संकोचक तत्व रहते हैं।

रासायनिक विश्लेषण

कुछ वैज्ञानिकों के मतानुसार बेल के अन्दर टेनिकएसिड, एक उड़नशील तेल, एक कड़वा तत्व और एक चिकना और लुआबदार पदार्थ पाया जाता है। लेकिन फ्लूकीगर और हॉनबूरी ने इस मत की आलोचना करते हुए बतलाया कि इसके सूखे गूदे में प्रधान रूप से एक लुआब या रसदार पदार्थ पाया जाता है। वे इसके अन्दर टेनिन की कोई ऐसी महत्व पूर्ण तादाद नहीं प्राप्त कर सके जो कि इस

औषधि के संकोचक तत्वों के साथ अपना सम्बन्ध स्थापित कर सके।

हेनरी और ब्राउन ने सन् १६२४ में इसके फल का दूसरी २ अनेके रक्तातिसार नाशक औषधियों के साथ परीक्षण किया। इसके सूखे गूदे को अलकोहल में औटाकर उसका एक्स्ट्रैक्ट बनाया।

इन सबसे नवीन अन्वेषण दत्त और दिक्षित ने सन १६३० में इस वनस्पति के सम्बन्ध में किया उन्होंने इसकी जड़, बीज, छाल, पत्ते और फलों को पानी, अलकोहल इत्यादि कई गलाने वाली चीजों के साथ इनका एक्स्ट्रैक्ट बनाकर उनके तत्वों का निश्चय किया। इसकी जड़ पत्तों और छाल में उन्होंने शक्कर को कम करने वाले तत्व और टेनिन प्रधान रूप से प्राप्त किया। इसके फल के गूदे में मारमेलोसिन नामक एक पदार्थ प्राप्त किया यह पदार्थ इसके अन्दर पाये जाने वाले तत्वों में सबसे अधिक महत्व पूर्ण तत्व है। इसके बीजों को कुचल कर उनका पेट्रोलियम ईथर में एक्स्ट्रैक्ट बनाया गया। उस एक्स्ट्रैक्ट में से एक पीले रंग का तत्व प्राप्त किया गया। इस तेल में बहुत ही उत्तम विरेचक तत्व होते हैं और १॥ ग्राम की मात्रा में लेने पर यह बहुत ही उत्तम विरेचक असर बतलाती है।

यह विश्वास किया जाता था कि बेल प्राचीन प्रवाहिका और रक्तातिसार के हठीले और दुसाध्य केसों को आराम करने के लिये एक अमूल्य औषधि है। ऐसे रोगियों को जिनको बुखार नहीं होता है यह चूर्ण या मुरब्बे के रूप में दिया जाता है। पुराने समय में जबकि यह औषधि ब्रिटिश फरमाकोपिया के अन्दर सम्मत थी। भारत के पाश्चात्य चिकित्सकों के द्वारा भी इसका आमतौर से उपयोग होता था। उस समय इसकी-तीन बनावटें प्रायः सब दूर उपयोग में ली जाती थीं।

(१) एक्स्ट्रैक्ट—जो कि इसके ताजे कच्चे फलों से बनाया जाता था। यह आधे से लेकर १ ड्राम की मात्रा दिन में कई बार दिया जाता था।

(२) लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट—जोकि इसके सूखे हुए कच्चे फलों के टुकडों से तैयार किया जाता था। यह एक से लेकर दो ड्राम की मात्रा में दिया जाता था।

(३) इसके सूखे हुए गूदे का चूर्ण—जो कि एअर टाइट बोतलों में रक्खा जाता था और आधे से लेकर २ ड्राम तक की मात्रा में दिया जाता था।

लेकिन आज के दिन में मुश्किल से ऐसा कोई लिटरेचर मिलता है जो एमेबिक डीसेंट्री पर बेल के फल की उपयोगिता को साबित कर सके। तीव्र और नवीन रक्तातिसार में जबकि आंतों की मरोड़ और खून तथा पाक का गिरना निश्चित रूप से होता हो उसमें इसका फल बहुत ही थोड़ा या नहीं के बराबर असर दिखाता है। हालां कि इसी प्रकार की परिस्थिति के लिये इसकी प्रधान रूप से शिफारिश की जाती थी। बेल के फल का फायदे मंद और अधिक प्रत्यक्ष असर प्राचीन अतिसार के ऊपर दिखाई देता है जब कि उसका रूप अधिक उग्र नहीं होता। ऐसी-परिस्थितियो में इसको देने के पश्चात् खून का गिरना धीरे २ बंद हो जाता है और दस्त वास्तव में अधिक गाढे और फोक्यूलेंट (Focculent) रूप में आने लगता है। अगर इसका लगातार कुछ दिनों तक उपयोग किया जाय तो दस्त के साथ जाने

वाला सफेद और चिकना पदार्थ भी बंद हो जाता है। प्राचीन रक्तातिसार के ऐसे रोगियों के लिये जिनको कभी दस्त लगने लगते हैं और कभी भयंकर कब्जियत हो जाती है। बेल का फल एक बहुत ही उपयोगी वस्तु है।

बेसेलरी रक्तातिसार की चिकित्सा में भी बेल एक उपयोगी सहायक वस्तु सिद्ध हुआ है। एक्टन और नावेल्स के मतानुसार ऐसे बीमारों के लिये खास कठिनाई यह होती है कि अगर उनकी कब्जियत दूर न की जाय तो उनकी आंतों के व्रण भली प्रकार दुरुस्त नहीं हो सकते। बेल का शरबत अगर उनकी खुराक में मिला दिया जाय तो वह ऐसी स्थिति में एक शांतिदायक औषधि का काम करता है। इसके ताजा फल का गूदा शक्कर और मक्खन के साथ मिलाकर अथवा दही के साथ मिलाकर अथवा उसको मलमल के कपड़े में बीजों को और लुआब को दूर करने के लिये छानकर उपयोग में लिया जाता है।

संग्रहणी के केसों में भी बेल के फल की काफी तारीफ की गई है। कई बीमारों को खासकर संग्रहणी रोग के होने के पूर्व अथवा संग्रहणी रोग की प्रथम अवस्था में बेल फल निसन्देह बहुत मददगार होता है। इस कार्य में इसके ताजा फल की शक्कर के साथ अथवा इसके सूखे फल की भी सिफारिश की गई है।

अन्त में कर्नल चोपरा लिखते हैं कि बेल फल बहुत लंबे समय से देशी औषधियों के अंदर प्रवाहिका और रक्तातिसार की चिकित्सा में बहुत प्रसिद्ध है। और कुछ समय पहले यह ब्रिटिश फरमाकोपिया में भी सम्मत माना जाता था। लेकिन टेनिन्स के अतिरिक्त इसमें और कोई ऐसे प्रधानतत्व नहीं पाये गये हैं जिनको इन रोगों की चिकित्सा में विशेष महत्व दिया जा सके। नवीन और तीव्र अतिसारों में इसका बहुत ही कम असर होता है। लेकिन प्राचीन रोगों में यह उनके लक्षणों को मिटाकर बहुत लाभ पहुंचाता है। जिसका कारण इसके अंदर बड़ी तादाद में रहने वाला लुआब है जो शांति दायक असर पैदा करता है। यह एमेबिक और बेसिलरी अतिसारों में कोई विशेष लाभ नहीं पहुंचाता है।

डॉक्टर मुहीन शरीफ का कथन है कि इसके कच्चे फलों के गूदा को धूप में सुखाकर चूर्ण कर कर लेना चाहिये। यह चूर्ण पौष्टिक अग्नि दीपक और ज्वर नाशक होता है। यद्यपि अतिसार और रक्तातिसार के सभी रूपों में यह उपयोगी नहीं होता फिर भी तीव्र मरोड़ी के दस्तों में इस चूर्ण को देने से लाभ पहुंचता है। इसका पहिला असर यह होता है कि यह दस्त के साथ गिरने वाले खून को बंद करता है और आँव को निकाल देता है। और दस्त होने के टाइम को यह लंबा कर देता है। मगर यह दस्त के प्रमाण को कम नहीं कर सकता। इसलिये दस्त के प्रमाण को कम करने के लिये इसको अफीम के साथ देना चाहिये। इसके अतिरिक्त यह चूर्ण टायफाइड ज्वर, क्षय ज्वर (Hectic Fever) अथवा दूसरी किसी भी औषधि से न उतरने वाले और हमेशा समान रूप से शरीर में बने रहने वाले ज्वरों को उतारने में बहुत उपयोगी होता है। इस प्रकार के ज्वरों में जब गर्मी बहुत चढ़ी हुई रहती है तब इस चूर्ण को देने से यह एक दम कम हो जाती है। ऐसे ज्वरों में इसको ५ रत्ती से लेकर आठ रत्ती तक की

मात्रा में २४ घंटे में ४ या ६ वक्त देना चाहिये। अतिसार के रोग में इसको १० से लेकर ३० रत्ती तक की मात्रा में चौथाई ग्रेन अफीम के साथ मिलाकर २४ घंटे में ४ से ६ वक्त देना चाहिये।

सर्जन ब्राउन का कथन है कि प्राचीन अतिसार के रोगों में यह बहुत उपयोगी औषधि है और इसको अफीम के साथ देने से यह बहुत अच्छा काम करती है।

मेजर निकर का कथन है कि इसके फलों का बहुत लंबे समय तक सेवन करने से रक्त श्राव होने का डर रहता है मगर यदि इसको शक्कर के साथ लिया जाय तो यह भय नहीं रहता।

कोकण में इसके छोटे कच्चे फलों को सोया के बीज और सोंठ के साथ काढा बनाकर बवासीर को दूर करने के लिये देते हैं। इसके पके फल मीठे, खुशबूदार और ठंडे होते हैं। इनका शरबत बनाकर बरफ के साथ सवेरे लेने से तबियत प्रसन्न होती है दस्त साफ हो जाता है और मंदाग्नि की शिकायत मिट जाती है। इसके सूखे फल का गूदा सकोचक और रक्तातिसार नाशक होता है। इसकी जड़ की छाल काढ़े के रूप में पार्यायिक ज्वरों को दूर करने के लिये दी जाती है। यह दशमूल क्वाथ के अन्दर भी डाली जाती है। मलाबार कास्ट में यह पित्तोन्माद मालीखोलिया और हृदय की धड़कन में काम में ली जाती है। इसके पत्तों का पुल्टिस नेत्राभिष्यंद रोग में लगाया जाता है। इसका ताजा रस जुकाम और ज्वर की हरारत में लाभदायक माना जाता है। इसके पत्तों का ताजा रस काली मिर्च के साथ पीलिया और कब्जियत के साथ होने वाले सर्वांगीण शोथ में दिया जाता है। बाहरी सूजन में इसके पत्तों का रस वात, पित्त और कफ की अव्यवस्था को दूर करने के लिये पिलाया जाता है। इसके पत्तों का दबाकर निकाला हुआ रस आंखों के दुखने पर तथा दूसरी नेत्र पीड़ाओं पर उपयोग में लिया जाता है। मलाबार में इस के पत्तों का काढ़ा दमे की शिकायतों को दूर करने के लिये उपयोगी माना जाता है। ज्वर की सन्निपातिक अवस्था में (Delirium) इसके पत्तों का गरम पुल्टिस ललाट के ऊपर बांधा जाता है।

कम्बोडिया में इसका फल राजयक्ष्मा और यकृत प्रदाह को दूर करने के काम में लिया जाता है।

सुश्रुत वाग्भट्ट और योग रत्नाकर के मतानुसार इसकी जड़, पत्ते और छाल सर्पविष को नष्ट करने में उपयोगी है।

यूनानीमत—यूनानीमत से इसका पका हुआ फल गरम और खुश्क होता है। यह पौष्टिक, सकोचक, मृदुविरेचक और हृदय तथा मस्तिष्क के लिये शक्ति वर्धक होता है। यकृत और छाती के लिये यह हानिकारक है।

उपयोग—

अतिसार—नं० १ इसके कच्चे फल के गूदे को सेक कर मिश्री के साथ खिलाने से पुराना अतिसार और आमातिसार मिटता है।

नंबर २—बेल का मुरब्बा खिलाने से पित्तातिसार मिटता है। आमातिसार में इसके चूर्ण की

१। माशे से ४ माशे तक की मात्रा में दिन में तीन या चार बार देने से लाभ होता है।

नंबर ३ – बेलगिरी, आम की गुठली, कत्था, ईसबगोल की भुसी और शक्कर के साथ देने से अतिसार और आमातिसार में बहुत लाभ होता है।

नंबर ४—बेल के कच्चे और साबित फल को भोभल में भूनकर उसको छिलके सहित कूटकर उसका रस निकाल कर मिश्री मिलाकर देने से पुराना आमातिसार मिटता है।

नंबर ५—बेल के गूदा को गुड़ के साथ खाने से रक्तातिसार मिटता है।

नंबर ६—बेल के गूदा और आम की गुठली में शक्कर और शहद मिलाकर चटाने से वमन और अतिसार मिटता है।

ज्वर—शीत ज्वर और ऐसा ज्वर जिसका कारण मालूम न हो बेलगिरी के चूर्ण की फक्की देने से लाभ होता है।

मूत्रकृच्छ्र—इसके ताजे फल के गूदे को पीसकर दूध के साथ छानकर उसमें शीतल चीनी का चूर्ण भुरभुरा कर पिलाने से पुराना मूत्रकृच्छ्र मिटता है। मूत्र वृद्धि होती है और मूत्रेंद्रियों की झिल्ली सिकुड़ जाती है।

विशूचिका—विशूचिका के आक्रमण के समय में इसके फल के शरबत को पीते रहने से रोग के आक्रमण का भय कम रहता है।

सर्पविष—इसकी जड़ विषैले सर्प के विष को दूर करने के लिये लाभदायक है।

खराब फोड़े—इसके पत्तों को बिना पानी के पीस कर टिकिया बना कर खराब फोड़ों पर बांधने से लाभ होता है।

मसूड़े का रोग—इसके ५ तोला शरबत में ५ तोला दूध मिलाकर पिलाने से मसूड़ों के असाध्य रोग में लाभ होता है।

मंदाग्नि—इसका पका हुआ फल मंदाग्नि और ज्वर में लाभ पहुंचाता है।

ज्वर—इसकी जड़ की छाल का क्वाथ पिलाने से रह रह कर आने वाला ज्वर छूट जाता है।

पागलपन—इसकी जड़ की छाल का क्वाथ बना कर पिलाने से हृदय का अधिक धड़कना और पागलपन मिट जाता है।

आंख का दुखना—इसके पत्तों का पुल्टिस बांधने से आंख का दुखना और अधिक गीढ़ों का आना मिट जाता है।

संग्रहणी—इसके कच्चे फल को सेक कर उसके १ तोला गूदा में शक्कर मिलाकर खिलाने से संग्रहणी में लाभ होता है।

वमन—इसकी छाल के काढे में शहद मिलाकर पिलाने से त्रिदोष की वमन बन्द होती है।

गर्भवती स्त्री की वमन—इसके फल के गूदे को पीस कर चांवल के पानी के साथ मिलाकर पिलाने

से गर्भवती स्त्री की वमन बन्द होती है।

कामला रोग—इसके पत्तों के रस में काली मिरच का चूर्ण भुरभुरा कर पिलाने से पांडु शोथ, बद्ध कोष्ट, अर्श और कामला रोग मिटता है।

कानों का बहरापन—बेलगिरी को गौ मूत्र के साथ पीस कर उसको जल और दूध के साथ तेल में सिद्ध करके उस तेल को कान में टपकाने से कान का बहरापन मिटता है।

बनावटें—

बधिरता नाशक तेल—बेल के गूदा को बीज वगैरह निकाल कर ५ तोला की मात्रा में लेकर पानी के साथ पीस कर लुग्दी बना लेना चाहिये। यह लुग्दी ५ तोला, निगुंडी के पत्तों का रस ५ तोला बरुन के पत्तों का रस ५ तोला, अपामार्ग के बीजों का चूर्ण २॥ तोला, तिलवन का रस २॥ तोला, बकरी का मूत्र २२ तोला, सेंधा नमक २॥ तोला और बादाम का तेल १० तोला लेकर इन सबों को हलकी आंच से औटाना चाहिये। जब रस और मूत्र का भाग जल कर तेल मात्र शेष रह जाय तब उसको उतार कर छान लेना चाहिये। इस तेल को हमेशा कान में डालते रहने से बहिरापन दूर होता है।

पुराने और दुर्गंधित घी को सुधारने का उपाय—घी जब पुराना होकर खराब हो जाता है और खाने योग्य नहीं रहता तो उसको सुधारने के लिये जितना घी का वजन हो उसका चौथाई हिस्सा दही में डाल कर उस दही से चौथाई वजन की बेल के ताजा पत्तों की पिसी हुई लुग्दी उसमें डाल कर हलकी आंच से पकाना चाहिये। जब घी कड़कड़ाने लगे तब वैसे ही उसे नीचे उतार कर ठंडा करके छान कर मिट्टी की बरनी में भर लेना चाहिये। यह घी ताजा घी के समान सुगंधित और स्वादिष्ट हो जाता है।

बेल के पत्तों का रस निकालने की विधि—बेल के पत्तों में से सिर्फ आषाढ और श्रावण में ही रस निकलता है अगर दूसरी ऋतुओं में इसका रस निकालना हो तो पुट पाक विधि से इसका रस निकालना चाहिये अर्थात् इसके ताजा पत्तों को सिल पर पीस कर उनका गोला बना लेना चाहिये और उस गोले के ऊपर बड के पत्तों को लपेट कर भाड़ में डाल देना चाहिये जब वह गोला लाल हो जाय तब उसको निकाल कर ठंडा होने पर कपड़ मिट्टी और बड के पत्तो को दूर करके उस गोले को कपडे में दबा कर उसका रस निकाल लेना चाहिये।

बेलि

नाम—

हिन्दी—बेलि। बम्बई—रानलिंबू, नारिंगी। मराठी—कावट, नाई बेल, टोंडशा। मेरवाडा-कारा, केरी। छोटा नागपुर—वेलसियान। तामील—विल्लूरुहामारम, कुरंगू। तेलगू—टोरेलेजा उड़िया—भेंटा। लेटिन—Limonia Crenulata (लिमोनिया क्रेन्यूलेटा)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति का झाड़ीनुमा वृक्ष होता है। इसके पत्ते २.५ से लेकर १० सेंटीमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल हर एक डखल पर गुच्छे में लगते हैं। इसके फल छोटे २ और बहुत खट्टे होते हैं। यह बनस्पति पश्चिमी और दक्षिणी भारत, पजाब, शिमला कुमाऊं, विहार, बगाल और आसाम में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके पत्ते मृगी रोग की एक उत्तम औषधि माने जाते हैं। इसकी जड़ विरेचक, पसीना लाने वाली, और कॉलिक उदर शूल तथा हृदय शूल के अन्दर उपयोग में ली जाती है। इसके सूखे फल पौष्टिक, आंतों के विक्षोभ को दूर करने वाले, चेचक के सक्रमण को रोकने वाले, हठीले और विनाशक ज्वरों को रोकने वाले होते हैं। इसमें अनेक प्रकार के विषों को नष्ट करने के लिये चमत्कारिक गुण रहता है। इस कार्य में यह वस्तु बहुत प्रसिद्ध है और अरब के तथा दूसरे व्यापारी एक व्यापारिक वस्तु की तरह इसका व्यापार करते हैं।

मलाबार में इसके छोटे फल पौष्टिक द्रव्य के रूप में बहुत लिये जाते हैं और इसका लाल रग का लुआब सर्प विष और दूसरे जहरीले प्राणियों के विषों को दूर करने के लिये एक दर्पनाशक पदार्थ की तरह उपयोग में लिया जाता है।

महस्कर और केस के मतानुसार इसका फल सर्प विष का दर्पनाशक नहीं है

———

बेफोल

नाम—

Hedysarum Purpureum (हेडीसेरम परपूरिम)। सथाल—बेफोल। तेलगू—चेपूटट्टा लेटिन—Desmodium Polycarpum (डेसोमोडियम पोलीकार्पम)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की झाड़ीनुमा बनस्पति होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

सथाल जाति के लोग इस पौधे को मूर्छा और आक्षेप को दूर करने के काम में लेते हैं।

———

बेकरा

नाम—

हिन्दी—बेकरा, भेकल, चेरारा, घातीला, झाटेला, कारगा। पजाब—वेहफुल, वेकली, भेकल, चबा, गरांड्ड, गुरिंडा, खारन बुरा, फुलवारा, अरद। गढवाल—भेकल। कुमाऊं—भेकला, चिरारा।

लेटिन—Prinsepia Utilis (प्रिंसेपिया यूटिलिस ।

वर्णन—गुण दोष और प्रभाव—

यह एक झाड़ी होती है । इसकी शाखाएँ हरी और फूल सफेद होते हैं । इस वनस्पति में एक प्रकार का तेल रहता है यह चर्म दाहक पदार्थ के रूप में संधिवात और अधिक थकावट की वजह से होने वाले दर्द पर लगाने के काम में लिया जाता है ।

बेदीना

नाम—

संस्कृत—नागवल्ली, श्रीवती । हिन्दी—बेदीना, बेबिन । बम्बई—बेबना, भूतकेशा । मराठी—भूतकेश, लवशाद, सर्वांध । नेपाल—असारी । तामील—वेलाइ इलाइ, वेलिमदनदाइ । लेटिन—Mussaenda Frondosa मुसेंडा फ्रोंडोसा । M. Glabrata (मुसेंडा ग्लेबरेटा) ।

वर्णन—

यह एक पराश्रयी झाड़ी होती है । इस पर नारंगी रंग के तुर्रे आते हैं । इसके पत्ते और फूलों में बहुत सुस्राव रहता है । औषधि में इसकी जड़ और फूल काम में आते हैं ।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति की जड़ कफ नाशक और पौष्टिक तथा फूल मूत्रल, शोथ नाशक, व्रण शोधक, और चर्म रोग नाशक होते हैं । इसकी जड़ को ३ माशे से ६ माशे की मात्रा में पांडु रोग और श्वेत कुष्ट में देते हैं । पीलिया में इसके २ तोला सफेद पत्तों को दूध के साथ देते हैं ।

इण्डोचायना में इसके फूल मूत्रल और छाती के रोगों के लिये हितकारक माने जाते हैं और ये खांसी, दमा, पार्यायिक ज्वर और जलोदर में दिये जाते हैं । बाह्य प्रयोगों में व्रणों को शुद्ध करने के लिये इसका लेप किया जाता है ।

बेरबंज

नाम—

गढ़वाल—बेरबंज । हिन्दी—काहू, कान, कौ । फारसी—जैतून । उर्दू—जैतून । पंजाब—कान, काओ, कोहू । सिंध—खान, खाऊ । लेटिन—Olea Cuspidata (ओलिया कास्पिडेटा) ।

वर्णन—

यह एक हमेशा हरा रहने वाला मध्यम कद का वृक्ष होता है । इसकी छाल नवीन हालत में बहुत मुलायम और पुरानी हालत में सख्त और ऊबड़ खाबड़ हो जाती है । इसके फूल कुछ सफेद रंग

के होते हैं। यह वृक्ष देवदारु के वर्ग का होता है और उत्तरी पश्चिमी हिमालय तथा काश्मीर में दो हजार फुट से लेकर छः हजार फीट की ऊँचाई तक होता है।

गुण दोष और प्रभाव —

यूनानी मत— इसकी जड़ बिच्छू के डंक पर लगाने के लिये एक उत्तम वस्तु है इसकी राख सन्धिवात और मस्तिष्क सम्बन्धी बीमारियों में काम आती है। इसका फल पौष्टिक, मूत्र स्राव नियामक पित्त प्रकोप में लाभदायक, यकृत की शिकायतों को दूर करने वाला और गीली खुजली, प्यास, आँखों की जलन, दस्त, इत्यादि रोगों में लाभदायक है। इसका तेल मधुर स्वाद वाला, विरेचक, पौष्टिक और छाती का दर्द, यकृत की शिकायतें, जोड़ों का दर्द व विवात, कटिवात और पुराने जखमों में यह उपयोगी होता है। इसके हरे फलों से प्राप्त किया हुआ तेल संकोचक और बुड्ढे लोगों के लिये उत्तम पौष्टिक वस्तु होता है।

लाल देश में इसके पत्ते जुलाब को दूर करने वाले माने जाते हैं और इसका गोंद नेत्र रोगों के अन्दर उपयोगी समझा जाता है।

इसके फलों से निकाला हुआ तेल चर्म दाहक होता है।। इसके पत्ते कड़वे और संकोचक होते हैं और बुखार तथा कमजोरी में पार्यायिक ज्वर नाशक औषधि की तरह इसका उपयोग किया जाता है।

बेद मुश्क

नाम—

संस्कृत—निचिका। हिन्दी—बेद मुश्क। पंजाब—बेद मुश्क। उर्दू—बेद मुश्क। फारसी—बिद-इ-बलखी। अरबी—खिलाफ। लेटिन—Salix Caprea (सेलिक्स केप्रिया)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति का १५ से ३० फुट तक ऊँचा वृक्ष होता है। इसके पत्ते गहरे हरे बड़े लम्बे, गोल, चिकने, नोकदार और रूएँदार वाले होते हैं। इसके फूल पीले और सुगन्धित होते हैं ये पत्तों के पहिले आते हैं। इंग्लैण्ड में इस वनस्पति की खेती होती है और उत्तर पश्चिमी भारत में भी यह पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसका फूल तिक्त और कड़वे स्वाद वाला होता है। यह मस्तिष्क के लिये शीतल होता है। यकृत की जलन और यकृत शूल में भी यह उपयोगी होता है। प्यास, पित्त प्रकोप और मस्तक शूल में यह बहुत लाभ पहुंचाता है। यह कामोद्दीपक भी होता है। इसके पत्तों का रस संकोचक, कृमि निस्सारक, मृदु विरेचक और ज्वर में लाभदायक और शरीर की कंपन को दूर करने वाला होता है। स्नायु शूल, नेत्र रोग, तिल्ली की वृद्धि इन सब रोगों में यह काम आता है। इसका रस पित्त प्रकोप और चोट लगने को

वजह से हुई आखों की सूजन में लाभ पहुँचाता है। परसिया से आने वाले लोगों ने भारतवर्ष में इस वनस्पति के फूल और इसके अर्क का प्रचार किया। उसके पश्चात् मुसलमान और फारसी लोगों ने इसका उपयोग करना प्रारंभ किया। वे लोग इसको मस्तक सम्बन्धी और हृदय सम्बन्धी रोगों में एक घरेलु औषधि की तरह हर प्रकार की अस्वस्थता में उपयोग में लेते हैं। रोगन बेदमुश्क इसके वाष्पी करण से पैदा किया जाता है और खांसी के लिये यह एक उत्तम औषधि मानी जाती है। इसके पत्तों का काढ़ा ज्वर के अन्दर उपयोगी समझा जाता है।

डायमॉक के मतानुसार बेद मुश्क के उड़ाये हुए अर्क की औषधि के बतौर बहुत प्रशंसा है। यह अग्निदीपक, उत्तेजक, और कमोद्दीपक होता है। मस्तक शूल और नेत्र रोगों पर इसका बाहरी लेप किया जाता है। इसकी लकड़ी की राख कफ के साथ खून जाने की बीमारी में लाभ दायक होती है। इसको सिरके के साथ मिलाकर खूनी बवासीर के ऊपर लगाया जाता है। इसकी डालियाँ और पत्ते सकोचक होते हैं। और इनका रस तथा गोंद नेत्रों की ज्योति को बढ़ाने के लिये काम में लिया जाता है।

डॉक्टर देसाई के मतानुसार बेद मुश्क की छाल सकोचक, शीतल, ज्वर नाशक और जलन को शांत करने वाली होती है, और इसके फूल रोचक होते हैं। इसकी छाल का काढा विषम ज्वर, पित्त-ज्वर, नवीन आमवात और कफ क्षय में देते हैं। इसको देने से ज्वर के अन्दर होने वाली अन्तर्दाह और सिर दर्द कम होता है। कफ क्षय रोग में इसको देने से फेफडे से होने वाला रक्तश्राव कम हो जाता है। सधिवात में इसको देने से सधियों की सूजन और उनकी वेदना शान्त हो जाती है। साधारण ज्वर में तथा अजीर्ण रोग में इसके फूलों का अर्क भूख बढ़ाने के लिये देते हैं। इसके ४ भाग फूलों के अर्क को १ भाग तिल्ली के ताजे तेल में मिलाकर हलकी आंच पर औटाने पर जब पानी का भाग जल जाय तब उस तेल को छानकर खांसी और कफ क्षय में देते हैं। हृदय की धड़कन को मिटाने के लिये भी फूलों का अर्क एक उपयुक्त वस्तु है। नेत्राभिष्यद और सिर दर्द में भी यह फूल लाभ दायक हैं। इसकी लकड़ी की राख फेफड़े के रक्तश्राव को मिटाने के लिये दी जाती है। इसको सिरके में मिलाकर बवासीर के ऊपर लेप करते हैं।

——:o:——

बैंगन

नामः—

संस्कृत—अंगना, बेरा, भटाकी, चित्रफला, दीर्घवर्तकी, हिंगुली, कंटालु, कट पत्रिका, वेंगना, वर्तका, वार्ताकू, वृत्तफला, इत्यादि। हिंदी—बैंगन, बेगुन, भट्टा, बादजान, । बंगाल—वार्ताकू, बेगुन, चोंग, कुली बेगुन, हिनपोली, महोटी। बंबई—बेगन, वेंगन। मध्यप्रान्त—बन भट्टा। गुजराती—रींगणा, रींगणी, वेंगनी। मराठी—वांगी। तामील—अचेटी। तेलगू—हिंगुदी। उर्दू—बेंगन। अरबी—बादजान, कहकाब। इंग्लिश—Brinjal, Eggplant। लेटिन—Solanum, Melon-

gena (सोलेनम मेलोंगेना)।

वर्णन—

बैंगन तरकारी के काम में सारे भारतवर्ष के उपयोग में आता है। इसलिये इसके विशेष वर्णन की आवश्यकता नहीं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—भाव प्रकाश के मतानुसार बैंगन स्वादिष्ट, तीक्ष्ण, गरम, पाक में कडुवावार्ठ, कफ नाशक, ज्वर को निकालने वाला, अग्निदीपक, वीर्यवर्धक और हलका होता है। कच्चा बैंगन कफ पित्त नाशक होता है। पका हुआ बैंगन पित्त कारक और भारी होता है। अ गारों पर भुना हुआ बैंगन कुछ पित्त कारक तथा कफ, मेद और वातको नष्ट करने वाला, अत्यत हलका और अग्निदीपक होता है। सफेद रंग का बैंगन बवासीर वाले मनुष्य के लिये विशेष हितकारी होता है।

राजनिघटु के मतानुसार बैंगन कडुआ, रुचिकारक, मधुर, पित्त नाशक, बल कारक, कामोद्दीपक, हृदय को हितकारी, पचने में भारी और वात रोगों में हानिकारक होता है।

बैंगन की जड़ चरपरी, कड़वी, गरम, अग्निवर्धक, आँतों के लिये संकोचक और कृमिनाशक, होती है। यह मुह की गदगी को दूर करने वाली, हृदय की तकलीफों में लाभदायक और श्वेत कुष्ट, ज्वर, दमा, ब्रोंकाइटीज, वमन और एक प्रकार की खुजली में (Pruritus) में उपयोगी है। इसका फल कड़वा चरपरा, कृमिनाशक और खुजली, श्वेतकुष्ट, ब्रोंकाइटीज, वात, कफ, दमा, ज्वर, वमन, शक्ति-हीनता और नेत्र रोगों में लाभदायक है। इसकी जड़ अन्तः प्रयोग में लेने पर प्रत्यक्ष रूप से अपना उत्तेजक प्रभाव दिखलाती है। यह कष्ट प्रसूति और दत शूल में उपयोग में ली जाती है। यह ज्वर कृमिजन्य शिकायतें और क्रॉनिक उदर शूल मे लाभदायक होती है। एक कफ निस्सारक द्रव्य की तरह यह खांसी और जुकाम में दी जाती है। पेशाब के समय होने वाली पीड़ा को दूर करने के लिये इसके रस या निर्यास को दिन में दो बार देते हैं। वमन को रोकने के लिये इसके पत्तों के रस को अदरक के ताजा रस के साथ देते हैं। इसके पत्तों और फलों को कुचल कर उसमें शक्कर मिलाकर खुजली पर लगाने के काम में लेते हैं।

कोमान का कहना है कि इसकी जड़ का काढा ब्रोंकाइटीज के रोगियों को जिनको ज्वर भी था दिया गया मगर उससे कोई लाभ नहीं हुआ।

चरक सुश्रुत और वाग्भट्ट के मतानुसार इसकी जड़ और फल सर्प और बिच्छू के विष में उपयोग में लिये जाते हैं।

केस और महस्कर के मतानुसार सांप और बिच्छू के विष में यह बिलकुल निरुपयोगी है।

उपयोग.—

अनिद्रा- बैंगन के भुरते के रस में शहद मिलाकर पिलाने से नींद आ जाती है।

आंख का जाला—बैंगन की जड़ को पानी के साथ घिसकर आंख में आंजने से आंख का जाला कट जाता है।

धतूरे का विष—बैंगन के टुकड़ों को पानी में मसल कर उस पानी को पिलाने से धतूरे का विष उतर जाता है।

——:o:——

बेदाना

नामः—

हिंदी—फारसी—बेदाना। पंजाब—चाचर। उर्दू—अम्बर। अरबी—अम्बर बेरिस। लेटिन—Berberis, Petiolaris, B Vulgaris (बरबेरिस, पेटियोलेरिस, ब० व्हलगेरिस)।

वर्णनः—

यह दारुहल्दी के वर्ग की एक वनस्पति होती है। जो काश्मीर से लेकर नेपाल तक १२ हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानीमत से इसकी जड़ शीतल, पौष्टिक, पित्तनाशक और विरेचक होती है। मस्तिष्क सम्बन्धी बीमारियों में तथा खांसी, अर्द्धांग, लकवा, सधिवात और आधा शीशी में यह लाभ दायक होती है।

पंजाब में इसकी जड़ की छाल एक मूत्रल पदार्थ की तरह उपयोग में ली जाती है। गरमी और प्यास को शांत करने के लिये तथा वमन प्रवृत्ति और जी मिचलाने को बंद करने के लिये इसका उपयोग किया जाता है। यह संकोचक, तृषानाशक, ज्वर और पित्त को नष्ट करने वाले होते हैं। छोटी मात्रा में यह पौष्टिक और बड़ी मात्रा में विरेचक होती है। इसका काढ़ा अरुण ज्वर (Scarlat Fever) और मस्तिष्क सम्बन्धी विकृति में लाभदायक होता है।

बलूचिस्तान में इसकी जड़ को पानी के साथ उबाल कर अन्तरंग चोट के दर्द को दूर करने के लिये पिलाते हैं।

——:o:——

बेलीपाता

नाम—

बम्बई—बेलीपाता। बङ्गाल—बोला, चेलवा। संस्कृत—बेला। तामील—निरप्परुत्ती। तेलगू—इट्टागोगु। उड़िया—बेनिया। लेटिन—Hibiscus Tiliaceus (हिबिस्कस टिलियासेस)।

वर्णन—

यह एक वृक्ष होता है। इसके पत्ते १० से लेकर १२.५ सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी जड़ ज्वरनाशक होती है और यह मालिश तथा लेप करने की औषधियों में मिलाई जाती है।

फिलीपाइन में इसकी छाल का चूर्ण वामक द्रव्य की तरह दिया जाता है। इसके पत्तों का निर्यास व्रण और जख्म को धोने के काम में लिया जाता है। कर्ण शूल को मिटाने के लिये इसके फूलों को दूध में उबालकर कान में डालते हैं। त्वचा की शिथिलता को मिटाने के लिये इसके ताजे फल का पीला रस त्वचा के ऊपर रगड़ा जाता है।

इंडोचायना में इसके पत्ते मृदुविरेचक और व्रण को भरने वाली औषधि की तरह काम में लेते हैं।

——:o:——

वेंदरली

नाम—

मद्रास—वेंदरली। लेटिन—Lycopodium Clavatum (लिकोपोडियम क्लेवेटम)

गुण दोष और प्रभाव—

कर्नल चोपरा के मत से यह वनस्पति मूत्रल, शान्तिदायक, कृमिनाश, ऋतुश्राव नियामक होती है। यह संधिवात और फुफ्फुस सम्बन्धी खराबियों को दूर करती है।

——:o:——

वेतिर

नाम—

पंजाब—वेतिर, वेतर, थेलू, पुलु। सीमा प्रदेश—वेतिर, त्रिदेलगज, गिल, गुग्गल, थेलू। लेटिन—Juniperus Recurva (जूनिपेरस रिकर्वा)।

वर्णन—

यह एक झाड़ीनुमा वनस्पति होती है। इसके पत्ते बरछी आकार के होते हैं और इसके फल लंब गोल तथा गहरे बादामी रंग के होते हैं। ये पकने पर चमकने लग जाते हैं। इनमें हर एक में एक बीज रहता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी हरी लकड़ी का धुआँ तेज वमन कारक होता है। इसके कारण से पैदा हुए वमन बहुत टाइम तक स्थायी रहते हैं।

——:o:——

बेलेडोना *

नाम—

संस्कृत—प्राण नाशक, विष, द्राक्षाफला, निशाच्छायाप्रिया, कनिनिकाप्रसारक, युवतिश्रृंगार, कृष्णफला, करमर्दफला। हिन्दी—बेलेडोना, अंगूरशेफा, वुकभुना, लुकभुनी, संगअंगूर। बङ्गाल—येन-रुज। बम्बई—गिरबूंटी। पंजाब—सूचि। फारसी—रुबाहतरबक। अरबी—उस्तसग। इङ्गलिश—Belladonna, Black Cherry। लेटिन—Atropa Belladonna (एट्रोपा बेलेडोना)।

वर्णन—

इस वनस्पति का विषैला क्षुप हिमालय में काश्मीर, शिमला, कुमाऊँ, नैनीताल, इत्यादि स्थानों में ६ हजार से १२ हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होता है। इसकी ऊँचाई ४ से ५ फुट तक होती है। इसके पत्ते अखण्ड, छोटे डंठल वाले और आमने सामने लगते हैं। इसके फूल किरमची झांई लिये हुए हरे होते हैं। इसके फल करोंदे के समान काले मगर उनसे कुछ बडे होते हैं। इसकी जड़ करीब १ फुट लम्बी, एक दो इञ्च मोटी और मांसल होती है। इसकी जड़ की छाल फीकी और उदी रङ्ग की होती है। इसकी जड़ की रुचि तीखी होती है मगर उसमें कोई गंध नहीं होती है। औषधि प्रयोग में इसके हरे या सूखे पत्ते काम में आते हैं। फूल आने के साथ ही पत्ते तोड़ लिये जाते हैं और उनका या तो अर्क निकाल लिया जाता है या वे जल्दी से हवा में सुखा लिये जाते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

बेलेडोना एक घातक विष होता है। मगर सावधानी के साथ बहुत थोडी मात्रा में इसका उपयोग करने से यह अमृत के तुल्य काम करता है। इसमें अवसादक, सकोच विकास प्रतिबंधक, श्वास कास नाशक, रक्त प्रतिबंधक, मूत्रल, दुग्धनाशक, वेदनानाशक और हृदय को बल देने वाले धर्म मौजूद रहते हैं। इसके लेप से त्वचा में जड़ता पैदा होती है। यह वृद्ध मनुष्यों के लिये उपयोगी नहीं होता। मगर बच्चों के लिये बहुत अच्छा रहता है। इस औषधि को बहुत छोटे प्रमाण में देते रहना चाहिये।

बेलेडोना और हृदय रोग—हृदय रोग के अन्दर इस औषधि का बहुत उपयोग होता है। हृदय के बाएं अधर पुट की गति को धीमी करने और उसी समय नाड़ी की गति को शिथिल करने की जब जरूरत पड़ती है तब यह औषधि बहुत मूल्यवान साबित होती है। इससे बिना हृदय की शक्ति कम हुए इच्छित कार्य सिद्ध हो जाती है। यह दूसरी हृदय को बल देने वाली औषधियों के साथ भी दी जाती है। इससे हृदय के दोनों ही अधरपुटों की गति व्यवस्थित और धीमी हो जाती है। नाड़ी की तीव्रता कम होकर उसमें शिथिलता पैदा हो जाती है और हृदय का फूलना बन्द हो जाता है। हृदय रोगों में बेले-डोना पेट में दिया जाता है और इसकी जड को उबाल कर हृदय पर लेप किया जाता है। हृदय को

---

*नोट—इस वनस्पति का वर्णन अंगूर शेफाके नाम से इस ग्रंथ के पहिले भाग में संक्षिप्त दिया गया है मगर इसका कुछ विशेष वर्णन प्राप्त होने के कारण यहां पर फिर से इसका वर्णन दिया जाता है।

पीड़ा, तेज धड़कन और अव्यवस्थित ठोकों को सुव्यवस्थित करने के लिये यह औषधि अफीम की अपेक्षा श्रेष्ठ है। लेकिन पीड़ा बहुत अधिक होने पर इसको अफीम के साथ मिलाकर दिया जा सकता है। हृदय के ऊपर इस औषधि की क्रिया बिलकुल स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

बेलेडोना और फुफ्फुस सम्बन्धी रोग—फुफ्फुस के रोगों में बेलडोना बहुत ही गुणकारी वस्तु है। श्वास नलिका के संकोच विकास को कम करने के लिये यह बहुत उपयोगी होता है। दमा, श्वास नलिका की सूजन, और विशेषकर कुक्कुर खांसी को कम करने के लिये इसका उपयोग किया जाता है। इससे खांसी की त्रास और घबराहट कम होती है और इस कार्य के लिये यह अफीम की अपेक्षा बहुत श्रेष्ठ औषधि है। अफीम से खांसी का त्रास जरूर कम होता है। मगर उससे श्वासोच्छ्वास के केन्द्र स्थान में बहुत अशक्तता पैदा हो जाती है और कफ पड़ना कम हो जाता है। मगर बेलेडोना से श्वासोच्छ्वास के केन्द्र स्थान को उत्तेजना मिलती है उसकी शक्ति बढ़ती है और खांसी का त्रास कम होने पर भी कफ पड़ने में कमी नहीं होती। कफ रोगों में जब कफ अधिक बढ़ गया हो खांसने की शक्ति कम गई हो और हृदय अशक्त हो गया हो उस समय इस औषधि को देना बहुत लाभदायक होता है।

बेलेडोना के प्रयोग से शरीर में पैदा होने वाले द्रव तत्वों की कमी हो जाती है। गरोदर रोग में में व कुछ मस्तिष्क सम्बन्धी रोगों में जब लार बहुत छूटती है तब इसको देते हैं। ज्वर में अथवा क्षय रोग में जब पसीना बहुत होता है तब उसको बन्द करने के लिये बेलेडोना को अकेले अथवा जस्त भस्म के साथ देने से पसीना छूटना बन्द हो जाता है। दूध बन्द करने के लिये अथवा दूध से उत्पन्न हुई स्तनों की सूजन को दूर करने के लिये यह बहुत उत्तम औषधि है। आमाशय के अन्दर जब अम्लरस अधिक पैदा होकर पाचन क्रिया में गड़बड़ी पैदा करता है तब बेलेडोना का उपयोग करने से लाभ होता है।

आंतों के रोगों में भी बेलेडोना का कभी २ उपयोग किया जाता है। इससे आंतों की क्रिया शक्ति बढ़ती है। मरोड़ी की कमी होती है, उदर शूल बन्द होता है और कब्जियत नहीं होती अतिसार में कफ को कम करने के लिये इसको देते हैं। पुरानी कब्जियत को मिटाने के लिये इसको एलुए के साथ देते हैं। जिससे मल विसर्जन करने वाली आंतों को उत्तेजना मिलती है।

बेलेडोना में रहने वाले तत्व पेशाब के मार्ग से बाहर निकलते हैं। बाहर निकलते समय ये पेशाब की तादाद को बढ़ा देते हैं। जिससे मूत्र मार्ग की वेदना और सकोच विकास की कमी होती है। फिर भी सिर्फ मूत्रल औषधि की तरह इसका उपयोग नहीं किया जाता। मूत्रेंद्रिय की पीड़ा, स्वप्न दोष, मूत्राघात, नींद में मूत्र होना, वस्ति शोथ, कफ प्रमेह, गर्भाशय की पीड़ा, इत्यादि रोगों में बेलेडोना का भीतरी और बाहरी दोनों प्रकार से प्रयोग किया जाता है।

बेलेडोना और मस्तिष्क रोग

मस्तिष्क के ऊपर बेलेडोना की अवसादक क्रिया होती है। इसलिये जिन रोगों में मस्तिष्क की उत्तेजना को कम करके उसको शांत करने की आवश्यकता होती है उसमें इसका प्रयोग किया जाता है।

ज्वर के अन्दर वायु कुपित होकर सन्निपात से लक्षण हो जाते हैं तब इसका प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त उन्माद, शराब खोरी से होने वाली अस्वस्थता कपवात, और आधा शीशी रोग में भी इसका कभी २ उपयोग होता है। अफीम के विष को उतारने के लिये भी वेलेडोना का प्रयोग होता है।

वेलेडोना के बाह्य प्रयोग

अतः प्रयोग की तरह बाह्य प्रयोग में भी वेलेडोना एक प्रभावशाली वस्तु है। इससे तैय्यार किया हुआ प्लास्टर, फोड़े फुन्सी, गठान, कंठमाला की गठाने, दूध की वजह से हुई स्तनों की सूजन, सधियों की सूजन, इत्यादि रोगों पर लगाने से पीब की कमी हो जाती है अथवा कभी २ पीब पैदा ही नहीं होता। पीब और रक्त को प्रतिबन्ध करने का इसका धर्म बहुत उत्तम है। आमवात, सधियों की सूजन, वातरक्त, शिराओं की सूजन, इत्यादि रोगों में वेलेडोना प्लास्टर लगाने से यह सूजन को कम कर देता है और उसकी वेदना को भी रोक देता है। सूखे चर्म रोगों में इसका लेप करने से खुजली की कमी हो जाती है।

रासायनिक विश्लेषण— वेलेडोना के ताज़ा पत्तों में एट्रोपीन औ हॉयोसायमीन नामक दो प्रकार के जहरीले द्रव्य पाये जाते हैं। मगर पत्ते सूख जाने पर उसमें एक ही विषैला द्रव्य रह जाता है और दूसरा बहुत अंश में नष्ट हो जाता है। इसकी छोटी २ जड़ों में सिर्फ एट्रोपीन ही रहता है और पुरानी जड़ों में एट्रोपीन के साथ हायोसायमीन भी बहुत थोड़ी मात्रा में रहता है। इसमें पाया जाने वाला एट्रोपीन धतूरे में पाये जाने वाले विषैले द्रव्य धतूरीन के समान ही होता है। एक वर्ष के पौधे की जड़ में ४ प्रतिशत और २ वर्ष के पौधे की जड में ४५ प्रतिशत विष रहता है।

वेलेडोना की प्रतिक्रिया— वेलेडोना को अधिक मात्रा में खाने से उसके विषैले असर मनुष्य शरीर में पैदा होते हैं जिस से गले में खुश्की आती है, आवाज बैठ जाती है, आंखों की पुतलियां फैल जाती हैं, दृष्टि कमजोर हो जाती है, आदमी बकने लगता है और अन्त में वह बेहोश हो जाता है। इसके विष को दूर करने के लिये वही उपाय करना चाहिये जो धतूरे के विष को उतारने के लिये किये जाते हैं।

मात्रा— सूखे पत्तो के चूर्ण की पाव रत्ती से आधी रत्ती तक।

—— :o:——

बेर

नामः —

संस्कृत— बदरी, अजाप्रिया, बालेष्टा दीर्घबीजा; द्विपर्णी, कटकी, राजबद्री, फलाशयशिरा, सूक्ष्म पत्रिका, शृगालकोली, इत्यादि। हिन्दी— बैर, बेर, बेरी। बगाल— बोगरी, । बाँबे— बोर, बोरड़ी। गुजराती— बेर, बोर, बोरड़ी। मराठी— बेर, बेरा, मोर, बोर, बोरा। काठियावाड— बोरड़ी, । तामील — अड्डीडारम, वेदारी। तेलगू— बद्रामू, बद्री, गगेरनु। उर्दू— बेर। अरबी— उन्नाब हिन्दी, नाबिग।

फ़ारसी—कनार, नाबिक। इंग्लिश—Indian Cherry, Indian Jujube। लेटिन—Zizyphus Jujuba (ज़िज़ीफ़स जुजुबा)।

वर्णन—

यह एक मध्यम आकार का कांटेदार वृक्ष होता है। इसके पत्ते गोल, अंडाकार और २ से लेकर ६·३ सेंटिमीटर तक लंबे और २·५ से लेकर ५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं इसकी छाल कालापन लिये हुए भूरे रंग की, खुरदरी और ऊबड़ खाबड़ होती है। इसकी शाखाओं पर बहुत तेज कांटे होते हैं। इसका फल गोल और अण्डाकृति होता है। शुरू में हरा, आधा पकने पर पीला और पूरा पकने पर लाल हो जाता है। बनारस के समीप रामनगर का बेर हिन्दुस्तान में सबसे अच्छा होता है। यह वृक्ष हिन्दुस्तान में सब दूर पैदा होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिकमत से बेर की जड़ कड़वी और ठंडी होती है। यह कफ, पित्त विकार और मस्तकशूल में लाभदायक होती है। इसकी छाल बाल तोड़ और स्फोटक व्रण को अच्छा करती है और रक्तातिसार तथा प्रवाहिका में लाभ पहुंचाती है। इसके पत्ते कड़वे और शीतल होते हैं। ये कफ, पित्त और अतिसार को दूर करते हैं। ये ज्वर नाशक और शरीर के मोटेपन को दूर करने वाले होते हैं। इसके पके हुए फल (सौवीर बेर) ठंडे, पचने में कठिन, कामोद्दीपक, पौष्टिक, मृदुविरेचक ओज बढ़ाने वाले और पित्त नाशक होते हैं। ये शरीर की दाह, प्यास, वमन, रक्त रोग तथा क्षयरोग में लाभ दायक होते हैं।

इसकी छोटी जाति (कोलबेर) खट्टी, स्वादिष्ट, मृदुविरेचक, वात और कफ को दूर करने वाली तथा शरीर में जलन पैदा करने वाली होती हैं।

इसकी और सबसे छोटी जाति (करकंधु) खट्टी, कसैली, मीठी, कड़वी, तेल युक्त, पचने में भारी और वात तथा पित्त को दूर करने वाली होती है। इसका कच्चा फल वात को दूर करता है और कफ को पैदा करता है। इसका सूखा फल मृदुविरेचक, रक्त को साफ करने वाला और प्यास को दूर करने वाला होता है।

इसके बीज कसैले, कुछ मीठे, पौष्टिक, कामोद्दीपक, नेत्र रोगों को दूर करने वाले और कफ, दमा, प्यास, वातकी वमन, शरीर की दाह, पित्त और श्वेत प्रदर में लाभ पहुँचाने वाले होते हैं।

बेर की मगज कसैली, मधुर, वीर्य वर्धक, कामोद्दीपक, तथा खांसी, श्वास, वात, वमन, तृषा-दाह और पित्त को दूर करती है।

बेर के पत्तों का लेप ज्वर और दाह को दूर करता है। बेर की छाल फोड़े को दूर करती है तथा बेर की गुठली की मगज नेत्र की पीड़ा को दूर करती है।

यूनानीमत—यूनानीमत से बेर की जड़ और छाल पौष्टिक होती है। इसके पत्ते कृमिनाशक,

मुखशोथ को दूर करने वाले, मसूडे से बहने वाले खून को रोकने वाले, जखम और उपदंश जनित व्रणों को भरने वाले, दमे को दूर करने वाले और यकृत की शिकायतों में लाभ दायक होते हैं। इसके फूलों से १ उत्तम अजन तैयार किया जाता है। जो नेत्र रोगों मे बड़ा लाभ दायक होता है। इस का कच्चा फल प्यास को बढाता है। यह कफ और पित्त को कम करता है। यह पित्तविकार और कफ के गिरने को कम करता है। इसका पका हुआ फल मीठा, खट्टा और पचने में भारी होता है। यह बड़ी मात्रा में अतिसार और प्रवाहिका रोग को पैदा कर देता है। ज्वर, जखम और व्रणों यह बहुत उपयोगी है। इसके बीज सकोचक, पौष्टिक हृदय तथा मस्तिष्क को शक्ति देने वाले और प्यास को दूर करने वाले होते हैं। इसके फल छाती के रोगों को दूर करने वाले और रक्तश्रावरोधक होते हैं। ये रक्त को शुद्ध करने के लिये दिये जाते हैं। इसकी छाल प्रवाहिका अतिसार की एक औषधि मानी जाती है। इसकी जड़ काढे के रूप में ज्वर को दूर करने के लिये दी जाती है। इसकी जड़ का चूर्ण व्रण और पुराने जख्मों को दूर करने के लिये काम में लिया जाता है। इसके पत्ते प्लास्टर के रूप में पथरी को दूर करने के काम में लिये जाते हैं।

इसके नवीन पत्तों को गूलर के पत्तों के साथ कुचल कर बिच्छू के विष पर लगाया जाता है।

कबोडीया में इसकी छाल एक सकोचक पदार्थ की तरह मसूड़ों की सूजन और रक्तातिसार में दी जाती है। इसके पत्ते नेत्र रोगों में उपयोग में लिये जाते हैं। और ज्वर नाशक स्नान और लोशन्स में ये डाले जाते हैं।

ईव्हर्स ने सन १८७५ के ऑक्टोबर मास के इंडियन मेडिकल गजट में लिखा था कि मैंने बेर की जड़ को एक ज्वर नाशक पदार्थ की तरह उपयोग में लिया। मगर इसका असर बहुत ही मदगति से हुआ। १७ बीमारों पर इसकी जड़ के क्वाथ से उपचार करना प्रारभ किया गया। मगर ७-८ दिन तक लगातार देने पर भी यह औषधि ज्वर के सामयिक आक्रमण को न रोक सकी। मैं खयाल करता हू कि इस औषधि में पार्यायिक ज्वरों को निवारण करने वाले तत्वों की अपेक्षा पौष्टिक तत्व ही अधिक रहते हैं।

उपयोगः—

पित्त विकार—बेरकी गुठली की मगज का चूर्ण खिलाने से पित्त सम्बन्धी रोग मिटते हैं।

जी मिचलाना—बेर की मगज को लोंग के साथ मिश्री की चाशनी में मिलाकर चटाने से खाली मतली और जी का मिचलाना मिटता है।

ज्वर की तृषा - ज्वर में पित्त की तृषा मिटाने के लिये इसकी मगज और मुलैठी का चूर्ण करके थोड़ा २ मुह में डालते रहना चाहिये।

पित्त ज्वर—धूप में सुखाये हुए बेर और बेर की जड़ को पानी में औटाकर उस पानी को पिलाने से पित्त ज्वर में लाभ होता है।

अतिसार—इसकी छाल का काढ़ा बनाकर पिलाने से अतिसार मिटता है। ज्वर मिटाने के लिये भी इसकी छाल का काढ़ा पिलाना चाहिये।

प्रलाप—ब्राह्मी के साथ इसकी जड़ की छाल का क्वाथ बनाकर पिलाने से प्रलाप मिटता है।

क्षत और फोड़े—पुराने क्षत और फोड़ों पर इसकी छाल का चूर्ण भुरभुराने से लाभ होता है।

मूत्र पीड़ा—इसके पत्तों को पीसकर पेड़ू पर लगाने से पेशाब में होने वाली जलन और पीड़ा दूर हो जाती है।

बिच्छू का विष—गूलर और बेर के कोमल पत्तों को पीसकर लेप करने से बिच्छू का विष उतर जाता है।

दुष्ट व्रण—कारबंकल, विद्रधि और दूसरे फोड़ों को जल्दी पकाने के लिये बेर के कोमल पत्ते और कोमल डालियों को पीसकर गरम करके लेप करना चाहिये।

मुंह के छाले—बेर की और बबूल की जड़ की छाल का हिमनिर्यास या क्वाथ बनाकर उससे कुल्ले करने से उपदंश या रस कपूर की वजह से अथवा और किसी भी वजह से होने वाले मुंह के छाले मिट जाते हैं।

नकसीर—बेरके पत्तों को पीसकर कनपटी पर लेप करने से नक्सीर बंद होती है।

स्वरभंग—बेर के पत्तों की लुग्दी में सैंधा निमक मिलाकर उस लुग्दी को घी में तलकर खिलाने से स्वर भंग और श्वास तथा खांसी मिटती है।

कुक्कुर खांसी—बेर के पत्तों पर मैनसिल का लेप करके उनको धूप में सुखा लेना चाहिये। फिर उनको दूध में भिगोकर चिलम में रखकर उनका धूम्रपान करने से खांसी में लाभ होता है।

नासूर—बेर के पत्ते और नीम के पत्तों को पीसकर नासूर में भरने से नासूर मिट जाता है।

वीर्य की कमजोरी—बेर की गुठली की मगज को गुड़ के साथ मिलाकर खाने से वीर्य की कमजोरी मिटती है और वीर्य पुष्ट होता है।

अग्निदग्ध—इसकी कोमल कोंपलों को दही के साथ पीसकर कई बार लगाने से अग्निजले का दाग मिटता है।

मसूरिका—बेर की गुठली के छिलके को पीसकर गुड़ में मिलाकर खाने से सब प्रकार की मसूरिका पक जाती है।

———:०:———

बेंत

इस वनस्पति का वर्णन दीर्घपत्रक के नाम से इस ग्रंथ के पांचवे भाग में पृष्ठ १२७६ पर दिया गया है।

———०———

बौरीफल

नाम—

नेपाल—बौरीफल, छलेगाछ। आसाम—गेंडेलीपेमा, बोसनिया पेमा। लेटिन—Dysoxy-

lum Hamiltonii, Guarea Alliaria (डिसोक्सिलम हेमिल्टोनी, गोरिया एलियेरिया)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। इसके नवीन पत्ते मखमली होते हैं। इसके पत्ते ४० से लेकर ५० सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल हरापन लिये हुए सफेद होते हैं। इनकी गंध बहुत तीव्र होती है। यह वनस्पति सिकिम, आसाम और सिलहट में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

लखीमपुर आसाम में इसकी जड़ उदरशूल को दूर करने के लिये पिलाई जाती है।

——:o:——

बोकड़ी

नाम—

संस्कृत—अजान्त्री, छगलांत्री, मेषांत्री, वृषपत्रिका। हिन्दी—बोकड़ी। गुजराती—पुंगलवेल। मराठी—पुंगली। बंगाल—छागल बेटें। तेलगू—गाड़िद गड़पर। लेटिन—Convolvulus Argentens (कनवोलवलस अर्जेंटन्स)।

वर्णन—

यह वनस्पति विशेष कर बंगाल में पैदा होती है। इसका पौधा गुच्छे के समान होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके सेवन से पुरुष का वीर्य बढ़ता है और स्त्रियों का वंध्यत्व नष्ट होता है। यह चरपरी होती है। इसको खाने से खाँसी में लाभ होता है।

——:o:——

भंडा

नाम—

पंजाब—भड, भांड, भंडा। लेटिन—Geranium Nepalense (जेरेनियम नेपलेंस)।

वर्णन—

यह वनस्पति हिमालय के मध्यवर्त्ती भाग में तथा पारसनाथ, बिहार, नीलगिरी और सीलोन में पैदा होती है। यह वर्षजीवी और रुएंदार वनस्पति होती है। इसकी जड़ें बहुत लाल रङ्ग की होती हैं और वे ही औषधि प्रयोग में काम में आती हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

यह पौधा संकोचक और मूत्रल होता है। पंजाब में यह गुर्दे की कुछ खास बीमारियों में काम में लिया जाता है।

——:o:——

भद्रक

नाम—

बम्बई- भद्रक। मराठी—भद्रक, भद्राक्ष। तामील—वेली मुट्टागाम। लेटिन—Scaevola Frutescens (स्केइव्होला फ्रूटेसीन्स)।

वर्णन—

यह एक झाड़ीनुमा पौधा होता है। इस पौधे की ऊँचाई १ से लेकर ३ मीटर तक की होती है। इसके पत्ते ११.५ से लेकर २० सेंटिमीटर तक लम्बे और ३.८ से लेकर ६ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इन पत्तों के पीछे की तरफ सफेद रंग का रुआ होता है। इसके फूल सफेद होते हैं। यह वनस्पति भारत वर्ष के समुद्री किनारों पर पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके छोटे २ फलों का रस आंखों का धुँधलापन नष्ट करने के लिये और दृष्टि की मंदता को दूर करने के लिये आंखों में बूंद २ करके टपकाया जाता है।

—·०·—

भद्रदन्ती

नाम—

संस्कृत—भद्रदन्ती। अंग्रेजी—Small Physic Nut (स्माल फिजिक नट)। तामील—कट्टनेरवेल्लम। लेटिन Jatropha Multifida (जट्रोफा मल्टिफिडा)।

वर्णन—

यह वनस्पति दन्ती के वर्ग की है यह उससे कुछ छोटी होती है। इसका पौधा बहुत सुन्दर, झाड़ीनुमा और बगीचों में लगाने के काबिल होता है। बहुत से बगीचों में यह लगाई जाती है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत से इसका फल चरपरा गरम और विरेचक होता है। यह बवासीर, जखम, तिल्ली की वृद्धि और चर्म रोगों में उपयोगी होता है। इसके बीज कुछ मोटापन लिये हुये तेलयुक्त, विरेचक, कामोद्दीपक, पौष्टिक, और मोटापन को दूर करने वाले होते हैं। ये कफ और पित्त को बढ़ाने वाले, वामक और दाह पैदा करने वाले होते हैं। इसके बीज जोरदार विरेचक होते हैं।

कम्बोडिया में इसके पत्ते, इसका दूधिया रस और इसके बीजों का तेल औषधि के उपयोग में लिया जाता है। इसके पत्ते गीली खुजली पर उपयोग में लिये जाते हैं। इसका दूधिया रस जखम और व्रणों पर लगाने के काम में लिया जाता है और इसके बीजों का तेल गर्भस्रावक औषधि की तरह भीतरी और बाहरी प्रयोग में लिया जाता है।

—:०:—

भसमकंद

नाम—

मध्यप्रान्त—भसमकन्द। बम्बई—लोथ। लेटिन—Sauromatum Guttatum (सोरोमेटम गटाटम)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति का कन्द होता है। इसका पौधा पंजाब, पश्चिमी हिमालय, छोटा नागपुर, बांबे प्रेसिडेंसी और गङ्गा के मैदानों में पैदा होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके कन्द का पुल्टिस बनाकर त्वचा को उत्तेजना देने के लिये बांधा जाता है।

——:o:——

भद्रवल्ली

नाम—

संस्कृत—भद्रवल्ली। बंगाल—छापरमली। मद्रास—अर्वीमल्लिका। लेटिन—Echites Dichotoma (एचिटस डिकोटोमा)।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति का उपयोग गलित कुष्ट में लाभदायक है।

——:o:——

भटवासू

नाम—

संस्कृत- निष्पाव, राजशिंबी, शिंबी, श्वेतशिंबिका, वल्लक। हिन्दी—भटवासू, भेटरासू, बर्बोटी, राजशिंबी, सिम। गुजराती—ओलिया, वाल। मराठी—वाल, अनवेरा, पांढरेपावटा। बङ्गाल—भेटारसू, बर्बोटी, वनशिम, गचीशिम, घियासिम, लबलब, राजशिंबी। बम्बई—पावटी, वालपापड़ी। पंजाब—कालालोबिया, कटजंग। तामील—अवेराई, मोरचाई। तेलगू—अलसंदा, अनपाया। अंग्रेजी—Hyacinth Bean (हेकिंथबीन)। लेटिन—Dolichos Lablab (डोलीकस लबलब)।

वर्णन—

यह एक प्रकार का धान्य होता है। इसका पौधा वर्षजीवी होता है। यह दाल के वर्ग का एक अन्न होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत से भटवासू मधुर, रूखा, पाक में खट्टा, भारी, वात पैदा करने वाला, कुछ

दस्तावर, कसैला, स्तनों में दूध पैदा करने वाला, दाहजनक, गरम तथा विष, कफ, सूजन और वीर्य, को कम करने वाला होता है। यह रक्तपित्त पेदा करता है।

राजनिघण्टु के मतानुसार भटवास मधुर, रूखा, पचने में खट्टा, भारी, गरम, सूजन पैदा करने वाला, पौष्टिक, कामोद्दीपक, कसैला तथा विष और दृष्टि को हरने वाला होता है।

इस अन्न में २४ प्रतिशत मांसवर्धक द्रव्य, ५.७ प्रतिशत आटा, ८॥ प्रतिशत तेल और तीन प्रतिशत राख रहती है।

चायना में इसके बीज पौष्टिक और वादी को दूर करने वाले माने जाते हैं।

इण्डोचायना में इसके पत्ते विषनाशक, ऋतुस्राव नियामक और कॉलिक उदरशूल को दूर करने वाले माने जाते हैं। इसके बीज ज्वरनाशक, अग्निवर्धक और आक्षेप निवारक माने जाते हैं।

——.०:——

भांगरा

नाम—

संस्कृत—भृंगराज, भृंग, मेकराज, भृंगरज, कुन्तलवर्धन, केशरंजन, पितृप्रिय, रंगक, अंगारक, मार्कव, इत्यादि। हिन्दी—भांगरा, भंगरा। मराठी—माका, बागरा, भृंगराज। बङ्गाल—किशोरी, केशराज, केहटी, भीमराज। गुजराती—भांगरो, कालोभागरो, कालूगथी। मयाल—लाल केसरी। सिन्ध—टिक। तामील—केकेशी, केकी खिलाइ, कृष्णलंगानि। तेलगू—गलागेरा, गुंटकलगरा। उर्दू—भांगरा। लेटिन—Eclipta Prostrata (एकलिप्टा प्रोस्ट्रेटा)। Wedelia Calndulacea (वेडेलिया केलेंडयुलेसीइ)।

वर्णन—

भांगरे के पौधे बरसात के दिनों में सब दूर पैदा होते हैं और तर जमीनों में ये बारहों मास रहते हैं। इसके पौधे आधे से लेकर दो फीट तक लम्बे होते हैं। कुछ पौधे तो सीधे खडे रहते हैं और बाकी के जमीन पर फैले हुए रहते हैं। इसकी शाखाएं हरी, चमकीली और कुछ काले रंग की छाया लिये हुए होती हैं। इन शाखाओं के ऊपर सफेद रंग के रुएं रहते हैं। इसके पत्ते १ से लेकर ३ इञ्च तक लम्बे और आधे से लेकर १ इञ्च तक चौडे होते हैं। इनको मसलने से इनमें से कुछ कालापन लिये हुए हरे रंग का रस निकलता है। जो थोडे ही समय में काला पड जाता है। इसके फूल सफेद और फल काले होते हैं।

आयुर्वेदिक निघण्टुओं में भांगरे की सफेद, पीली और काली ये तीन जातियाँ मानी हैं। सफेद जाति को भृंगराज, पीली जाति को पीत भृंगराज और काली जाति को नीलभृंगराज कहा गया है। लोगों का खयाल है कि काली जाति वाले भांगरे से धातुओं से सोना बनाने की क्रिया होती है और यह जाति बड़ी कठिनता से भाग्यशाली मनुष्यों को ही मिलती है। मगर आधुनिक वनस्पति शास्त्रियों का

खयाल है कि भांगरे की काली जाति होती ही नहीं सिर्फ सफेद फूल वाले भांगरे की सफेद पखड़ियां खिर जाने के बाद उसका नीला या काले रंग का जो हिस्सा रह जाता है उसी को लोग काले रंग का भांगरा समझते हैं। इसीलिये औषधि शास्त्र में अभी तक जहां भांगरे का वर्णन आता है वहां सफेद जाति का ही भँगरा काम में लिया जाता है।

गुण दोष और प्रभाव--

आयुर्वेदिक मत से भांगरे का पौधा कड़वा, गरम, धातु परिवर्तक, कृमिनाशक और विष नाशक होता है। यह बालों के सौंदर्य को बढ़ाने वाला, नेत्रों की ज्योति को तेज करने वाला और दांतों को मज़बूत करने वाला होता है। यह सूजन, हार्निया (आंत्रवृद्धि), नेत्र रोग, कफ, वात, खांसी, दमा, श्वेत कुष्ट, पांडुरोग, हृदय रोग, चर्म रोग, खुजली, रतौंधी, उपदश और विष को नष्ट करने वाला होता है। गर्भपात और गर्भस्राव को रोकने के लिये तथा प्रसूति के पश्चात् गर्भाशय में होने वाली वेदना को रोकने के लिये इसका उपयोग किया जाता है।

यूनानी मत– यूनानी मत से इसका पौधा कड़वा और तीखा होता है। यह बालों के रंग को बढ़ाता है। नेत्रों की ज्योति को तेज करता है। पौष्टिक, कफ निस्सारक, अग्निवर्धक, और ज्वरनाशक होता है। तिल्ली के रोग, दंत शूल, मस्तक शूल, ज्वर, यकृतशूल, आधा शीशी और मुख शोथ में यह बहुत उपयोगी होता है। इसके सेवन से सिर के चक्कर दूर हो जाते हैं।

भांगरे में अँग्रेजी औषधि टेरेक्सेकम की तरह पित्त को शुद्ध करने, बालों को बढाने और दीर्घायु करने के गुण प्रधान रूप से रहते हैं।

भांगरे का प्रधान उपयोग पौष्टिक, यकृत की बीमारी और तिल्ली की वृद्धि को दूर करने तथा भिन्न २ प्रकार के पुराने चर्म रोगों को दूर करने के लिये किया जाता है। यह बात आम तौर से प्रचलित और मानी हुई समझी जाती है कि इस बनस्पति का भीतरी और बाहरी उपयोग करने से बाल लम्बे, मुलायम और भँवरे के समान काले रहते हैं।

बम्बई में वहां के रहने वाले लोग इस वनस्पति के रस को दूसरे सुगंधित द्रव्यों के साथ एक पौष्टिक, और बाधा नाशक वस्तु की तरह उपयोग में लेते हैं। नवजात शिशुओं का जुकाम दूर करने के लिये इसके रसकी दो बूँदे ८ बूंद शहद में मिलाकर चटाई जाती हैं।

इसका ताजा पौधा तिल के साथ पीसकर श्लीपद या हाथी पाँव को आराम करने के लिये उपयोग में लिया जाता है और इसका ताजा रस यकृत की विकृति और जलोदर रोग में लाभदायक समझा जाता है। इसका अधिक मात्रा में उपयोग करने से वह अपना वामक असर दिखलाता है। यह शीतल, शूलनाशक और शोषक गुणों से युक्त रहता है। इसको थोड़े तेल में मिलाकर सिर पर लेप करने से सिर दर्द दूर हो जाता है।

इसके पत्तों का रस एक चाय के चम्मच की मात्रा में देने से पीलिया और ज्वर में लाभ होता

है। इसकी जड़ को पेशाब की जलन दूर करने के उपयोग में लेते हैं।

कार्टर के मतानुसार इसके पत्तों के लेप की व्रण और छालों को अच्छा करने के लिये बहुत प्रशंसा है। इसकी जड़ को पेट की बीमारियों को दूर करने के लिये पेट के ऊपर बाँधते हैं। चायना में यह पौधा संकोचक माना जाता है और प्रसूति के बाद होने वाले रक्तश्राव और विटाल को रोकने के लिये और मसूड़ों को मजबूत करने के लिये इसका उपयोग किया जाता है। दंतशूल को मिटाने के लिये इसके पौधे को मसूड़ों पर रगड़ते हैं।

लारियूनियन में इसका पौधा दमे को दूर करने वाला और छाती के रोगों में लाभदायक माना जाता है। चर्म रोग और श्लीपद में इसका काढा बाहरी उपचार के काम में लिया जाता है।

इण्डोचायना में इसका पौधा दमा और खांसी को दूर करने के लिये बहुत उपयोग में लिया जाता है। इसके पत्तों का चूर्ण प्रसूति के बाद होने वाले रक्त श्राव को रोकने के लिये तथा रक्त को शुद्ध करने के लिये उपयोग में लिया जाता है।

कोमान के मत से इसके पौधे की सफेद और पीली दो जातियाँ होती हैं। इसकी पीली जाति के पत्ते कुछ जाडे होते हैं जो कि कफ की वजह से पैदा हुए पीलिया को दूर करने के काम में लिये जाते हैं। इस रोग में इसके ताजा पत्तों को अच्छी तरह से धोकर कुछ काली मिरच के दानों के साथ पीसकर उनकी नीबू के बराबर गोली बनाकर बड़े सवेरे खट्टे दही या मट्ठे के साथ देते हैं। मैंने इस औषधि को इस बीमारी को दूर करने के लिये बहुत ही उपयोगी पाया। इसको ५,६ दिन तक देने पर रोगी को बहुत लाभ दृष्टिगोचर होता है। जरूरत पड़ने पर इसकी क्रिया को ठीक तौर से चालू रखने के लिये कुछ जुलाब देने की भी जरूरत पड़ती है। शरीर के अन्दर इस वनस्पति की क्रिया पोडोफिलीन और टेरेक्सेकम की तरह होती है। इस औषधि का स्वरस विशेष रूप से औषधि के काम में लिया जाता है।

डाक्टर देसाई के मतानुसार भांगरा कड़वा, गरम, दीपन, पाचक, वातनाशक, मृदुविरेचक, मूत्रल, बलकारक, चर्म रोग नाशक, व्रणशोधक, व्रणरोपक, और कान्तिवर्धक होता है। आयुर्वेद में इसको रसायन और धातु परिवर्तक माना है और इस कथन में जरा भी अतिशयोक्ति नहीं है। इसकी प्रधान क्रिया यकृत के ऊपर होती है। इसके लेने से यकृत की विनिमय क्रिया सुधरती है। पित्त का सचालन व्यवस्थित रूप से होता है और आमाशय तथा पक्वाशय की पाचन क्रिया सुधरने से सारे शरीर में ओज और कान्ति की वृद्धि होती है। प्रतिदिन भांगरा खाने वाला मनुष्य बुड्ढे से जवान हो जाता है इस कथन में अतिशयोक्ति नहीं है। भांगरे का धर्म टेरेक्सम के समान अथवा उसकी अपेक्षा भी अधिक प्रभावशाली होता है। इसको बड़ी मात्रा में देने से यह वामक हो जाता है।

भांगरे का रस बिगड़ी हुई यकृत की क्रिया को सुधारने के लिये दिया जाता है। यकृत की क्रिया सुधारने पर कामला अपने आप मिट जाता है। यकृत वृद्धि और तिल्ली की वृद्धि कम हो जाती है। बवासीर, उदर सम्बन्धी रोग और अग्निमांद्य भी इससे मिट जाते हैं। कामला, बवासीर और पेट के रोग

विशेष करके यकृत की क्रिया पर ही अवलंबित रहते हैं। इसलिये इन रोगों को मिटाने के लिये यकृत की क्रिया को शुद्ध करने वाली औषधियाँ ही देनी चाहिये और इस कार्य के लिये भांगरा बहुत उपयुक्त है। यकृत की क्रिया की बिगड़ने पर शरीर में एक प्रकार का विष जिसको आयुर्वेद में आम कहते हैं, जमा हो जाता है और इसकी वजह से आमवात, चक्कर आना, सिर का दुखना, दृष्टि मांद्य और तरह २ के चर्म रोग पैदा हो जाते हैं। इन सब रोगों में भांगरे को देने से बहुत लाभ होता है। क्योंकि इसका सीधा असर यकृत के ऊपर होता है और ये सब रोग यकृत की खराबी से ही पैदा होते हैं। सब प्रकार के प्राचीन चर्म रोगों में भांगरे का भीतरी और बाहरी प्रयोग करने से बड़ा लाभ होता है। समय आने के पूर्व ही जिन लोगों के बाल सफेद हो जाते हैं, उन लोगों को भांगरे का सेवन कराने से और उनके बालों पर भांगरे का लेप करने से उनके बाल काले, लम्बे और सुन्दर हो जाते हैं।

मद्रास में बिच्छू के डंक पर भांगरे का लेप किया जाता है और इसको पिलाया भी जाता है। अग्नि से जले हुए व्रण के ऊपर भांगरा, मरवा और मेंहदी के पत्तों को पीसकर लगाने से जलन शान्त हो जाती है और नवीन आने वाली चमड़ी शरीर के रङ्ग की ही आती हैं।

भांगरे के रस में हीराकसी को मिला कर लेप करने से बाल काले हो जाते हैं।

भांगरा और बिच्छू का विष—योग रत्नाकरके कर्ता लिखते हैं कि बिच्छू के डंक पर इसके पत्तों को कुचलकर लेप करने से और इसके रस को नाक में टपकाने से बिच्छू का विष उतर जाता है। इसी का समर्थन करते हुए डॉक्टर नॉड करनी लिखते हैं कि भांगरे के पत्ते बिच्छू के विष को दूर करने के लिये एक चमत्कारिक इलाज है। इनको उपयोग में लेने का तरीका यह है कि इसके पत्तों को पीसकर बिच्छू के डंक की वजह से जितने भाग में सूजन आ गया हो अथवा जहा तक वेदना फैल गई हो वहाँ तक खूब अच्छी तरह से मसलना चाहिये। इस प्रकार मसलने से आस पास के सब भाग में से वेदना निकल कर डंक पर केंद्रीभूत हो जाती है। उसके बाद डंक पर इस औषधि को खूब अच्छी तरह मसलने से और फिर इसकी लुग्दी को डंक पर बाँधने से डंक से भी वेदना निकल जाती है।

केस और महस्कर का कथन है कि हमने बिच्छू के डंक पर इसके पत्तों को पीसकर लेप किया और पुल्टिस के रूप में भी बांधा मगर उससे कोई लाभ नहीं हुआ।

मात्रा—इसके स्वरस की मात्रा १ ड्राम से २ ड्राम तक की होती है।

उपयोग—

उपदंश के व्रण—भांगरे के रस से अथवा भांगरे और जूही के पत्तों के रस को मिलाकर उस रस से उपदंश के व्रणों को धोने से बड़ा लाभ होता है।

आधा शीशी—भांगरे का रस और बकरी का दूध समान भाग लेकर उसको गरम करके नाक में टपकाने से और भांगरे के रस में काली मिरच मिलाकर सिर पर लेप करने से आधा शीशी मिट जाती है।

नवजात शिशु का जुकाम—तत्काल के पैदा हुए नवजात शिशु को अगर कफ का जोर हो जाय और उसके गले में कफ खड़ २ बोलने लगे तो भांगरे के स्वरस की दो बूँद निकालकर उसमें ८ बूँद शहद मिलाकर उस मिश्रण को ऊँगली के द्वारा बच्चों के गले में पहुचा देने पर सब कफ निकल पड़ता है और बच्चों की चेतना जाग्रत हो जाती है।

धनुर्वात—भांगरे का रस १ तोला, तूंबी का रस ३ माशे, निर्गुंडी का रस १ तोला और अगस्त्य के पत्तों का रस १ तोला इन सब रसों को मिलाकर इन सब रसों से चौगुना नारियल का स्वरस मिलाकर उस सब रस में थोड़े से चावल डालकर खीर बना लेना चाहिये। इस खीर में थोड़ा सा गुड़ मिलाकर प्रतिदिन दोनों टाइम खाने से धनुर्वात में लाभ होता है।

कामला—भाँगरे के रस में काली मिरच मिलाकर बड़े सवेरे दही के साथ लेने से ७ दिन में कामला आराम होता है।

बच्चों का डिब्बा रोग—भांगरे के रस मे घी मिलाकर ३ दिन तक देने से बच्चों का डिब्बा रोग आराम होता है।

पारे का विष—भाँगरे का रस, अगस्त्य का रस और शोरा मट्ठे में मिलाकर उस मट्ठे को ४ तोले की मात्रा में खिलाने से शरीर के अन्दर फैला हुआ पारे का जहर मूत्र मार्ग से निकल जाता है।

अग्नि दग्ध—अग्नि से जले हुए स्थान पर दिन में दो बार भाँगरे के पत्तों और तुलसी के पत्तों का रस निकाल कर लगाने से जलन शान्त हो जाती है और शरीर पर किसी प्रकार का दाग नहीं छूटता।

मेद रोग—प्रति दिन रात को सोते समय भाँगरे का स्वरस शरीर पर मसल कर रमा देना चाहिये। इस प्रकार ६ महीने तक लगातार करते रहने से शरीर की बढ़ी हुई चर्बी और उस चर्बी की वजह से जगह २ होने वाली गठानें दूर हो जाती हैं।

अग्नि मांद्य और पाण्डु रोग—भाँगरे के पौधे को जड़ समेत लाकर छाया में सुखाकर उसका चूर्ण करके उस चूर्ण में समान भाग त्रिफले का चूर्ण मिलाकर दोनों का जितना सम्मिलित वजन हो उतनी ही उसमें मिश्री मिला देनी चाहिये। इस चूर्ण में से ४ तोला चूर्ण उचित अनुपान के साथ खाने से पाण्डु रोग और मन्दाग्नि मिटती है।

पेट के कृमि- इसके पत्तों का रस गुदा में ३-४ बार लगाने से पेट के कृमि नष्ट हो जाते हैं।

कुष्ट— भाँगरे के स्वरस और गुञ्जा की लुगदी से सिद्ध किये हुए तेल की मालिश करने से कंडू, कुष्ट, और मस्तक पीड़ा मिटती है।

विसर्प रोग—भांगरे की जड़ और हल्दी का लगातार लेप करने से विसर्प रोग मिटता है।

गज चर्म—इसके ताजा पौधे की लुगदी को तिल के तेल में औटाकर उस तेल की गज चर्म के ऊपर मालिश करने से लाभ होता है।

बनावटें—

भृंगराज तेल—भाँगरे का रस ८ सेर, त्रिफले का काढ़ा ४ सेर, तिल का तेल ४ सेर, गाय का दूध ४ सेर, कमल की नाल, कमल की जड़, मजीठ, सुरमा, नील, कमल गट्टा, नागर मोथा, पुनर्नवा की जड़, हरड़, बहेड़ा आँवला, भांगरे की जड़, चिरमी के बीज, नाग केशर, आम की गुठली, अनन्त मूल, कूट, मुलैठी, कटसरैया, देवदार, पदमाक, लाल चन्दन, तमालपत्र, मेंहदी के बीज, बरियारा, शतावरी, बड़ के अंकुर, गौलोचन, नीलाथूथा, इन्द्रायण के बीज, केवड़ा, जटामांसी, कमल के फूल, जासूद के फूल, बहेड़े के बीज, रासना की जड़, गेरू, दारू हलदी, रसोत, असगध, विदारी कन्द, डोड़ी, लाख, केले का कन्द, अगर, लोद और हाथी दांत की राख। इन सब चीजों को चार २ तोला लेकर पानी के साथ पीसकर लुगदी बनाकर एक लोहे की कढ़ाही में रख दें और उसी कढ़ाही में भांगरे का रस; त्रिफले का काढ़ा, गाय का दूध और तिल्ली का तेल भी भर दें और नीचे हलकी आंच लगा दें। जब औटते २ सब चीजें जल कर तेल मात्र शेष रह जाय तब उतार कर उसको छान लें।

इस तेल को प्रतिदिन सिर में लगाने से अकाल में सफेद हुए बाल फिर से काले हो जाते हैं। बालों की जड़ें मजबूत होकर बालों का गिरना बन्द होता है। बालों का रंग भँवरे के समान काला और चमकदार हो जाता है। बाल सघन हो जाते हैं। मस्तिष्क और आंखों की गरमी दूर हो जाती है। यहां तक कि सिरकी गंज भी समय आने पर मिट जाती है और नये बाल पैदा होने लगते हैं।

रस मंडूर—शुद्ध गंधक ८ तोला और शुद्ध पारा २ तोला लेकर खरल में डालकर कजली कर लें। फिर एक लोहे की कढ़ाही में उसको डालकर उसमें १६ तोला हरड़ का चूर्ण, ८ तोला मंडूर भस्म, और १२८ तोला भांगरे का स्वरस डालकर लोहे के दस्ते से घोटना चाहिये। घोटते २ जब रस का भाग सूख जाय तब उसे निकालकर कांच की बरनी में भर लेना चाहिये।

इस औषधि को १॥ माशे से २ माशे की मात्रा में प्रतिदिन सबेरे शाम १ तोला शहद और ६ माशे घी के साथ मिलाकर चाटने से और पथ्य में सिर्फ दूध और भात लेने से पित्त की शुद्धि होकर जठराग्नि प्रदीप्त हो जाती है और भोजन के पश्चात होने वाला उदर शूल, अम्लपित्त, खट्टी डकार, छाती की जलन, कामला तथा यकृत और तिल्ली की वृद्धि नष्ट हो जाती है।

भृंगराज रसायन—ताजे भाँगरे को पीसकर उसका निकाला हुआ स्वरस प्रतिदिन प्रातः काल एक तोला की मात्रा में पीने से और पथ्य में सिर्फ दूध पर ही रहने से १ महिने में शरीर निरोग हो जाता है। बल और कान्ति बढ़ती है तथा मनुष्य दीर्घायु होता है।

—:o:—

भांगरा सफेद (चित्ती फूल)

नाम—

हिन्दी—चीतो फूल, सफेद भांगरा। पंजाब—गोरखपानो, खराड़, सफेद भांगरा, तिद्रू। लेटिन—Heliotropium Strigosum (हेलियोट्रापियम स्ट्रिगोसम)।

वर्णन—

इस वनस्पति का नाम सफेद भांगरा है। मगर यह भांगरे के वर्ग की वनस्पति नहीं है। यह उससे भिन्न कोई दूसरे वर्ग की है। इसका पौधा बहुशाखी और छोटा होता है। यह वनस्पति विशेष रूप से पश्चिमी हिमालय में तथा साधारण तौर से सारे भारतवर्ष में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इसका पौधा मृदु विरेचक और मूत्रल होता है। इसका रस आंख की फुन्सी, मसूड़े के छाले और दूसरे व्रणों पर लगाने के काम में लिया जाता है। यह फोड़ों में पीब बढाने के लिये विशेष रूप से काम में लिया जाता है।

इसका पौधा जहरीले कीड़ों के डंक पर लगाने के काम में लिया जाता है। सर्प विष के उपचार में भी कभी २ इसका प्रयोग होता है।

इम्सयुनर के मतानुसार लासबेला में इसका पौधा कमर की बादी को दूर करने के उपयोग में लिया जाता है।

——:o:——

भारङ्गी

नाम—

संस्कृत—अंगारवल्लरी, भारगी, ब्राह्मणी, पदमा, भृगजा, दूर्वा, ब्राह्मणयष्टिका, गर्दभशाक, वान्तारि, वातारि, कासजित, कासघ्ना, इत्यादि। हिन्दी—भारंगी। बङ्गाल—बामनहाटी, भुइजाम। बम्बई—भारंग, भारंगी। गुजराती—भारंगी। मराठी—भारंगी। नेपाल—ग्रनदेखी, चूआ। बरमा—बेक्यो। तामील—अंगारवल्ली, सिरुदेकू, कांडुबारंगी। तेलगू—भारंगी, भ्रमरमारी। उर्दू—भारंगी। लेटिन—Clerodendron Serratum (क्लेरोडेंड्रोन सेरेटम)।

वर्णन—

यह छोटी जाति की झाड़ी हिमालय में तथा दक्षिण में विजगापट्टम में पैदा होती है। इसकी ऊँचाई १ से लेकर २॥ मीटर तक की होती है। जंगल जलने के उपरांत इस पौधे की डालियां फूटती हैं। इसकी डालियां करीब ४ इञ्च लम्बी होती हैं। इसके पत्ते ४ इञ्च लम्बे, २-३ इञ्च चौड़े तथा लंब गोल होते हैं। इनके ऊपर छींटे पड़े हुए रहते हैं। इसके पत्तों के पिछले हिस्से पर बारीक २ रुएँ रहते हैं। इसके फूल गुच्छों में आते हैं। ये फूल ४ पंखड़ियों के चमकदार और गहरे नीले रंग के होते हैं।

इसका फल पकने पर नारंगी रग का हो जाता है। इसकी जड़ औषधि प्रयोग में काम में ली जाती है। औषधि संग्रह के कर्ता ने इसकी एक छोटी बेल होना लिखा है।

अनुभूत चिकित्सा सागर में इसका वर्णन करते हुए लिखा है कि भारगी के पौधे हिमालय में, खासिया पहाड़ियों में तथा नीलगिरी, पश्चिमी घाट, दक्षिणी भारत और बरमा में होते हैं। इसके नीले फूल लगते हैं। इसके फल की मध्य रेखा चौथाई इञ्च की होती है। जब वह पक जाता है तब चमकदार काले रंग का हो जाता है। इसके पत्ते चिकने, एक ओर से गोल और दूसरी ओर से लम्बे होते हैं। ये एक २ सींकपर तीन २ और आमने सामने लगते हैं। इनकी किनारियां कटी हुई होती हैं। इस वनस्पति में किसी प्रकार की गंध या स्वाद नहीं होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से भारंगी रूखी, चरपरी, कड़वी, रुचिकारक, गरम, पाचक, हलकी, अग्नि को प्रदीप्त करने वाली, कसैली तथा रक्त गुल्म, सूजन, खांसी, श्वास, पीनस, ज्वर और वात को नष्ट करने वाली होती है।

राजनिघण्टु के मत से भारगी, चरपरी, कड़वी, गरम तथा खांसी, श्वास, सूजन, घाव, कृमि, दाह और ज्वर को दूर करती है।

भारगी की जड़ ज्वर और कफ प्रधान रोगों में दी जाती है। सरदी, गले की सूजन और कफ युक्त दमे में इसको सोंठ या बच के साथ देते हैं। अशक्त बच्चों के फुफ्फुस सम्बन्धी रोगों में इसको थोड़ी मात्रा में पिलाते हैं और इसका लेप छाती पर करते हैं। भारंगी की जड़ में थोड़ा सा उत्तेजक धर्म भी रहता है। ज्वर नाशक धर्म इसमें विशेष जोरदार नहीं होता। इसलिये इसको ज्वर के अन्दर अतीस के समान ज्वर नाशक औषधियों के साथ देना चाहिये। इसका कफ नाशक धर्म भी बहुत साधारण होता है। इसलिये कफ को नष्ट करने के लिये इसको काकड़ा सिंगी के साथ देना चाहिये। आमवात के अन्दर भी इस औषधि का उपयोग होता है।

रत्नागिरी के रहने वाले लोग इस वनस्पति को मलेरिया ज्वर में बहुत प्रभावशाली मानते हैं। वे इसकी जड़ को ज्वर और जुकाम सम्बन्धी विकृतियों को दूर करने के उपयोग में लेते हैं।

इसके पत्तों का तेल, मक्खन के साथ उबालकर एक लेप तैय्यार किया जाता है। जो मस्तक शूल और नेत्र रोगों में उपयोग में लिया जाता है। इसके बीजों को कुचलकर उनको मट्ठे में उबालकर पेट में के संचित मल को मुलायम करके निकाल देने के लिये काम में लेते हैं। जलोदर के अन्दर भी यह उपयोग में लिया जाता है।

कोमान के मतानुसार यह वनस्पति सधिवात, अम्ल पित्त, अग्निमांद्य और जुकाम की वजह से पैदा हुई फुफ्फुस की विकृति को मिटाने के लिये उपयोग में ली जाती है। इसकी जड़ का काढ़ा हमने

जुकाम और खांसी के कुछ बीमारों पर काम में लिया मगर उससे बहुत ही थोड़ा नहीं के बराबर लाभ हुआ।

सुश्रुत के मतानुसार इस वनस्पति के पत्ते साप और बिच्छू के विष को दूर करने के काम में आते हैं।

इस ग्रन्थ में भारंगी की २-३ जातियों का वर्णन किया जा रहा है। मगर यह खयाल किया जाता है कि आयुर्वेद में वर्णित असली भारगी यही है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह वनस्पति गरम और खुश्क होती है। यह सूजन को उतारती है। भूख बढानी है। कच्चे दोषों को पकाकर निकाल देती है। सूजन, खांसी, कफ के उपद्रव और कफ से होने वाले ज्वर को आराम करती है। सांस की तंगी को दूर करती है। योनि के दर्द और पेट के दर्द से होने वाले ज्वर को भी यह दूर करती है।

दर्पनाशक—इसका दर्पनाशक इमली का सत या इमली का निर्यास है।

मात्रा—इसकी जड़ के चूर्ण की मात्रा १॥ माशे से ३ माशे तक होती है।

उपयोग—

ज्वर और जुकाम—भारगी की जड़ का क्वाथ बनाकर पिलाने से ज्वर या जुकाम मिटता है।

नेत्र रोग—इसके पत्तों को तेल में औटाकर लगाने से आंख के पलकों की सूजन मिट जाती है। और गीड़ों का आना बन्द हो जाता है।

मतली—भारगी, सोंठ और धनिये को पानी में औटाकर पिलाने से खाली मतली मिटती है।

जलोदर—भारंगी को मट्ठे में औटाकर पिलाने से जलोदर में लाभ होता है।

दमा और खांसी—भारगी और सोंठ को समान भाग लेकर अदरक के साथ चटाने से दमा और खांसी में लाभ होता है।

गल गंड—इसकी जड़ को चांवलों की धोवन के साथ पीसकर लेप करने से गलगंड मिटता है।

——:o:——

भारंगी २ (चिंगारी)

नाम—

हिन्दी—भारंगी, बारगी। बङ्गाल—बाम नहट्टी, चमनोटी। बम्बई—भारगी। दक्षिण—सेरू-मेंतूर। देहरादून—चिंगारी। नेपाल—अङ्गियाह। पजाब—दवाए मुबारक। तामील—कवलाह। तेलगू—चिरुटेका। लेटिन—Clerodendron Siphonanthus (क्लेरोडेंड्रोन सिफोनेंथस)।

वर्णन—

यह एक वृक्ष होता है जो विशेष कर पूने के आसपास होता है। इसकी ऊंचाई ४ हाथ से लेकर ७ हाथ तक होती है। यह वृक्ष सरू के वृक्ष के समान बढता है। इसके पत्ते ६ इंच से १२ इंच तक

लम्बे होते हैं। ये नीचे की तरफ से चंदनियां रंग के होते हैं। इसके फूल कुछ ललाई लिये हुए सफेद रंग के होते हैं। इसके फल पकने पर गहरे बैंगनी रंग के हो जाते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति के गुण धर्म साधारणतया असली भारंगी के समान ही होते हैं। इसकी जड़ दमा, खांसी और कण्ठ माला में बहुत उपयोगी मानी जाती है। इसकी लकड़ी हलकी, कड़वी और कुछ संकोचक होती है। इसका गोंद उपदश की वजह से होने वाले सन्निपात में लाभदायक होता है।

इसके पत्तों और डालियों का रस घी में मिलाकर छत्तेदार फुन्सियों पर लगाने से बहुत लाभ होता है।

उपयोग—

अनेक रोग—बंगाली लोगों का यह विश्वास है कि इसकी लकड़ी को गले में बांधने से बच्चा या मनुष्य अनेक प्रकार के रोगों से बचा रहता है।

राजयक्ष्मा—इसकी जड़ की लुग्दी और सोंठ के चूर्ण को गरम जल में मिलाकर पिलाने से राजयक्ष्मा में लाभ होता है।

मांसक्षय—इसकी जड़ की लुग्दी और क्वाथ से सिद्ध किये हुए तेल की मांसक्षय वाले बच्चे को मालिश करने से उसको लाभ होता है।

—:o:—

भारंगी (३)

नाम—

संस्कृत—भूमि जंबुक। **हिन्दी**—भारंगी, भूजाम। **मराठी**—गांठ भारंगी। **गुजराती**—घीती, घीतेली। **कच्छी**—निढीकुढेर। **तामील**—भूमिसबा। **तेलगू**—कुरानेली। **संथाल**—कादामेट। **बंगाल**—सुईजाम। **लेटिन**—Premna Herbacea (प्रेम्ना हरबेसिया)।

वर्णन—

यह वनस्पति भी कोकण तथा दूसरे कई स्थानों पर भारंगी के नाम से ही प्रसिद्ध है। मगर यह भारंगी के वर्ग की वनस्पति नहीं है। बल्कि यह एक अरनी के वर्ग की वनस्पति है। यह वनस्पति झाड़ी नुमा होती है और यह बरसात के दिनों में पहाड़ी प्रान्तों में पैदा होती है। इसके पत्ते प्रायः बालिश्त भर लम्बे और आधे बालिश्त चौड़े होते हैं। ये कंगूरेदार होते हैं और एक २ डंठल पर तीन २ लगते हैं। इसके फूल किरमची और नीले रङ्ग के होते हैं। इसकी जड़ फीके उदी रंग की और करीब १ इञ्च मोटी होती है। इसका स्वाद कुछ कड़वा होता है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—सुश्रुत के मतानुसार इसका पौधा दूसरी औषधियों के साथ सांप और बिच्छू के

ता को दूर करने के लिये दिया जाता है।

इसके बीज या पान पत्तों को पीसकर शहद में मिलाकर चटाने से खांसी और जुकाम दूर होता है। इसके पत्ते और फूलों को पीसकर बदन पर चुपड़ने से लाभ होता है।

डाक्टर देसाई का कथन है कि पुराने ग्रंथों में भारंगमूल को कडुवी, तिक्त और उष्ण लिखा है। मगर ये तीनों धर्म इस भारंगी में नहीं होते। इसलिये मालूम होता है कि आर्य शास्त्रों में वर्णित असली भारंगी यह नहीं है। बल्कि क्लेरोडेंड्रोन सेरेटम ही असली भारंगी है जिसका वर्णन ऊपर किया जा चुका है।

इस भारंगी की जड़ को गरम पानी में उबालकर सिर पर लेप करने से सिर दर्द दूर होता है। इसकी जड़ को शहद में मिलाकर कान में डालने से कान का दर्द मिटता है। इसके बीजों को मट्ठे में उबालकर उदर रोगों में देने से दस्त साफ होता है और रोग में शान्ति मिलती है।

——:o:——

भारंगी (४)

नाम—

हिन्दी—भारंगी, भारङ्गी, भारङ्गी, कथलिंग। बंगाल—भूरंगी। नेपाल—ऐथान भारंगी। पंजाब—बेरा, बेरिंग, बिरमो डाला, कथबार, भाखू, पेस्रो, चुपेरिन, तीथर, टूंग्ला, चुवाइ। लेटिन—Picrasma Quassioides (पिक्रैस्मा क्वासिओइड्स)।

वर्णन—

यह छोटी जाति का वृक्ष या मोटी जाति की झाड़ी हिमालय में जम्मू से नेपाल तक तथा गढ़वाल और भूटान में पैदा होती है। इसके पत्ते संयुक्त होते हैं। फूल पत्तों के खाचों में आते हैं। ये फूल हरे रंग के होते हैं इसके फल छोटे २ लाल रंग के मांसल होते हैं ये पकने पर काले पड़ जाते हैं और खाने के काम में आते हैं। औषधि में इसकी छाल और पत्ते काम में आते हैं। इसकी छाल बंगाल में भारंगी के नाम से बिकती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति के गुण और धर्म अंग्रेजी औषधि क्वासिया के समान होते हैं। यह क्वासिया के बदले में उपयोग में ली जाती है। इसकी छाल, लकड़ी और जड़ ज्वर नाशक औषधि की तरह उपयोग में ली जाती है। इसके पत्तों को पीसकर खुजली के ऊपर लगाये जाते हैं। जापान के फरमाकोपिया में यह औषधि उत्तम मानी गई है।

——:o:——

भाट

नाम—

हिन्दी—भाट, भटवन, घान्टूरयां। बङ्गाल—घण्टकुलाइ। कुमाऊँ—भूत। नेपाल—भटनाट,

भटवास । पंजाब—भूत । संथाल—होरेक । लेटिन—Glycine Soja G. Hispida (ग्लिसिन सोजा, ग्लिसिन हिस्पीडा)

वर्णन—

यह वनस्पति पंजाब के पूर्वी हिस्से से बंगाल तक पैदा होती है । हिमालय में यह ६ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है । मनीपुर, बरमा और खासिया पहाड़ियों में भी यह पैदा होती है । यह एक जमीन पर फैलने वाली लता होती है । इसके पत्ते डण्ठल के दोनों ओर लगते हैं । यह बहुत छोटे होते हैं । इसके बीजों में से तेल निकाला जाता है जो स्वीडन के फरमा कोपियाँ में सम्मत माना गया है ।

गुण दोष और प्रभाव—

इसकी छाल का काढा संकोचक होता है ।

——:o:——

भांवर

नाम—

पंजाब—भांवर । सीमा प्रदेश—भाँवर, हरनखुरी । बिजनोर—हारा । आसाम—कलमाया । उरिया—पेनीनोइ । तेलगू—पूरीतितिमो । लेटिन—Ipomoea Hispida (इपोमिया हिस्पिडा) ।

वर्णन—

यह वनस्पति प्रायः सारे भारतवर्ष में और सीलोन में पैदा होती है ।

गुण दोष और प्रभाव—

इस पौधे को तेल में उबाल कर उस तेल को संधिवात, गलित कुष्ट, व्रण, मृगी और मस्तक शूल को दूर करने के उपयोग में लेते हैं ।

——:o:——

भिलावा

नाम—

संस्कृत—भल्लातक, भेली, भल्लिका, भूतनाशना, अग्निका, अग्निमुखी, अनल, अर्शोहिता, अन्तःसत्वा, अरुष्करा, कृमिघ्न, इत्यादि । हिन्दी—भिलावा, भिलामा, भेला, भल्लातक । बङ्गाल—भेला, भेलातुकी, व्हेलामा । बम्बई—बिब्बा, भिलामा, बिलांबी । गुजराती—भिलामू । मराठी—बिब्बा बिमा, बिबू । पंजाब—भेला, भिलावा । नेपाल—भेलाई । आसाम—भोलागुटी, तामील—शुगुगी । तेलगू—भल्लातकी । उर्दू—भिलावां । इङ्गलिश—Common Markingnut Tree । लेटिन—Semicarpus Anacardium (सेमीकार्पस एनाकार्डियम) ।

चाहिये कि उसमें से निकलने वाला धुआं शरीर पर नहीं लगना चाहिये नहीं तो शरीर में खुजली चलकर सूजन आ जायगी। अच्छा यह हो कि जो व्यक्ति मिलामें को शुद्ध करे वह पहिले सारे शरीर पर नारियल का तेल चुपड़ले जिससे उसके धुएँ का असर कम होगा। एक दिन गौमूत्र में उबालने के पश्चात उनका डंखल तोड़ कर उनको गाय के दूध में पकावें। जब गाय का दूध आधा रह जाय तव इस दूध को मिलामें समेत किसी चिकने मिट्टी के बरतन में भरकर जमा दें और ८ दिन तक उस दही को सड़ने दें। उसके पश्चात उसमें से मिलामें को निकाल लें। ऐसा करने से भिलामें शुद्ध हो जाते हैं।

बाकी बचे हुए दही को मथनी से मथकर उसका घी निकाल लें और उस घी में समान भाग गेहूँ का आटा डालकर उसको अच्छी तरह सेंक लें। फिर उसमें समान भाग काले तिलों का चूर्ण और आवश्यकतानुसार बूरा डालकर लड्डू बनालें। ये लड्डू बहुत पौष्टिक, वातनाशक और अग्निवर्धक होते हैं।

भिलामा आयुर्वेद की बहुत प्रसिद्ध, प्रभावशाली और हाजिर जवाब चीजों में से एक है। इससे अनेकों प्रकार के रोग दूर होते हैं। मगर इसके प्रयोग में बहुत सावधानी रखने की जरूरत है। क्योंकि क्रिया की तरह इसकी प्रतिक्रियां भी बहुत जोरदार होती है। कई लोगों को भिलामा खिलाने से वह उनके शरीर में फूट निकलता है और कई लोग तो इतनी नाजुक प्रकृति के होते हैं। कि उनको भिलामा खिलाना तो दूर सिर्फ उसका स्पर्श करने से ही अथवा सिर्फ उसका धुआं लगने से ही सारे शरीर में फुन्सियां हो जाती हैं। इसलिये इस वस्तु का उपयोग करते समय, रोगी के बल और प्रकृति का खूब अध्ययन कर लेना चाहिये अन्यथा अर्थ की जगह अनर्थ होने की सम्भावना रहती है।

भिलामें को शरीर पर लगाने से त्वचा काली पड़कर उसमें जलन हो जाती है और छोटी २ फुन्सियां हो जाती हैं। इन फुन्सियों का पीब जहां २ लगता है वहां २ नई फुन्सियां पैदा हो जाती हैं। ये फुन्सियां बहुत मुश्किल से आराम होती हैं। कई लोगों को भिलामा लगने से पेशाब में जलन होने लगती हैं। ज्वर आने लगता है और फोड़ा फूटकर घाव हो जाता है।

लेकिन बाह्योपचार में यह औषधि जितनी भयंकर है उतनी भीतरी उपचार में नहीं है। अगर विधिपूर्वक उचित मात्रा में इसको दिया जाय तो लाभ के सिवाय किसी प्रकार हानि होने की सम्भावना नहीं रहती है।

भिलामे के अन्दर तीक्ष्ण, गरम, लघुपाकी, कटु, दीपन, पाचन, स्वेदल, मृदुविरेचक, यकृत के लिये उत्तेजक, मूत्रल, कुष्टनाशक, मज्जातंतु और रक्ताभिसरण के लिये उत्तेजक, कफ निस्सारक, आम नाशक, कासहर, बवासीर नाशक और रक्त के अन्दर श्वेत कणों को बढ़ाने के धर्म पाये जाते हैं। संक्षेप में यह परम रसायन और धातु परिवर्तक वस्तु है।

भिलामा रक्त के अन्दर बहुत शीघ्रता से मिल जाता है। मगर शरीर से बाहर समय पाकर निकलता है। इसकी प्रधान क्रिया पाचन-नलिका पर और उत्तर गुदा पर होती है। यकृत के ऊपर इसकी क्रिया बहुत जोरदार और उत्तेजक होती है। जिसकी वजह से पित्त का सञ्चालन बहुत व्यवस्थित

होता है।

इससे यकृत में होने वाला रक्त का सचालन बहुत शीघ्रता से और व्यवस्थित रूप से होता है। जिसकी वजह से उत्तर गुदा के ऊपर रक्त का दवाव कम हो जाता है। रक्त का दवाव कम होने से ववासीर के मस्से मुरझाने लगते हैं और गुदा को शक्ति मिलने मे वहां पर मल संचय नहीं होने पाता। इन सव कारणों से ववासीर धीरे २ अच्छे हो जाते हैं। यकृत के ऊपर अनुकूल क्रिया होने से भूख वहुत लगने लगती है और दस्त पीले रंग का तथा साफ होता है।

त्वचा के ऊपर भिलामें की क्रिया वहुत जोरदार होती है। त्वचा के रास्ते से बाहर निकलते समय त्वचा में वहुत पसीना होता है, गर्मी पैदा होती हैं, खुजली छूटती है और त्वचा लाल हो जाती है त्वचा की विनिमय क्रिया को यह सुधार देता है।

मूत्रपिंड के ऊपर भी भिलामें की क्रिया वहुत तीव्र और उत्तेजक होती है। शुरू में यह पेशाव की तादाद को वढाता है परन्तु मूत्रपिंड में शीघ्र ही थकावट आ जाने की वजह से पेशाव की उत्पत्ति कम होने लगती है। यह क्रिया इतनी तीव्र होती हैं कि कभी २ पेशाव के साथ खून भी जाने लग जाता हैं। मूत्र पिंड की तरह कामेंद्रिय के लिये भी भिलामा वहुत उत्तेजक है इसको खाने के पश्चात लिंगेंद्रिय में सुरसरी चलकर उसमें उत्तेजना पैदा होती है। इसके अतिरिक्त मज्जातंतुओं के द्वारा भी भिलामा कामेंद्रिय और अण्डकोषों में उत्तेजना पैदा करता है। इस प्रकार यह प्रत्यक्ष और सीधे तौर से कामोत्तेजक और वाजिकरण होता है।

मज्जातंतुओं के लिये भी भिलामा उत्तेजक हैं। मज्जातंतुओं के द्वारा शरीर की सव पेशियों को इससे शक्ति मिलती हैं और उनकी सकोच विकास क्रिया व्यवस्थित हो जाती है।

भिलामा में से नाड़ी की गति तेज हो जाती है और हृदय के ठोके साफ सुनाई देने लगते हैं। रक्त के अन्दर श्वेत कणों को वढाने की वजह से यह सूजन को कम करता है। श्वेत कणों को वढाने से और रस ग्रंथियों को उत्तेजन देने की वजह से सारे शरीर के रक्त को शुद्ध करने में यह वहुत सहायक होता है। मतलब यह कि भिलामा शरीर के प्रत्येक अंग को उत्तेजना देता है और थोड़ी २ मात्रा में इसको लेते रहने से सारे शरीर की विनिमय क्रिया सुधर जाती है।

भिलामा कफ प्रधान और वात प्रधान रोगों में विशेष रूप से उपयोग में लिया जाता हैं। अत्यंत उष्ण वीर्य होने की वजह से इसको गर्मी में सेवन नहीं करना चाहिये। छोटे वच्चों को, गर्भवती स्त्रियों को और वृद्ध मनुष्यों को इसका सेवन नहीं करना चाहिये। इसका सेवन करते समय रोगी को घी, दूध, दही मठा, शक्कर और भात खाने को देना चाहिये नमक और पानी वन्द कर देना चाहिये। प्यास लगने पर दूध पिलाना चाहिये। मांस खाने के लिये विलकुल नहीं देना चाहिये। मांसाहारी मनुष्यों के लिये यह वहुत हानिकारक होता हैं। इस औषधि को शुरु करने के पूर्व लंघन और जुलाव दे देना चाहिये। औषधि शुरु करने के पहिले रोगी के पेशाव की जांच कर लेना चाहिये और औषधि शुरु करने के

पश्चात ही प्रतिदिन पेशाब की तादाद और उसकी स्थिति को रोज जांचते रहना चाहिये। पेशाब की तादाद कम होने पर अथवा पेशाब का रंग धुँधला होने पर औषधि को तुरन्त बन्द कर देना चाहिये। पेशाब लाल और थोड़ा होने लगे तो नारियल का रस या इमली के पत्तों का रस उसकी शान्ति के लिये देना चाहिये। भिलामें की मात्रा अधिक होने पर शुरु में शरीर के अन्दर खुजली चलती है। फिर पसीना होता है। जलन होती है और उसके पश्चात पेशाब लाल होने लगता है। ऐसे चिन्ह दिखलाई देने पर भिलामे को बन्द कर देना चाहिये। जिससे ये लक्षण बढ़ने न पावें। आवश्यकता समझने पर इसके दर्पनाशक पदार्थ भी दे देने चाहिये। कुछ विशेष प्रकृति के लोगों पर भिलामें के असर बहुत अधिक होते हैं इसलिये उनको बहुत थोड़ी मात्रा में इसको प्रारम्भ करना चाहियें और उसके परिणाम देखकर फिर उसकी मात्रा कमी ज्यादा करना चाहिये।

भिलामा और हैजा—हैजे के रोग में भिलामा बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। एक भिलामा लेकर उसका छलका निकाल कर उसको आधा तोला इमली के साथ पीसकर दो तोला प्याज के रस के साथ मिलाकर पिला देना चाहिये। यह दवा सिर्फ एक ही बार पिलाना पड़ती है और पेट में जाने के पश्चात ५ मिनिट के अन्दर ही अपना असर बतलाकर दस्त और उल्टी को बन्द कर देती है। इमली के साथ भिलामा देने से शरीर पर उसकी प्रतिक्रिया होने का डर नहीं रहता और वह जठराग्नि को प्रदीप्त करके शरीर में गर्मी बढ़ाकर अद्‌भुत तरीके से हैजे के जन्तुओं को नष्ट कर डालता है प्याज का रस भी हैजे के रोग में बहुत गुणकारी वस्तु है। इसलिये उसका प्रभाव भी बहुत अनुकूल होता है।

जंगलनी जडी बूँटी के लेखक लिखते हैं कि हैजे के अनेक केसों पर इस प्रयोग के अनुभव किये जा चुके हैं और दूसरी अनेक औषधियों से असफल हुए मूर्छित अवस्था में पहुंचे हुए ठण्डे हाथ पैरों वाले भयंकर केस भी इस औषधि से अच्छे हुये हैं। हैजे के सिवाय मरोड़ी और अतिसार के रोगियों को भी भिलामे को इमली के साथ देने से आश्चर्य जनक लाभ होता है।

भिलामा और मज्जातंतु के रोग—भिन्न २ प्रकार के वात रोगों में भिलामा बहुत गुणकारी वस्तु है। मज्जाततुओं की सूजन, पक्षाघात, लकवा, अर्दित, उरुस्तम्ब इत्यादि रोगों में इसके सेवन से बड़ा लाभ होता है। मस्तिष्क की थकावट में भी इसको देने से बड़ा लाभ होता है। मज्जातंतु समूह के रोगों में भिलामे को थोड़ी मात्रा में अधिक दिन तक देना चाहिये। मद्रास में ऐसे रोगों में भिलामे को इमली के पत्ते, लहसन, बामबिडंग, नारियल का रस और मिश्री के साथ देते हैं। नवीन और आमवात में भी भिलामें को देने से बहुत लाभ होता है। जीर्ण आमवात में इसके प्रयोग से विशेष लाभ नहीं होता। नवीन आमवात में तीन माशे भिलामे का अवलेह दिन में ३-४ बार देने से २-३ दिन में ही लाभ दिखलाई देने लगता है।

फिर भी कई लोगों को भिलामा अनुकूल न पड़ने से ऐसे रोगो में वे लोग इससे लाभ नहीं उठा सकते हैं। ऐसी स्तिथि में जंगल की जड़ी बूँटी के लेखक ने एक ऐसा प्रयोग लिखा है जो बिलकुल

खतरे से रहित है। उनका कहना है कि इस प्रयोग से मनुष्य को भिलामे के सब लाभ प्राप्त हो जाते हैं मगर उसकी प्रतिक्रिया से वह बच जाता है। वह योग इस प्रकार है।

२-३ सेर भिलामों को लेकर उनको कूटकर अधकचरे करके खेत के २-३ क्यारों में खाद की तरह बिछा देना चाहिये और फिर उन क्यारों में मेंथी बो देना चाहिये। उस मेंथी को प्रतिदिन पानी पिलाना चाहिये। जिससे ८-१० दिन के अन्दर मेथी की तरकारी तैयार हो जायगी। इस मेथी की शाग बनाकर बिना नमक मिरच के प्रतिदिन खाने से सन्निपात, उपदंश की वजह से हुआ पक्षाघात इत्यादि अनेक प्रकार के वात रोग मिट जाते हैं और भिलामे की प्रतिक्रिया होने का बिलकुल डर नहीं रहता।

भिलामा और दमे का रोग – दमे के रोग में भिलामा एक बहुत उत्तम औषधि है। सरदी में उठने वाला दमा इसके फूलों के उपयोग से चला जाता है। गोवा में दमे के रोग में इसको मट्ठे के साथ मिलाकर देते हैं। ज्वर के साथ होने वाली फेफड़े की सूजन और कफ के साथ रक्त गिरने की बीमारी में इसको मुलेठी के साथ लेने से बहुत लाभ होता है।

डॉक्टर मुहीन शरीफ लिखते हैं कि मैंने भिलामे के काले, गाढे और चरपरे तेल का उपयोग किया। जो कि उसको दबाकर निकाला गया था अथवा गर्मी देकर प्राप्त किया गया था और मैं यह कह सकता हू कि तीव्र सन्निपात में यह इतना प्रभावशाली है कि इस बीमारी के लिये यह एक विशिष्ट या चमत्कारिक औषधि कहा जा सकता है। दमे के अन्दर भी इस औषधि के फायदे बहुत बहुमूल्य हैं। इसके अतिरिक्त उपदंश की द्वितीया अवस्था में, खूनी बवासीर में- मज्जातंतु के शूल में, मृगी में, अर्धांग में, स्पर्श शून्यता में, कुष्ट रोग में और चर्म रोगों में भी यह कमो वेश लाभदायक है। बाह्य प्रयोग में भी यह तेल बहुत सस्ती और सुन्दर चर्मदाहक वस्तु है। मगर इसका उपयोग करने में बहुत सावधानी और फिक्र रखने की जरूरत है। भिलामे के सेवन के मध्य में फिर चाहे वह भीतरी हो या बाहरी चमड़ी पर ललाई और चकत्ते होने की सम्भावना रहती है और शरीर के किसी भी भाग में खुजली या बेचैनी अनुभव होने लगती है। ऐसे लक्षणों के दिखलाई देते ही समझ लेना चाहिये कि इस औषधि का खराब और प्रतिक्रिया पूर्ण असर होने लगा है और ऐसे लक्षणों के दिखलाई देते ही इस औषधि को फौरन बन्द कर देना चाहिये। प्राचीन और मज्जा तंतुओं से सम्बन्धित सन्निपात में भिलामा उतना उपयोगी नहीं होता जितना कि वह इसकी नवीन और तीव्र अवस्था में होता है। इसलिये मैं प्राचीन सन्निपात के सम्बन्ध में इस औषधि के पक्ष में कुछ अधिक कहने में असमर्थ हू। भिलामा दमे के ऊपर भी एक बहुत प्रभावशाली औषधि है, मगर छोटी मात्रा में इसको देने से जैसा कि कुछ किताबों में बतलाया गया है इसका लाभ बहुत धीरे २ होता है।

इंडियन मेडिकल गजट सन् १९०२ के मार्च के अंक में डॉक्टर हेमचन्द्र सेन ने भिलामे और उसके तेल के सम्बन्ध में एक मनोरंजक लेख प्रकाशित किया था। उनके मतानुसार जिन २ रोगों में इस वस्तु की सिफारिश की गई है उन सब रोगों में यह औषधि किसी में कम और किसी में अधिक

लाभ अवश्य करती है।

कोमान का कथन है कि मैंने तीव्र और नवीन सन्धिवात के बीमारों पर जनरल हॉस्पिटल में इस औषधि का प्रयोग किया। २ सप्ताह चिकित्सा के पश्चात यह बीमारी अच्छी हो गई। प्राचीन सधिवात के केसों पर जब इसका उपयोग किया गया तो इससे कुछ भी लाभ दिखलाई नहीं दिया गया, पेट की बीमारी की पुरानी शिकायतों में और आँतों के व्रण और प्राचीन पाकस्थली के प्रदाह में भी इसमे कोई लाभ नहीं देखा गया।

भिलामा और सर्प विष—सुश्रुत के मतानुसार इस पौधे की राख दूसरी औषधियों के साथ मिला कर सर्प विष के उपचार में काम में ली जाती है। शाङ्गधर सहिता में भी भिलामे के सयोग से बनने वाली सजीवनी गटिका को सर्प विष में लाभदायक बतलाया है। इससे मालूम होता है कि सर्प विष के उपर भी यह औषधि कुछ थोड़ी बहुत क्रिया करता होगी। इसी से सम्बन्धित एक योग किसी सन्यासी के कथन पर जगलनी जड़ी बूँटी के लेखक ने प्रकाशित किया है। यद्यपि यह योग हमको अधिक विश्वसनीय नहीं मालूम हुआ फिर भी पाठकों की जानकारी के निमित्त यहां पर उसे प्रकाशित करते हैं।

पलाश या ढाक के वृक्ष के पास जाकर उसकी जड़ के पास २ हाथ गहरा गड्ढा खोदकर उसकी जड़ में एक बड़ा गड्ढा करके उसमें ९० तोला भिलामा भर देना चाहिये और गड्ढा करते समय जो छिलके निकले उन्हीं छिलकों से उस गड्ढे को पीछा भरकर ऊपर से मिट्टी का लेप कर देना चाहिये और उसके बाद उस खड्डे को फिर पीछा मिट्टी से भर देना चाहिये। उसके पश्चात ६ महिने तक हर आठवें दिन उस पलाश के वृक्ष को खूब पानी पिलाना चाहिये। ६ महिने के पश्चात उस वृक्ष पर जो फूल आवें उन फूलों को इकट्ठे करके रख लेना चाहिये।

जिस व्यक्ति को सर्प ने काटा हो उसको इसमें से १ तोला फूल पीसकर उसमें १ अतीस की कली का चूर्ण डालकर जब तक विष नष्ट न हो तब तक हर आधे घटे के अन्तर से यह औषधि देते रहना चाहिये। वैसे भी पलाश की जड़ में बिना दस्त उल्टी और किसी प्रकार के उपद्रव के सर्प के विष को नष्ट करने की शक्ति रहती है ऐसी स्थिति में सम्भव है कि भिलामे के सयोग से उसके गुणों में कुछ वृद्धि हो जाय। ऐसा कहा जाता है कि पलाश के वृक्ष की जड़ में एक बार भिलामा रख देने से उसका असर तीन वर्ष तक कायम रहता है इसलिये तीन साल तक उसके फूल लगातार उपयोग में लिये जा सकते हैं।

केस और महश्कर के मतानुसार भिलामा सर्प विष के अन्दर बिलकुल निरुपयोगी है।

शरीर की भीतरी चोट और भिलामा—कभी २ आकस्मिक घटना से मनुष्य जब ऊपर या नीचे से कहीं गिर पड़ता है, तो उसके शरीर के भीतर उस चोट की वजह से बड़ी जर्जरता हो जाती है और किसी २ के अन्दर तो यह असर जन्म भर के लिये रह जाता है। ऐसे टाइम में आमो हलदी और गुड़,

आंवला और गुड़ इत्यादि कई वस्तुओं के खिलाने का रिवाज है। मगर ऐसी औषधियों से साधारण चोट में ही फायदा होता है। भयंकर चोट में ऐसी औषधियों से लाभ नहीं होता ऐसी भयंकर चोटों में भिलामा बड़ा अद्‌भुत कार्य करता है। इसके सम्बन्ध में सन १९१२ के जून मास के वैद्य कल्पतरु में एक लेख प्रकाशित हुआ था। जिसका सारांश नीचे देते हैं।

गिरनार नामक सुप्रसिद्ध जैनियों के तीर्थ स्थान में पत्थर चट्टी नामक एक बहुत प्रसिद्ध स्थान है। इस स्थान पर उन दिनों खगेंद्र स्वामी नामक महन्त रहते थे। एक दिन ये महन्त पहाड़ की एक टेकरी के ऊपर शौच के लिये गये और वहां से वापस लौटते समय उनका पैर फिसलने से वे करीब १०० हाथ नीचे एक खाई में गिर गये। देवयोग से उनके बाहरी शरीर में तो कोई चोट नहीं आई मगर उनके भीतर ऐसी पछाड़ लगी कि उनका हिलना चलना बिलकुल बन्द हो गया और पानी पीने तथा पेशाब करने के लिये भी उनसे उठना बैठना असम्भव हो गया यह बात जब जूनागढ में मालूम हुई तब वहां के दीवान साहब और चीफ मेडिकल आफिसर डाक्टर त्रिभुवनदास उनके पास गये और उनको कहा कि आपको ४-६ महिने दवाखाने में रहना पड़ेगा। आपकी सुविधा की हर प्रकार की व्यवस्था कर दी जायगी और आप वहां चलिये। तब महाराज ने कहा कि अभी तो वहां चलना बहुत कठिन है। थोड़े दिनों के बाद कुछ आराम होने पर वहां पर चलेंगे। तब कुछ दिनों तक उन्होंने डाक्टर की दवा वहीं ली पर वह चोट इतनी सख्त थी कि उससे कुछ लाभ नहीं हुआ। तब उन्होंने अपने प्राचीन आचार्यों की पुस्तक में एक योग देखा और उसी योग को प्रारम्भ किया। वह योग इस प्रकार था।

७ भिलामे को लेकर उनके टुकड़े करके १० तोला घी में भून लेना चाहिये। उसके पश्चात उन भिलामों को घी में से निकालकर बाहर फेंक देने चाहिये और उस घी में गेहूं का आटा डालकर उसको सेककर उसमें गुड़ डालकर हलवा बना लेना चाहिये और उस हलवे को खा लेना चाहिये। इस प्रकार ७ दिन करने से चाहे जैसी भयंकर पछाड़ लगी हो मिट जाती है भिलामें का हलवा खाने से अगर शरीर में गर्मी मालूम हो और शरीर फूट निकले तो ४ दिन तक प्रतिदिन भैंस का गोबर शरीर पर चुपड़ कर ३ घण्टे तक धूप में बैठे रहने से भिलामे का सब असर मिट जाता है।

महतजी ने इस प्रयोग को शुरु किया और पहिले ही दिन उनको रात में आराम से नींद आई। दूसरे दिन इस हलवे को खाने के पश्चात वे बिना किसी मदद के अपने आप पखा चलाने लगे। तीसरे दिन उनके शरीर में कुछ गरमी मालूम होने लगी और पहिले जहाँ पेशाब को उठते समय वे चार पांच मनुष्यों का टेका लेते थे वहां सिर्फ १ मनुष्य के सहारे से वे उठकर पेशाब करने के लिये नीचे उतरे। चौथे दिन जब उन्होंने वह हलवा खाया तब उनका सारा शरीर लाल हो गया और बारीक फुन्सियाँ शरीर पर फूट निकली। लेकिन फिर भी उस दिन वे बिना किसी मनुष्य की सहायता से लकड़ी के टेके अपने आप बिस्तर में से उठकर धीरे २ कमरे में फिरने लगे। पांचवे दिन उन्होंने यह हलवा नहीं खाया क्योंकि उनके सारे शरीर में भिलामा फूट गया था। तब उन्होंने भैंस का गोबर शरीर पर मलकर धूप

में बैठना शुरु किया। इस प्रकार ४ दिन करने पर भिलामें का खराब असर मिट गया और १० दिन के अन्दर उनके शरीर में बहुत शक्ति आ गई और जठराग्नि भी बहुत प्रदीप्त हो गई। दसवें दिन वे जूनागढ के लोगों से मिलने के लिये अपने आप पैदल गिरनार पहाड़ से उतर कर जूनागढ गये। रास्ते में उनको डाक्टर साहब देखकर चकित हो गये और उन्होंने आश्चर्य से पूछा कि आप बिस्तर पर से उठकर यहां कैसे चले आये। आपकी बीमारी तो ६ महीने में भी आराम होने काबिल नहीं थी। तब स्वामी जी ने सब हाल उनसे कहा। जिसे सुनकर डॉक्टर साहब आश्चर्य चकित हो गये।

उपरोक्त वर्णन वैद्य कल्पतरु में प्रकाशित होने के पश्चात और भी कुछ वैद्यों ने इस प्रयोग को अजमाया और उसका परिणाम संतोषजनक पाया। यह खयाल में रखने की बात है कि रोगी की प्रकृति ऋतु, देश और बल का विचार करके भिलामे की मात्रा में कमी ज्यादा की जा सकती है। सात भिलामें की जगह १-२ या ४ भिलामें भी लिये जा सकते हैं और ७ दिन की जगह ३ या ४ रोज भी सेवन किया जा सकता है।

यूनानी मत - यूनानी मत से भिलामा बहुत गरम होता है। इसको लगाने से चमड़े में जखम हो जाता है। सरदी से होने वाली मज्जा तंतुओं की बीमारियों जैसे फाजिल, लकवा, मृगी, स्मरण शक्ति की कमजोरी इत्यादि रोगों में इसके सेवन से बहुत लाभ होता है। यह बहुमूत्र को मिटाता है और पट्ठों को शक्ति देता है एक तजरुबेकार का कहना है अगर दांत में बहुत जोर का दर्द हो तो १ रत्ती भिलामे को लगे हुए पान में रख कर चबावें और उसके पीक को थूंकते जावें, इससे दर्द फौरन जाता रहेगा।

भिलामें के सेवन से सर्द प्रकृति वालों को काम शक्ति बढ़ती है। इसका लेप करने से दाद मिट जाता है। इसकी धूनी से बवासीर के मस्से सूख जाते हैं और इसका तेल धवल रोग के दागों पर फायदा पहुंचाता है।

यूनानी हकीम भिलामें के सहयोग से कई प्रकार की माजूनें तैयार करते हैं। बुकरात हकीम ने भी भिलामें से २ प्रकार की माजूनें तैयार करने की विधी निकाली है। ये दोनों प्रकार की माजूनें सर्दी से होने वाली दिमाग की बीमारियों में लाभ पहुचाती हैं। हाजमे को शक्ति को बढ़ाती है और काम शक्ति को उत्तेजित करती है।

(१) हरड़, बहेड़ा, आंवला ये तीन २ तोला, बाल छड़, कुदर, बच, काली मिरच, सूंठ और भिलामें का शहद भिलामे के अन्दर रहने वाला काला रस १॥ १॥ तोला. इन सब चीजों को कूट कर इनमें थोड़ा सा रोगन बादाम मिला लें फिर इसमें भिलामें का शहद मिला कर सब चीजो में जितना वजन हो उससे तिगुने शहद में माजून बना लें और उसको जौ के ढेर में गाड़ दें। ६ महिने के बाद में उपयोग में लेवें। इसकी मात्रा ४॥ माशे की है।

(२) तुकरूयाक वीर, अकर करा, कलोंजी, कूट, काली मिरच, पीपर और बच हर एक तीन २ तोला। पाषाण भेद, हींग, जराविंद, मर्द हर्जे, हुब्बुल गार, जुनवे दस्तर, राई और चित्रक हर एक

डेढ़ २ तोला। मिलाने का शहद ११ तोला। इन सब चीजों को कूट छान कर अखरोट के तेल में तर कर लें और फिर तिगुने शहद में माजून बना लें। ६ माह के पश्चात् इसको ४॥ माशे की मात्रा में खाने से मनुष्य के अनेक प्रकार के रोग मिट जाते हैं।

मिलामे की मगज लिंगेंद्रिय को बहुत शक्ति देती है और काम शक्ति को बढ़ाती है। सर्दी से होने वाली दिमागी बीमारियों में लाभ पहुंचाती है।

मिलामे का एक दाना इमली के साथ कूट कर खाने से एक ही दिन में पेट के कृमि मर जाते हैं। नुकसान भी इससे एक ही दिन में फायदा होता है। मगर इसमें नमक बिलकुल छोड़ देना चाहिये। इसका छिलका अत्यधिक काम शक्ति वर्धक है। बालों को काले रखने के लिये भी यह बहुत मुफीद है। हकीम शरीफ खां लिखते हैं कि मिलामें की मगज को काम शक्ति वर्धक माजूनों में मिला कर सेवन किया इससे कामेंद्रिय और मेदे को बहुत शक्ति मिली तथा वीर्य की बहुत रुकावट की। एक बार सर्दी की वजह से नजला हो गया। कितना ही इलाज किया कुछ फायदा नहीं हुआ। कुचले और अफीम से भी लाभ नहीं हुआ। उसके पश्चात् मिलामे को मय मगज के शहद के साथ खिलाया जिससे नजला बिलकुल मिट गया।

नारू पर भी मिलामा अच्छा काम करता है। एक छोटा सा मिलामा लेकर बिना उसकी टोपी उतारे हुये उसको गुड़ में लपेट कर नारू के रोगी को निगलादें। तीन दिन तक इस प्रकार निगलाने से नारू बिलकुल मिट जाता है।

मिलामें के उपद्रव और उनकी शांति—मिलामें को अधिक मात्रा में लेने से गर्मी, खुजली, भीतरी सूजन और बेचैनी पैदा हो जाती है तथा हलक और जबान में छाले पैदा हो जाते हैं। इसके उपद्रवों को दूर करने के लिये गाय और बकरी का ताजा मक्खन और तिलों का तेल खिलाना चाहिये और बदनपर मालिश करना चाहिये। खटवार को गाय के दही में मिला कर चटाना चाहिये। नाक में रोगन बनफ्शा और रोगन बादाम टपकाना चाहिये। सिरपर ठंडी चीजों का मालिश करना चाहिये। मिलामें की वजह से घाव पड़ जाय तो उस पर मोम का तेल लगाना चाहिये। अगर सूजन हो तो मरवे के पत्तों का लेप करना चाहिये। इमली के पत्तों का रस पिलाने से मिलाने का जहर मिट जाता है। इमली के दरख्त की अन्दर की छाल को दही में पीस कर मिलामे की वजह से होने वाले फोड़े फुंसियों पर लगाने से बहुत जल्दी आराम हो जाता है। इसकी छाल, पत्ते और फल मिलामे के लिये एक उत्तम दर्पनाशक वस्तु है।

उपयोग—

गंडमाला—गंडमाला, कुष्ट और उपदंश सम्बन्धी रोगों में मिलामे को बहुत थोड़ी मात्रा में देने से लाभ होता है।

बवासीर—एक माशा गाय के घी में थोड़ा सा मिलामें का मगज डालकर उसको औटाकर गुदा के भीतरी भाग में लगा देना चाहिये और एक घण्टे तक कंडे की आँच से, इसका २ सेंक इस प्रकार

करना चाहिये जिससे अण्ड कोषों को गरमी न पहुंचे। इस प्रकार करने से बवासीर से गिरने वाला खून दूसरे दिन बन्द हो जाता है और उसका चटका मिटकर आराम से नींद आती है।

कृमिरोग—भिलामें को छोटी मात्रा में दही के साथ अथवा इमली के साथ खाने से कृमि नष्ट हो जाते हैं।

डाढ का दर्द—डाढ़ की पीड़ा मिटाने के लिये भिलामे की राख से मंजन करना चाहिये। भिलामे के तेल को त्वचा पर लगाने से १२ घन्टे में फफोला पैदा हो जाता है।

बनावटें—

भल्लातक क्षीर—उत्तम भिलामें जिनको किसी प्रकार की चोट न लगी हो किसी प्रकार का कीड़ा न लगा हो, जो रोग रहित हों रस प्रमाण और वीर्य से भरपूर हों और पके हुए जामुन के फल के सदृश वर्ण वाले हों उन भिलामों को जेष्ठ और आषाढ के महीनों में संग्रह करके जौ के ढेर में गाड़ दें और ४ मास तक वहीं पडे रहने दें पश्चात अगहन और पौष मास में उनका सेवन करें। सेवन से पूर्व शीतल, स्निग्ध तथा मधुर अहार विहार और औषधियों से शरीर को संस्कृत कर लेना चाहिये। उष्ण प्रकृति वाले लोगों को तथा ग्रीष्म ऋतु में और जिन दिनों में पित्त का उभाड़ हो उन दिनों इनका सेवन नहीं करना चाहिये।

सबसे पहिले १२ भिलामों को कुचल कर आठ गुने जल में डालकर हलकी आंच से पकावें। जब पानी का आठवां भाग शेष रह जाय तब उसको उतार कर छान लें और उसमें दूध मिला दें। इस दूध को पीने से पहिले सारे मुँह को भीतर से घी से तर कर देना चाहिये और थोड़ा सा घी पी भी लेना चाहिये जिससे गले तक सब भाग घी से तर हो जाय। उसके पश्चात उस दुग्ध मिश्रित रस को पीलें। १० भिलामों से प्रारम्भ करके प्रतिदिन एक २ भिलामा बढ़ाते रहना चाहिये। जब ३० भिलामें तक पहुच जाय। तब फिर एक २ भिलामा घटाते हुए १० तक ले जाना चाहिये। इस प्रकार १ हजार भिलामों का प्रयोग करना चाहिये। १ हजार से अधिक भिलामों का सेवन निषिद्ध है। जब प्रातः काल सेवन किया हुआ यह रसायन पच जाय तब घृत युक्त दूध के साथ सांठी चावलों का भोजन पथ्य में ग्रहण करें।

महर्षि चरक लिखते हैं इस योग का सेवन करने वाले मनुष्य का शरीर पर्वत के समान दृढ़ और गठीला होता है। उसकी इन्द्रियां दृढ़ और अतिबल सम्पन्न होती हैं। उसका रूप अत्यन्त सुन्दर और तेजस्वी हो जाता है और उसका वर्ण निर्मल और स्वर मेघ गरजन के समान होता है। उसकी काम शक्ति बहुत प्रबल रहती है और नवयुवती स्त्रियों को वह बहुत प्रिय रहता है। उसकी सन्तानें भी बहुत हृष्ट होती हैं। यह परम रसायन है।

अष्टांग संग्रह के मतानुसार जितने दिनों तक भिलामों का प्रयोग किया जाय। उससे तिगुने काल तक दूध, घी और सांठी चांवलों के भात को पथ्य में ग्रहण करना चाहिये।

यह चरक संहिता का प्रसिद्ध योग है। मगर आज कल के क्षीण वीर्य पुरुष इतनी बड़ी मात्रा में भिलामों को सहन नहीं कर सकते। इसलिये उनको एक भिलामें से यह प्रयोग प्रारम्भ करना चाहिये

और ज्यों २ वह सहन होता जाय त्यों २ उसकी मात्रा धीरे २ बढाना चाहिये।

मल्ला तक क्षौद्र—भिलामों के छोटे २ टुकड़े करके उसको एक ऐसे मिट्टी के घड़े में भरे जिसके पेंदे में छेद हो। उसके पश्चात भूमि में गड्ढा करके उस गड्ढे में एक घी में तृप्त किया हुआ घड़ा जिसमें कोई छिद्र न हो रख दें। उस घड़े पर यह भिलामे का घड़ा इस प्रकार रखें कि इस घड़े के पेंदे का छेद उस घड़े के मुँह के बिलकुल बीच में रहे। फिर दोनों की सन्धियों को कपड़ मिट्टी से बंद कर दें फिर नीचे के घड़े के खड्डे में मिट्टी भरकर उस घड़े को बिलकुल स्थिर कर लें। केवल नीचे का घड़ा ही गड्ढे में होना चाहिये। दूसरा भिलामों से भरा हुआ घड़ा भूमि के ऊपर रहना चाहिये। भिलामों से भरे हुए घड़े के मुँह पर मिट्टी की ढँकनी ढँककर उसकी दर्जों को भी कपड़ मिट्टी से बन्द कर देना चाहिये और उस सारे घड़े पर काली मिट्टी का लेप कर देना चाहिये। जब वह यन्त्र तैयार हो जाय तब ऊपर वाले घड़े के चारों तरफ ऊपले कण्डे रखकर आग लगा देना चाहिये। इस अग्नि से भिलामे का तेल द्रवित होकर नीचे के घड़े में चला जायगा।

इस तेल को उचित मात्रा आठवाँ भाग शहद और दूना घी मिलाकर सेवन करने से मनुष्य १०० वर्ष तक बुढ़ापे से दूर रहता है। आधुनिक समय में इस तेल की मात्रा २-३ बूँद से ज्यादा नहीं होना चाहिये।

नारसिंघ चूर्ण— सोंठ, मिर्च, पीपर, हरड़, बहेड़ा, आँवला, तिल और भिलामा इन सब चीजों को समान भाग लेकर चूर्ण बना लेना चाहिये। इस चूर्ण को १॥ माशे की मात्रा में आधा तोला घी, १ तोला शहद और १ तोला मिश्री के साथ सेवन करना चाहिये और पथ्य में सिर्फ दूध पर ही रहना चाहिये अन्न, जल और दूसरी सब वस्तुओं का त्याग कर देना चाहिये। इस योग का कुछ दिनों तक सेवन करने से जलोदर की भीषण व्याधि और दूसरे सब प्रकार के उदर रोग मिट जाते हैं।

बवासीर नाशक वटी—हरड़, काले तिल, शुद्ध भिलामा, नीम के बीजों की मगज, बकायन नीम के बीजों की मगज, कांकच के बीज। ये सब चीजें एक २ तोला, रसोत तथा पुराना गुड़ तीन २ तोला। इन सब चीजों को लोहे की खरल में डाल कर लोहे के दस्ते से ही २४ घन्टे तक खूब कूटना चाहिये। फिर उसकी तीन २ माशे की गोलियां बना लेना चाहिये। इन गोलियों में से सवेरे शाम एक २ गोली पानी अथवा दूध के साथ लेने से बादी के बवासीर मिट जाते हैं।

भिलामे के फल का पाक—मगसर पोस के महीने में जब नवीन भिलामे आते हैं। तब भिलामों के ऊपर एक प्रकार का फल लगा हुआ रहता है जो पीले रंग का होता है और सूखने पर भिलामे की टोपी के आकार में परिणित हो जाता है। यह फल कुछ चपटा, चिकना, चमकदार पीले रंग का और आकार में सूरती बोर सरीखा होता है। इसमें बीज नहीं होता। यद्यपि बहुत से लोग इस फल के सम्बन्ध में परिचित नहीं है तथापि यह एक बहुत कीमती वस्तु है। इसमें पहिला गुण तो यह है कि इसमें भिलामे के बराबर गरमी और उग्रता नहीं होती। भिलामे को व्यवहार करते समय जो भय रहता

है वह भय इसमें नहीं रहता। इसका उपयोग बालक और नाजुक प्रकृति की स्त्रियाँ भी कर सकती हैं। दूसरा गुण इसमें यह है कि इसमें मिठास रहता है और यह मनुष्य की शक्ति को बढ़ाता है और अनेक प्रकार के वायु रोग और प्रदर रोग में बहुत फायदा पहुंचाता है। इन फलों का पाक बनाया जाता है। यह पाक वायु के रोग काम शक्ति की कमजोरी तथा दूसरे रोगों में भी फायदा करता है। इस पाक को बनाने की विधि इस प्रकार है।

मिलामें के पके हुये फलों को लेकर उन में से मिलामों को अलग कर देना चाहिये। फिर उन फलों के दो २ चार २ टुकड़े करके छाया में सुखा लेना चाहिये। फिर उनको धूप में सुखा कर पीस कर चलनी में चाल लेने चाहिये। फिर चने का आटा या बेसन १ सेर लेकर उसमें पाव भर घी का मोण डाल कर घी में सेक लेना चाहिये। जब तीन चौथाई सिक जाय तब उसमें मिलामें के फल का चूर्ण पाव भर मिला देना चाहिये। जब वह पूरा सिक जाय तब उस में भग का चूर्ण ३ माशे, काली मिरच का चूर्ण आधा तोला, इलायची का चूर्ण आधा तोला, बादाम की मगज का चूर्ण पाव भर मिला देना चाहिये इसके पश्चात् उसको नीचे उतार कर तीन तारी शक्कर की चाशनी मिला देना चाहिये और पांच २ तोले से लेकर दस २ तोले के लड्डू बना लेना चाहिये। इन लड्डुओं में से प्रति दिन एक २ लड्डू प्रातःकाल खाना चाहिये। इस पाक को खाते समय किसी विशेष प्रकार के परहेज की आवश्यकता नहीं होती।

भ्रमर छल्ली (भोलन)

नाम—

संस्कृत—भ्रमर छल्लिका, भ्रमरा, मृग मूलिका, भृगाव्हा, छालि, उग्र गधा। हिन्दी—भ्रमर छालि, वदारू, बौरंगा, मेलन, भामिनि, भौलन, भुर कुल, घौली, कुकुर कट्ट, फलदु इत्यादि। बम्बई—काला कद्दू, काला करवा। मध्यप्रान्त—बोहर, पोतुर। मराठी—भवर छाल, मोरसाल, भ्रमर सालि, भुरसाल, दोन्द्र। पंजाब—बरथू, माना विना, थाब, भुर कुर। गुजराती—भ्रमर सालया, भ्रमर छाल, डोंड्रों। देहरादून—भौलन। दक्षिण—जगली अनार। तामील—विलारी। तेलगू—बदारू। लेटिन—Hymenodictyon Excelsums (हेमिनोडिक्टोन एक्सेलसम)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। इसकी ऊंचाई ३० फुट से लेकर ५० फुट तक होती है और इसके पिंड की गोलाई ६ से लेकर ८ फुट तक होती है। अवध और सयुक्त देश में इसकी लम्बाई और गोलाई बहुत अधिक होती है इसकी छाल भूरे रङ्ग की होती है। इसके पत्ते ६ से लेकर १२ इञ्च तक लवे डण्ठल की तरफ से गोल और दूसरी तरफ से कुछ लम्बे होते हैं। इसके फूल गुच्छों में लगते हैं। ये कुछ हरापन लिये हुये सफेद रंग के और सुगध युक्त होते हैं। इसके बीज १० मिलिमीटर लम्बे और ३॥ मिलिमीटर चौडे होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत से इसकी छाल गरम, कड़वी और तीक्ष्ण होती है। यह रुचि और भूख को बढ़ाती है। गले के रोगों को दूर करती है और हर प्रकार की गठानों को अच्छा करती है।

इसकी अन्तर छाल कड़वी और संकोचक होती है। इसके सब गुण धर्म शिनकोना की छाल के समान होते हैं। शिनकोना की छाल के बदले ज्वर को दूर करने के लिये इसका उपयोग किया जा सकता है। इसका स्तम्भक धर्म शिनकोना की छाल की अपेक्षा अधिक जोरदार होता है।

इण्डोचायना में इसकी लकड़ी का चूर्ण दाद और विसर्पिका पर लगाने के काम में लिया जाता है। इसकी छाल को औटाकर पिलाने से तिजारी और दूसरे पार्यायिक ज्वर मिटते हैं। गले के रोगों के लिये यह लाभदायक है।

——•——

भिंडी

नाम—

संस्कृत—अभ्रपत्रक, भेंडा, भिंडा, भिंडतिका, चतुपुंडा चतुष्पदा, दारिवका, गंधमूला, करपर्णा, क्षेत्र सम्भव, पिच्छिला, सुषका, टिंडिशा, वृत्तबीजा, इत्यादि। हिन्दी—भिंडी, कटवंडह, रामतुरई, रानतुरी गुजराती—भिंड, भिंडा। बङ्गाल—रामतोरई, ढेरस, वेनरस। बम्बई—भेंडा, चेंडी। दक्षिण—भेंडी। मराठी—भेंडा। पंजाब—भिंडी, रामतुराई, भिंडातोरी। तामील—वेंडाइ, वेंडी। तेलगू—बेंडा। उर्दू—भेंडा। फारसी—बामिया। अंग्रेजी—Lady's Finger (लेडीज फिंगर)। लेटिन—Hibiscus Esculentus (हिबिस्कस एस्क्यूलेंटस)

वर्णन—

भिंडी का शाग सारे भारतवर्ष में सब दूर प्रसिद्ध है। इसलिये इसके विशेष विवेचन की आवश्यकता नहीं।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से भिंडी चिकनी, लुआबदार, स्वादिष्ट, रुचिकारक पौष्टिक, संकोचक, कामोद्दीपक, कफ और वात को पैदा करने वाली, कठिनाई से हजम होने वाली और खांसी, मंदाग्नि, वात और पीनस रोग में हानिकारक होती है। ताजी और कोमल भिंडी उत्तम स्नेहन और मूत्रल होती है।

भिंडी का काढा मिश्री के साथ देने से मूत्रकृच्छ्र, मूत्रावरोध, पथरी और सुजाक में लाभ होता है। पुराने आमातिसार में इसकी शाग लाभदायक होती है। इसके कच्चे बीज, कोप का काढा स्नेहन, शान्तिदायक और मूत्रल पदार्थ की तरह जुकाम सम्बन्धी विकृति, पेशाब की जलन और सुजाक में दिया जाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से भिंडी लुआबदार, मीठी, ठण्डी अग्निवर्द्धक, कामोद्दीपक, खून बढ़ाने वाली, पित्त विकार को नष्ट करने वाली, सुजाक और अनैच्छिक वीर्य श्राव को बन्द करने वाली तथा पथरी और अतिसार में लाभ पहुंचाने वाली होती है। यह कब्जियत को पैदा करती है।

उपयोग—

मूत्र कृच्छ्र—भिंडी और उसके बीजों का पेय निकाल कर मिश्री मिलाकर पीने से मूत्रकृच्छ्र की दाह मिटती है।

मूत्र और वीर्य की दाह—मूत्र और वीर्य सम्बन्धी अंगों की दाह मिटाने के लिये भिंडी और उसके बीजों का शरबत बहुत उपयोगी है।

प्रमेह—भिंडी की सूखी जड़ के चूर्ण में मिश्री मिलाकर खाने से प्रमेह मिटता है। कच्ची भिंडी के चूर्ण में मिश्री मिलाकर दूध के साथ फक्की लेने से भी प्रमेह मिटता है।

पुरुषार्थ वृद्धि—भिंडी की जड़ का पाक बनाकर खाने से पुरुषार्थ वृद्धि होती है,

——:o:——

भिल्लर

नाम—

हिन्दी—भिल्लर, इरुम, पनियाला, पानकेन। बम्बई—बोक। नेपाल—कैंजल। गढवाल—केन कोटसैमला। आसाम—युरियाना। इङ्गलिश—Vinagar Wood (व्हिनेगर वुड)। तामील—मदागिरवेम्बु, टोंडी। तेलगू—नालूपूमुष्टी। लेटिन—Bischofia Javanica (बिसचोफिया जवनिका)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जाति का हमेशा हरा रहने वाला वृक्ष होता है। इसकी छाल गहरी, भूरी और मुलायम होती है। इसके पत्ते एक के बाद एक लगते हैं। इसके फूल बहुत छोटे होते हैं। इसके फल भूरे तथा काले रङ्ग के और मुलायम होते हैं। हर एक फल में ३-४ बीज होते हैं जो चिकने और चमकदार होते हैं। यह वनस्पति हिमालय के जङ्गलों में तथा छोटा नागपुर, आसाम, बरमा और चिटगांव में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

आसाम में इसके पत्तों का रस वेदना पूर्ण व्रणों को मिटाने वाला होता है।

——:o:——

भींत गलोड़ी

नाम—

गुजराती—भींतगलोड़ी, कानोटी। कच्छी—भितवल, भितचट्टी। अंग्रेजी—Toadflax।

लेटिन—Linaria Ramosissima (लिनेरिया रेमोसिसिमा ।

वर्णन—

इसके पौधे लताओं की तरह दीवालों पर तथा नदी किनारे उगते हैं। इसकी जड़ दीवाल के अन्दर रहती है और उससे बहुत सी पतली २ शाखाए निकल कर दीवाल के अन्दर फैल जाती है। इसके पत्ते छिरेटे के पत्ते की तरह होते हैं। इसके फूल पीले और फल छोटे २ होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

वॉट के मतानुसार यह वनस्पति मधुप्रमेह के ऊपर काम में ली जाती है और इसके पत्तों को पीसकर फोड़े फु सियों पर बांधते हैं।

मुरे के मतानुसार मधुप्रमेह के लिये इस वनस्पति की बहुत प्रशसा है।

——:o:——

भुंइगली

नाम—

सस्कृत—वालुका। मराठी—भु इगली। गुजराती—भोंयगड़ी। तामील—चेप्पुनिरजी। तेलगू—चेरागेबुसु। लेटिन—Indigofera Enneaphylla (इ डिगोफेरा इनेफिला)।

वर्णन—

इसके पौधे बरसात में बहुत पैदा होते हैं। इस पौधे की ऊँचाई आधे से लेकर १॥ फीट तक होती है। इसके पत्ते सरपखे के पत्तों की तरह होते हैं। इसके फूल लाल रङ्ग के सुन्दर, पतग के आकार के और फलियां छोटी होती हैं। हर एक फली में दो २ बीज रहते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके बीज बहुत पौष्टिक माने जाते हैं। अकाल के समय गरीब लोग इन बीजों को खाते हैं। इसके पौधे का रस मूत्रल, रक्त शोधक और चिर गुणकारी पौष्टिक वस्तु की तरह काम में लिया जाता है।

इसके पौधे का रस रक्तातिसार नाशक, धातु परिवर्त्तक और मूत्रल वस्तु की तरह उपयोग में लिया जाता है। मैथुन शक्ति की कमजोरी में यह धातु परिवर्तक औषधि की तरह काम में लिया जाता है। कुष्ट रोग में भी इसका उपयोग होता है।

——:o:——

भुंइ आंवला

नाम—

संस्कृत—भूम्याम्मली, शिवा, ताली, सूक्ष्मफला, भूम्यामलकी इत्यादि। हिन्दी—भुइ आंवला, भद्र आंवला, पातल आंवला, जरामला। बगाल—भुइ आंवला। बम्बई—भु ई आंवला। गुजराती—

भोंय आवड़ी। मराठी—भुंइ आंवला। तामील—कीलकायनेल्ली। तेलगू—नेलनेल्ली। उर्दू—भुइं आंवला। लेटिन—Phyllanthus Niruri (फिलेंथस निरूरी)।

वर्णन—

यह क्षुद्र वनस्पति बरसात के दिनों में सब दूर पैदा होती है। इसके पत्ते बहुत छोटे, आंवलों के पत्तों के समान तथा लम्ब गोल और सँकडे होते हैं। पत्ते के पिछले भाग में पीले रङ्ग के छोटे २ फल आते हैं। उनका स्वाद आंवले के समान होता है। बरसात के आखिर में यह वनस्पति सूख जाती है। इसलिये इसको कार्तिक मास में संग्रह करके सुखाकर रख लेना चाहिये।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत से भुईं आवला कसैला, खट्टा, शीतल, पित्त और प्रमेह को नष्ट करने वाला, मूत्रकी रुकावट को मिटाने वाला और दाह को शान्त करने वाला होता है।

भाव प्रकाश के मतानुसार भुइ आंवला, वात कारक, कडवा, कसैला, मधुर शीतल तथा प्यास खांसी, रक्त पित्त, कफ, पांडु रोग और क्षत को नष्ट करने वाला होता है।

शोढल के मतानुसार भुंइ आंवला विष नाशक और पुत्र दायक होता है।

गणनिघट्ठ के मतानुसार भुंइ आँवला शीतल, कड़वा, कसैला, मधुर, हलका, रुचिकारक तथा पाँडुरोग, रक्तपित्त, कफ, कोढ़, विप, श्वास, तृषा, दाह, हिचकी, खाँसी, क्षत और क्षय का नाश करता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह वनस्पति अग्नि वर्धक और फोडे फुन्सी तथा आमातिसार में बहुत लाभदायक होती है। इसका फल कड़वा होता है और यह क्षय जन्म व्रण, चोट, रगड़, खाज और दाद में उपयोगी है।

डॉक्टर देसाई के मतानुसार भुइ आंवली दीपन, पाचन, मूत्रल, दाहशामक, व्रणरोपक, शोथनाशक और पार्यायिक ज्वरों को रोकने वाली होती है। इसकी कोमल डालियों की फांट बनाकर आमातिसार में देते हैं। कामला रोग में इसकी १ तोला जड़ को पीस कर सवेरे शाम दूध के साथ दी जाती है। इसके पचांग का क्वाथ मलेरिया ज्वर में दिया जाता है इस क्वाथ को देने से दस्त साफ होता है। पसीना छूटता है, नींद आती है, यकृत और तिल्ली की वृद्धि कम होती है और धीरे २ ज्वर का आना बन्द हो जाता है। भुंइ आंवले से पेशाब की तादाद बढ़ती है और उसकी जलन कम होती है। इस कारण इसको सुजाक में भी देते हैं। भुइ आंवले का २ तोला स्वरस घी के अन्दर मिला कर पीले रंग के प्रमेह में सवेरे शाम दिया जाता है। जल शोथ में इसके पचांग की फांट बना कर देते हैं। अत्यार्तव में इसकी जड़ों को पीस कर उनका निर्यास बना कर देते हैं। स्तनशोथ में इसके पचांग का लेप किया जाता है।

सक्षेप में मूत्र पिंड के रोगों पर तथा मूत्र पिंड से लेकर मूत्राशय के सब भागों तक इस वनस्पति का बहुत असर होता है। सूजन पर भी गुण कारक है। नवीन सुजाक के ऊपर इस वनस्पति का रस

चम्मच की मात्रा में जीरे और शक्कर के साथ देने से पेशाब की जलन शांत होती है। कामला और पित्त विकार पर भी इसका उपयोग होता है।

गोल्ड कास्ट में इसके पत्तों को पीस कर सुजाक की बीमारी के उपचार में देते हैं। इस वनस्पति के दूसरे अंग कब्जियत को दूर करने के लिये उपयोग में लिये जाते हैं। इसके पत्तों को पानी में उबाल कर यह पानी पेट की पीड़ा को दूर करने के लिये पिलाया जाता है। इस वृक्ष का प्रधान उपयोग आँतों के दर्द से होने वाले आमातिसार में किया जाता है।

लाग्यूनियन में यह वृक्ष जलोदर, आमातिसार, रक्तातिसार, सुजाक और मूत्रकृच्छ इत्यादि रोगों में काम में लिया जाता है।

इसके पत्ते अग्नि वर्धक होते हैं। इस वनस्पति का दूधिया रस कष्ट साध्य और वेदना युक्त अर्बुद पर लगाने के काम में लिया जाता है। इसके पत्तों का पुल्टिस यदि नमक मिलाकर लगाया जाय तो गीली खुजली को दुरुस्त करता है और बिना नमक मिलाये यह रगढ पर लगाया जाता है।

कोकण में चांवल के पानी के साथ इसकी जड़ को पीस कर अत्याधिक रजः श्राव को रोकने के लिये देते हैं।

ए. जे. अमादेव ने फरमास्यूट जरनल में सन् १८८८ के अप्रेल मास के अंक में लिखा था कि इसकी जड़ और पत्तों का काढ़ा बहुत कड़वा होता है और पोर्टोरीको के निवासी इस पार्यायिक ज्वरों के उपचार में काम में लेते हैं। मैंने भी इसका कई स्थानों में उपयोग किया है और मैं कह सकता हूं कि पार्यायिक ज्वरों में सामयिक आक्रमण के समय इस औषधि की उत्तमता कई बार सिद्ध हो चुकी है। मैं स्वयं इस सारे पौधे से टिंचर तैयार करता था और उसी को प्रातःकाल २ ड्राम की मात्रा में देता था। कभी २ इसको दुबारा भी दे दिया करता था। इसको दुबारा देने से आँतों के ऊपर इसका कुछ हलका विरेचक असर अवश्य हुआ। मगर इसका लाभ बहुत प्रशंसा के काबिल रहा। यह दीर्घ कालस्थायी पार्यायिक ज्वरों को जिनमें यकृत और तिल्ली की बाधा भी होती है बहुत लाभ पहुंचाता है। इसकी जड़ और पत्तों का शीत निर्यास भी एक उत्तम कटु पौष्टिक पदार्थ है। यदि इसको ठंडी हालत में बार २ लिया जाय तो यह मूत्रल औषधि का काम भी करता है। इसकी ताजा जड़ पीलिया की एक उत्तम दवा मानी जाती है।

रायट्स के मतानुसार इसकी ताजा जड़ पत्ते और डंखलों का काढा सर्प विष के उपचार में अतः प्रयोग में काम में लिया जाता है मगर फेस और महस्कर के मतानुसार यह सर्प विष के उपचार में निरुपयोगी है।

कर्नल चोपरा के मतानुसार शुद्ध आंवला जीर्ण आमातिसार, जलोदर, अत्याधिक रजः श्राव और घावों के ऊपर काम में लिया जाता है। यह स्वाद में कड़वा होता है और इसमें फायलेंथिन नामक द्रव्य पाया जाता है।

उपयोग—

क्षत—इसका दूधिया रस क्षय घाव पर लगाने से वह जल्दी भर जाता है।

खुजली—इसके पत्तों के पुल्टिस में नमक मिला कर लगाने से खुजली मिटती है।

रगड—इसके पत्तों को पीस कर रगड़ पर लगाने से पीड़ा मिट जाती है।

कामला— इसकी १। तोला ताजी जड को दूध के साथ पीस छान कर दिन में दो बार पिलाने से कामला रोग मिटता है।

पुरानी संग्रहणी—इसकी कोमल कोपलों को मेथी के बीजों के साथ देने से पुरानी संग्रहणी मिटती है।

जलोदर—इसके पचांग का क्वाथ बना कर पिलाने से मूत्र वृद्धि होकर जलोदर मिटता है।

मासिक धर्म की अधिकता—इसकी जड़ को चावलों के मांड के साथ देने से मासिक धर्म में अधिक रुधिर का निकलना बन्द हो जाता है।

पार्यायिक ज्वर—इसके कोमल पत्ते और काली मिर्चों को पीस कर उनकी जायफल के समान गोली बना कर देने से मलेरिया ज्वर और फिर २ कर आने वाला ज्वर छूट जाता है।

मुखपाक—इसके पत्तों का हिम बना कर उससे कुल्ले करने से मुख पाक मिटता है।

रक्त प्रदर— इसकी जड़ के चूर्ण को चांवलों के पानी के साथ २।३ दिन तक देने से रक्त प्रदर मिटता है।

मूत्र सम्बन्धी रोग—मिश्री के साथ इसके पचाग का क्वाथ पिलाने से मूत्रकृच्छ्र और सब प्रकार के मूत्र रोग मिटते हैं। *मात्रा*—इसके पत्तों की साधारण मात्रा ३॥ माशे तक है।

भुंई आंवला लाल

नाम—

हिन्दी—लालभुंइ आंवला, हजारमनी। **गुजराती**—खरसट, भुइ आंवली। **मराठी**—लाल भुइज आंवली। **पोरबंदर**— कढारी आंवली। **लेटिन**—Phyllanthus Urinaria (फिलेंथस यूरिनेरिया)।

वर्णन—

इसके क्षुप भुइ आंवले से मिलते हुए होते हैं ये कुछ ललाई लिये हुए होते हैं। इसके फूल के डखल नहीं होता है और फल खड़बचडे होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके गुण धर्म भुंइ आंवले के समान ही होते हैं। इसके सूखे पौधे का काढा चाय के चम्मच की मात्रा में कामला रोग को दूर करने के लिये दिया जाता है।

इसका पौधा जलोदर के रोग में मूत्रल औषधि की तरह बहुत उपयोग में लिया जाता है। सुजाक और मूत्र सम्बन्धी दूसरी बीमारियों में भी इसका बहुत उपयोग होता है।

छोटा नागपुर में इसकी जड़ छोटे बच्चों को नींद लाने के लिये दी जाती है। लारि यूनियन में यह पौधा मूत्रल, पसीना लाने वाला, शोधक और ऋतुश्राव नियामक माना जाता है। इसका निर्यास रक्तातिसार और मूत्राशय प्रदाह को दूर करने के लिये दिया जाता है।

कम्बोडिया में इसका पौधा कटु पौष्टिक, संकोचक और ज्वर निवारक औषधि की तरह उपयोग में लिया जाता है।

——:o:——

भुंइ आंवला बड़ा

नाम—

गुजराती—मोटी भोंय आवली। मराठी—मोटी भुइ आवली। काठियावाड—मोटी भोंई आंवरी। लेटिन—Phyllanthus Simplex (फिलेंथस सिंप्लेक्स)।

वर्णन—

इसके पौधे भुंइ आंवली के पौधे से कुछ बड़े होते हैं। इसकी डालियाँ कुछ पतली सी और दबी हुई होती हैं। इसके फूल और फल भुइ आवली के समान ही होते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

इसके ताजा पत्ते, फूल और फल जीरा और मिश्री इन तीनों को समान भाग लेकर पीसकर एक चाय के चम्मच की मात्रा में दिन में २ बार सुजाक को मिटाने के लिये दिया जाता है। इसके ताजा पत्तों को कुचलकर उनको पानी में मिलाकर बच्चों की खुजली को धोने के काम में लिया जाता है। छोटे नागपुर में इसकी जड़ को पीसकर उसका लेप स्तनों पर होने वाले फोड़े पर किया जाता है।

——:o:——

भुंइ चंपा

नाम—

संस्कृत—भूचंपक, भूमिचंपा। हिन्दी—भुइचंपा। बंगाल—भुइचंपा। गुजराती—भुइचांपो। मराठी - भुइचंपा। काठियावाड़—भूचंपक। कोंकण—भूचंपो। तेलगू—कोंडाकारवा। लेटिन—Kaempferia Rotunda (कैंफेरिया रोटुंडा)।

वर्णन—

यह एक सुगंधित फूलों का एक क्षुप होता है। बाग बगीचों में कई स्थानों पर यह लगाया जाता है। इसके पत्ते बड़े, हरे और कुछ बैंगनी रंग के होते हैं। इसकी जड़ के बीच में गोल २ गठानें होती हैं। उन गठानों में से बहुत सी मांसल और मोटी जड़ें फूटकर उनके अण्डे के समान कंद बन जाते हैं। इनका स्वाद कड़वा होता है। औषधि प्रयोग में इसका कंद काम आता है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत से यह वनस्पति शोथ नाशक और व्रण रोपक होती है। इसके कंद का पुल्टिस बनाकर फोड़ों को पकाने के लिये उन पर बांधा जाता है।

इसके सारे पौधे को पीसकर उसका लेप बनाकर ताजे जख्मों पर बांधने से चमत्कारिक रूप से वे जखम भर जाते हैं इसका भीतरी प्रयोग करने से यह हर प्रकार के रक्त के जमाव को बिखेर देती हैं। अथवा शरीर के अन्दर एकत्रित क्लेद रस को भी दूर कर देती है।

इसकी जड़ सर्वांगीण शोथ में लाभदायक होती है। रीवा कान्ता जिले के गजेटियर में बतलाया गया था कि इसकी जड़ें अग्निवर्धक होती हैं और सूजन पर लेप करने के काम में ली जाती है। सारे भारतवर्ष में यह विश्वास किया जाता है कि इसका कंद सूजन को दूर करने में बहुत उपयोगी है।

डाक्टर देसाई के मतानुसार सूजन तथा रक्तस्राव पर इसके कंद या गठानों का लेप किया जाता है। गलगंड पर इसका लेप करने से फायदा होता है। इसके पंचांग से सिद्ध किया हुआ तेल जखम

भरने के काम में लिया जाता है। इसके कंद को थोडी मात्रा में पेट में देने से यह रक्त के जमाव को बिखेर देता है। भुंइचंपा, वछनाग और कुचले के बीजों से तैयार किया हुआ लेप गलगंड, गडमाला और हर प्रकार की नवीन सूजन पर किया जाता है। मुगलाइ एरड के बीजों का तेल और भुइचंपे के कंद से सिद्ध किया हुआ तिल का तेल हर प्रकार के जखम, फोडे और भगदर के काम में लिया जाता है।

——:o:——

भुइकंद (पहाड़ी कंद)

नाम—

हिन्दी—भुइकंद, पहाड़ी कद। बम्बई—भुइकंद, लहानरान कंद, नानी जगली कद, पहाड़ी कंद बंगाल—सुफेदी खस। लेटिन—Scilla Indica (सिल्ला इंडिका)।

वर्णन—

यह वनस्पति कोली कदे की ही जाति की होती है। इसका पौधा भी कोली कदे की तरह होता है। इसका कद कोली कदे से कुछ छोटा होता है। यह वनस्पति बिहार, मध्यभारत, छोटा नागपुर और पश्चिमी भारत में पैदा होती है।

गुण दोष और प्रभाव—

इस वनस्पति के कद में प्रायः वे तत्त्व सब मौजूद रहते हैं जो कोली कदे के अन्दर पाये जाते हैं। चोपरा और देने सन १९२९ में इस वनस्पति का परीक्षण करके यह सिद्ध किया कि ब्रिटिश फरमाकोपिया में दर्ज अर्जीनिया स्किला (कोलीकदा) और अमेरिकन फरमाकोपिया में दर्ज अर्जीनिया मार्टिमा (कोली कंदा) से यह वनस्पति किसी कदर कम नहीं है।

कर्नल चोपरा लिखते हैं कि—

अर्जीनिया स्किला जो कि ब्रिटिश फरमाकोपिया में दर्ज है और अर्जीनिया मार्टिमा जो कि अमेरिकन फरमाकोपिया में दर्ज है। यह कोली कदे की दोनों जातियां भूमध्यसागर के तटवर्ती प्रान्तों में पैदा होती है और इनका बहुत बड़ी मात्रा में औषधियों के सम्बन्ध में उपयोग होता है। इसकी गठानें और उनसे तैय्यार की हुई औषधियां भूमध्यसागर के तटवर्ती प्रदेशों से भारतवर्ष में आती हैं और बहुत ऊँची कीमत में बिकती हैं। भारतवर्ष में भी इसकी दो जातियाँ बहुतायत से पैदा होती हैं जिनमें इग्लैंड और अमेरिका में पैदा होने वाली इन दोनों जातियों के समान ही तत्त्व पाये जाते हैं। इनमें से पहिली जाति स्किला इंडिका है जिसको हिन्दी में भूमिकद या पहाड़ी कंद कहते हैं। यह जाति समुद्र के किनारे पर तथा दक्षिण पेनिन्शुला में कोकण से नागपुर तक और पजाब में पैदा होती है। इसका कद कुछ सफेदी लिये हुए भूरे रंग का परतदार और जायफल के आकार का होता है। यह बहुत मुलामय होता है। इसका आकार गोल और कभी २ साइड से दबा हुआ रहता है।

इसकी दूसरी जाति अर्जीनिया इण्डिका रेती की मिट्टी में सारे भारतवर्ष के अन्दर और विशेष कर समुद्र के किनारे पैदा होती है पजाब के साल्टरेंज में तथा और भी सूखे पहाड़ों पर भी यह वनस्पति पाई जाती है। इसका आकार नीबू के बराबर और झिल्लीदार होता है। ये दोनों जातियां मिले हुए रूप से भारतीय बाजारों में बिकती है। इसका पूरा कंद बिना कटी हुई हालत में प्रत्येक साधारण औषधि विक्रेता की दूकान पर मिल जाता है। मगर इसको वडे पैमाने पर फांकों के रूप में तैयार करके चिटगाँव, बम्बई और जौनपुर में बेचा जाता है। इन दोनों जातियों का समान असर होता है। अन्तर इतना ही

होता है कि कोलीकंदे के ऊपर झिल्ली रहती है और भूमिकंद में प्याज के समान ऊपर से नीचे तक परत रहते हैं। इन दोनों जातियों के कंद बाहर से मंगाई हुई जातियों के कंद से कुछ छोटे होते हैं। मगर उनके समान ही ये कड़वे और वमनोत्पादक रहते हैं। इनको बाजार के लिये तैयार करते समय इस बात का खास ध्यान रखने की जरूरत है। कि इनकी फांको को अच्छी तरह से सुखा लिया जाय। नहीं तो बाहर निकालने के टाइम में ये खराब हो जाती हैं और अपनी सब शक्तियों को खो बैठती हैं। इस वनस्पति के कफ निस्सारक, हृदयोत्तेजक और मूत्रल तत्वों के सम्बन्ध में बहुत दिनों से रसायन शास्त्रियों का ध्यान आकर्षित हो रहा है। यद्यपि यह एक उपयोगी और प्रभावशाली औषधि है मगर पाकस्थली की आँतों के समूह पर इसका दाहजनक असर होने की वजह से हृदयोत्तेजन के लिये इसको अधिक मात्रा में देना सम्भव नहीं हो सकता। कुछ वर्षों से इस बात का प्रयत्न किया जा रहा है कि इसके हृदयोत्तेजक तत्वों को इसके दाह जनक तत्वों से किसी प्रकार अलग किया जा सकता है या नहीं। इस प्रयत्न में जांच करते हुए इसमें दो तत्व अलग २ [illegible]ये गये।

(१) एक स्पष्ट, शुद्ध, बिल्लौर[illegible] समान पारदर्शी ग्लुकोसाइड जिसका नाम स्किलेरिन A (Scillaren A) रक्खा गया।

(२) एक बिना किसी विशेष[illegible]ति का दो ग्लुकोसाइडस का संयुक्त उपादान प्राप्त हुआ जिसका नाम स्किलेरिन B. रक्खा ग[illegible] [illegible]का पिछला तत्व बहुत आसानी से पानी में घुल जाता है जब कि पहला नहीं घुलता। इन दोनों प्र[illegible] तत्वों का परीक्षण करने पर मालूम हुआ कि स्केलेरिन की क्रियाएं स्ट्रोफेंथिन के सदृश होती हैं[illegible] [illegible]ह कहा जाता था कि इसके पिछले द्रव्य में यह कमी है कि वह मुँह के द्वारा नहीं खाया जा सक[illegible] [illegible]ने सन् १९२७ में बतलाया कि स्किलेरिन हार्ट के ऊपर डिजिटेलिस के समान ही क्रिया करता है। [illegible] अन्न प्रणाली के ऊपर इसका दाहक असर बहुत कम और धीरे २ होता है और पाचन क्रिया प्रणाली के द्वारा उसका शोषण हो जाता है। स्टेहल (Sthele) रोफ और ड्रेअर ने सन १९३१ में बतलाया कि स्किलेरिन बी पशुओं के अन्दर रक्त वाहिनियों पर संकोचक असर डालकर उनके ब्लडप्रेशर (रक्त के दबाव) को बढाता है। यह हृदय कोष का विस्तार करके उसके ठोकों को बढाता है। जिससे हृदय को शक्ति मिलती है।

कई वर्षो से गव्हर्नमेंट मेडिकल स्टोअर बम्बई के डिपो में इस वनस्पति की विदेशी जातियों के स्थान पर भारतीय जातियों का गेले निकलस बनाने के लिये उपयोग किया गया और उनका परिणाम रोगियों के लिये बहुत ही संतोषजनक रहा। इसकी भारतीय जाति सन १९१४ में ब्रिटिश फरमाकोपिया में सम्मिलित की गई थी। देशी कोली कंदा या अर्जीनिया मार्टिमा के मुकाबले में बहुत सस्ता पड़ता है। अगर इसकी खेती और उसको संग्रह करने की पद्धति उन्नत तरीके से और बड़े स्केल पर की जाय। सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि यूरोपियन बाजारों में भी यह यूरोपियन जातियों की बहुत सफलता के साथ स्पर्धा कर सकता है। कलकत्ते के अन्दर दोनों देशी जातियों (कोली कंद और भुइ कंद) के मिश्रण से टिंक्चर्स तैयार किये जाते हैं और इस औषधि का बड़ा व्यापार विकसित हो गया है। इन वनस्पतियों के तुलनात्मक अध्ययन से और इनमें पाये जाने वाले रासायनिक तत्वों की तुलना करने से यह निश्चित रूप से [illegible] सकता है [illegible] बाहर से आने वाली इस वनस्पति की जातियों से भारत में पैदा होने वाली जातियाँ किसी भी प्रकार कम नहीं हैं।